श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी विशेषांक

ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

भादों-आश्विन, संवत् नानकशाही ५४३
वर्ष ५ अंक १ सितंबर 2011

चंदा	
सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६

फोन: 0183-2553956-60, फैक्स: 0183-2553919

एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग **303** संपादकीय विभाग **304**
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला ॥

उहु गुरु गोबिंद होइ प्रगटिओ दसवां अवतारा।
जिन अलख अपार निरंजना जपिओ करतारा।
निज पंथ चलाइओ खालसा धरि तेज करारा।
सिर केस धारि गहि खड़ग को सभ दुसट पछारा।
सील जत की कछ पहरि पकड़ो हथिआरा।
सच फते बुलाई गुरू की जीतिओ रण भारा।
सभ दैत अरिनि को घेर करि कीचै प्रहारा।
तब सहिजे प्रगटिओ जगत मै गुरु जाप अपारा।
इउं उपजे सिंघ भुजंगीए नील अंबर धारा।
तुरक दुसट सभि छै कीए हरि नाम उचारा।
तिन आगै कोइ न ठहिरिओ भागे सिरदारा।
जह राजे साह अमीरड़े होए सभ छारा।
फिर सुन करि ऐसी धमक कउ कांपै गिरि भारा।
तब सभ धरती हलचल भई छडे घर बारा।
इउं ऐसे दुंद कलेस महि खपिओ संसारा।
तिहि बिनु सतिगुर कोई है नही भै काटनहारा।
गहि ऐसे खड़ग दिखाईऐ को सकै न झेला।
वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला ॥१५॥ *(वार ४१)*

दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज के समकालीन कवि भाई गुरदास सिंघ जी इस पउड़ी में गुरु जी के अवतार धारण करने, उनके द्वारा खालसा पंथ की साजना और गुरु जी की अगुआई में उनके द्वारा साजे-निवाजे इस निर्मल पंथ के अद्वितीय कारनामों का वर्णन करते हुए गुरु जी के और उनके साजे खालसा की परस्पर अभेदता प्रकट करते हुए भाव-भीने रूप में गुरु-यश गायन करते हैं। यह स्मरण रहे कि इनको 'भाई गुरदास जी द्वितीय' और 'भाई गुरदास जी सानी' आदि नामों से भी जाना जाता है, चूंकि ये तीसरे, चौथे, पांचवें, छठे पातशाहों के समकालीन गुरु-घर के अनिन प्रीतिवान भाई गुरदास जी (भल्ला) से अलग हैं। फिर भी इनकी रचना प्राय: भाई गुरदास जी (भल्ला) द्वारा रचित चालीस वारों के साथ ही इकतालीसवीं वार के रूप में शामिल की जाती है।

भाई साहिब कथन करते हैं कि ऐसे श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज दशम गुरु के रूप में प्रकट हुए हैं जिन्होंने न जान सकने वाले असीम, माया से ऊपर कर्ता पुरख परमात्मा का

नाम-सिमरन किया तथा कराया है। उन्होंने ऐसा खालसा पंथ साज दिया जिसने कि तीक्ष्ण तेज-प्रताप को धारण किया है। गुरु जी के खालसा ने केश धारण किये और हाथ में कृपाण पकड़ कर सभी दुष्टों को पराजित कर दिया। यहां माननीय वार-कर्त्ता का संकेत मुगल शासकों तथा पहाड़ी राजाओं के कूड़े गठबंधन की ओर है। सतिगुरु जी के आदेश पर खालसा जी ने सुशीलता तथा जत-सत रूपी कछहरा पहना और शस्त्र हाथ में पकड़ लिये अर्थात् कूड़-ताकतों के साथ पूर्णतः शुद्ध आचरण रखते हुए शस्त्रबद्ध युद्ध तथा संघर्ष किया। खालसा जी ने सत्य की विजय यकीनी बनाई जब उसने गुरु की फतह गजाई। इस प्रकार रण-क्षेत्र विजय किया जो बहुत भारी था। सभी दैत्य रूप बैरी-दोखियों का घेराव करके उन पर आक्रमण किया। ऐसा होने पर सहज स्वभाव ही संसार में 'गुरु-गुरु' का नाम स्मरण किया जाने लगा। गुरु के योद्धा शूरवीरों के उपजने की यही कथा-गाथा है। ये योद्धा नीले रंग के वस्त्र सजाने अथवा पहनने वाले हैं। यह इन्हीं की क्षमता के हिस्से आया कि अत्यंत बुरे तुर्कों की पराजय हुई। इसका आधारभूत कारण खालसा पंथ का परमात्मा के नाम के साथ अभेद होना है।

उनके सामने कोई ठहर न पाया। दुष्टों के अगुआ भाग गए। अमीर वजीर सब मिट्टी अथवा नाश हो गए। पराक्रमी खालसा की कदम-चाप से पर्वत कांप उठा अथवा पहाड़ी क्षेत्रों के राजा भयभीत हो गए। सारी धरती पर अथवा देश भर में उथल-पुथल हुई जिसमें घर-बार छूट गए। जन-साधारण दुखी था। उसके भय को काटने वाला उस सच्चे गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के अतिरिक्त कोई नहीं है। गुरु जी ने यूं तलवार पकड़ी और दिखाई कि उसकी झाल कोई न झेल सका। हे गुरु गोबिंद सिंघ जी! आप खूब हैं। स्वयं ही गुरु तथा स्वयं ही शिष्य हैं। ऐसे केवल आप ही हो सकते हैं, अन्य दूसरा कोई नहीं।

दशमेश पिता के जीवन-उद्देश्य को सही प्रसंग में समझने तथा इससे रचनात्मक प्रेरणा लेने के लिए यत्न करें!

श्री गुरु नानक देव जी द्वारा स्थापित सिक्ख धर्म संसार के सभी धर्मों में स्पष्ट रूप में विलक्षण है। यह पूर्णत: मानवतावादी धर्म है। यह धर्म अपने मानने वालों को तंग घेरे में बिलकुल नहीं बांधता। यह धर्म सर्वसांझीवालता के निर्मल सरोकार को सदैव सम्मुख रखता है। भारतवर्ष में स्थापित हुए इस मानवतावादी धर्म ने आरंभ से ही सबको परस्पर प्यार-मुहब्बत के साथ रह कर, निर्मल नैतिक मूल्यों को अपनाते हुए मानव-जन्म अथवा जीवन में उच्चतम रूहानी आनंद की अवस्था तक पहुंचने का मार्ग दर्शाया। जिस युग में सिक्ख धर्म का उदय हुआ उस युग में मानवतावादी स्वर का अलाप करना अथवा सर्वसांझीवालता की बात करना काफी जोखिम वाली, चुनौतियों से भरी परिस्थितियों को बुलावा देने वाली बात थी। इस धर्म के संस्थापक गुरु नानक पातशाह ने अपना सारा जीवन मुख्यत: भारत के लोगों को परस्पर प्यार-मुहब्बत बनाये रखने के लिए प्रेरणा देने में लगा दिया। भले ही बहुसंख्यक लोगों ने गुरु जी से प्यार का पाठ पढ़ा लेकिन बिगड़े धनाढ्यों तथा वक्त के बादशाहों, शासकों, प्रशासकों की ओर से सतिगुरु जी के धर्म-मार्ग में अनेकों प्रकार से कठिनाइयां भी पैदा की गईं। और तो और गुरु जी ने बाबर जैसे शक्तिशाली मुगल आक्रमणकारी को निर्दोष मानवता पर अत्याचार करने पर सख्त फटकार तक लगाई। बाबर ने अपने ढंग-तरीके से जन-कल्याण के पक्ष में बदलने का वादा भी किया।

सिक्ख धर्म का प्रसार गुरु नानक पातशाह से आरंभ होकर कुल दस गुरु साहिबान की रहनुमाई में हुआ। यह दो सदियों से भी अधिक का काल था। बाबर के समय से हमारे देश में मुगल खानदान का शासन आरंभ हुआ था। दशमेश पिता की रहनुमाई में सिक्ख धर्म का विकास की सर्वोच्च अवस्था तक पहुंचना अकाल पुरख परमात्मा की ओर से निश्चित था। यह अजीब संयोग की बात थी कि मुगल शासन इसी काल में औरंगजेब जैसे अत्यंत बेदर्द, निष्ठुर, धर्मांध बादशाह के राज्यगद्दी पर काबिज होने के कारण गिरावट की सबसे गहरी खाई में जा गिरा था। दशमेश पिता को तत्कालीन शासन के जुल्म तथा अन्याय के विरुद्ध आजीवन संघर्ष करना पड़ा। जुल्म तथा अन्याय को पूर्णत: मिटाकर जनसाधारण को सुख-चैन दिलाने के ऊंचे मानवतावादी उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही गुरु जी ने सन् १६९९ ई की वैसाखी के दिन सिक्ख पंथ में से खालसा पंथ की साजना की। गुरु जी की अगुआई में खालसा पंथ ने तत्कालीन जुल्म-अन्याय के विरुद्ध संघर्ष तीव्र तथा गहरा कर दिया। तात्कालिक राजनैतिक प्रबंध ने अपनी सारी ताकत झोंक कर खालसाई संघर्ष को प्रभावहीन करने के लिए झूठे वादों और धोखे की बदनीतियों को अपनाया। गुरु जी और उनके साजे-निवाजे खालसे को बहुत कठिनाइयां दरपेश आईं। गुरु जी और उनके खालसे का नैतिक साहस सदैव कायम रहा। चमकौर साहिब के युद्ध में दो बड़े

साहिबजादों सहित इस युद्ध में हिस्सा ले रहे उनके लगभग सभी सिंघों के शहीद होने के बावजूद भी गुरु जी के हौंसले बुलंद रहे। चमकौर साहिब के युद्ध के पश्चात मुकतसर का युद्ध गुरु जी तथा खालसे ने मुगल सेनाओं को भगा कर जीता। गुरु जी का मालवा क्षेत्र में दीना कांगड़ गांव से 'जफ़रनामा' (विजय-पत्र) लिख कर भाई दया सिंघ के हाथ दक्षिण में ठहरे हुए औरंगजेब को भेजना और उसे अपने पापों का अहसास कराना सतिगुरु जी तथा उनके खालसा पंथ की विजय का जीवंत प्रमाण माना जा सकता है। मुगल प्रबंध ने सतिगुरु जी पर जान-लेवा आक्रमण कराया। सतिगुरु जी मात्र ४२ वर्ष की जीवन-अवधि पूरी कर अकाल के देश को गमन कर गए। वे एक तो समस्त सिक्ख पंथ को सदीवी गुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब की शरण में करके इस नये-निराले पंथ की हरेक आने वाले युग में सद्उन्नति सुनिश्चित कर गए तथा दूसरा, सिक्ख पंथ की राजनैतिक अगुआई बाबा बंदा सिंघ बहादर जैसे मजबूत तथा बहादुर सिंघ को सौंप गए जिसने अत्याचारियों को अनुकूल दंड दिया तथा प्रथम खालसा राज्य को स्थापित किया। इसी आधारशिला पर बाद में सिक्ख मिसलों तथा महाराजा रणजीत सिंघ के मानवतावादी राज्य-प्रबंध का अनोखा विस्मादी आनंदमयी-झोंका देशवासियों ने लिया। यह वस्तुत: दशमेश पिता का ही करिश्मा था। यह उनके दृढ़-संकल्पी तथा पूर्णत: मानवतावादी सरोकारों का ही परिणाम था। इस पक्ष से सारे देशवासी दस गुरु साहिबान और विशेषत: दशमेश पिता के बहुत बड़े कर्जदार हैं।

आज यूं प्रतीत हो रहा है कि आज के पदार्थवादी युग में तथा अपने बहुसंख्यक होने के कारण देश के शासन-प्रशासन में अपना प्रभुत्व कायम हो जाने के कारण हमारे वर्तमान शासक-प्रशासक गुरु जी तथा उनके निर्मल खालसा पंथ के अनगिनत परोपकारों को बड़ी तीव्रता के साथ भूलते जा रहे हैं। इसका सबसे बड़ा प्रमाण नंवबर १९८४ में उस समय की सत्ताधारक पार्टी द्वारा पूर्व नियोजित निर्मम सिक्ख नरसंहार और सिक्ख स्त्रियों को बहुत बड़े स्तर पर अपमानित किये जाने के दुखदायक घटनाक्रम को लेकर देखा जा सकता है। इस शासक पार्टी के कुछ नेताओं ने देश की राजधानी दिल्ली में अपने नेतृत्व में हजारों सिक्खों का संहार कराया। हमारा तथाकथित लोकतंत्रीय सिस्टम अथवा इसकी तथाकथित निष्पक्ष न्यायपालिका आज तक किसी दोषी को दंडित नहीं कर सकी। ऊपर से देश के वर्तमान गृहमंत्री सिक्खों को नवंबर ८४ का सिक्ख कत्लेआम भूल जाने का परामर्श दे रहे हैं। यह कैसी विडंबना है? यह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी और उसके साजे-निवाजे सिक्ख पंथ के परोपकारों का कैसा सिला है? देश में एक अन्य समुदाय ऐसा भी है जो श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की महान कुर्बानी को बाहरी रूप से मान्यता देता है लेकिन वह यह प्रचार समय-समय पर बड़ी गर्मजोशी से करता है कि गुरु जी ने तो खालसे की साजना मात्र हिंदू धर्म की रक्षा हेतु की थी, अब वह उद्देश्य पूर्ण हो चुका है अथवा अब खालसा पंथ की प्रासंगिकता नहीं रही, अत: उसको हिंदू धर्म का एक हिस्सा ही बन जाना चाहिए। यह सोच अत्यंत दुखदायक है। सिक्ख पंथ अथवा खालसा पंथ को अपना बाहरी तथा अंदरूनी न्यारापन कायम रखने के लिए (जो कि बेहद अनिवार्य है) उपर्युक्त दोनों ताकतों की ओर से कई प्रचार की उलझनें खड़ी की जा रही हैं। देश के शासकों-प्रशासकों तथा अन्य गैर-सत्ताधारक लोगों को साफ मन से श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के ऊंचे तथा निर्मल जीवन-उद्देश्य को समझने एवं जानने

की आवश्यकता है, इसलिए कि वे आगे से सिक्ख पंथ के साथ बहुप्रकारी अन्याय का बर्ताव छोड़ते हुए उसकी महान शक्ति तथा क्षमता का देश-कौम को अधिकतम लाभ दिलाने में रुकावट न सिद्ध हों।

भले ही हमारा यह 'श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी विशेषांक' कुल ग्यारह विशेषांकों की अंतिम कड़ी है फिर भी इस विशेषांक का एक विशेष प्रयोजन है। देश-कौम यह सच्चाई भूल गई प्रतीत होती है कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने मात्र नौ वर्ष की आयु में अपने पिता श्री गुरु तेग बहादर साहिब को उस समय के पीड़ित हिंदू धर्म का प्रतिनिधि-मंडल बना कर आये कशमीरी पंडित की पुकार पर अपना शीश कुर्बान करने हेतु दिल्ली की ओर रवाना किया था। उस गुरु-काल में भी कुछ लोगों ने दशम गुरु जी द्वारा हक-सच की खातिर किए जा रहे संघर्ष में उलटा जालिम शासन का ही साथ दिया था और उन्हें सच की शक्ति के सामने पराजित भी होना पड़ा था। आज देश-कौम को अपने पूर्वजों की वह भूल सुधारने की जरूरत है।

देश का कुछ जनसाधारण ऐसा भी है जो गुरु जी के जीवन, उनके व्यक्तित्व, उनके महान जीवन-उद्देश्य, देश-कौम के लिए उनकी अपूर्व कुर्बानी के बारे में बहुत कम जानता है। वह लगभग अनजान है इस सच्चाई से कि उस काल में मुगल हाकिमों ने गुरु जी के छोटे साहिबजादों को बड़ी निर्दयता से शहीद कर दिया था। गुरु जी के आदरणीय माता जी भी इसी महान साके के प्रभाव से शहीदी प्राप्त कर गए थे। गुरु जी ने तो सारा परिवार ही देश-कौम के लिए न्यौछावर कर दिया था। हमको जानना होगा कि गुरु जी का किसी विशेष धर्म के साथ कोई वैर न था। इस विशेषांक में आपको कई मुसलमानों के उदाहरण मिलेंगे जिन्होंने गुरु जी का साथ दिया चाहे उनको तत्कालीन राजनैतिक निजाम में इसके लिए बहुत बड़ी कीमत तक चुकानी पड़ी। पीर बुद्धू शाह का उदाहरण अत्यंत विस्मादी है। भाई नबी खान और भाई गनी खान पठानों ने अपनी जानें जोखिम में डालकर अत्यंत कठिन हालात में गुरु जी के प्राणों की रक्षा की, इसलिए कि वे देश-कौम के कल्याण के महानतम कार्य को अंजाम दे सकें। आज यदि देश-कौम को सही अर्थों में आगे ले जाना है तो गुरु जी के मानवतावादी तथा सर्वसांझीवालता के खालसाई मिशन को समझकर इसको देश में लागू करना होगा। गुरु जी के सिक्ख भाई घनईया जी का उदाहरण भी हमें सदैव सम्मुख रखना चाहिए जिनको युद्ध-क्षेत्र में धार्मिक तथा सांप्रदायिक भेदभावों से ऊपर उठकर घायल एवं प्यासे मुगल सिपाहियों को भी जल छकाने के मुद्दे पर गुरु जी ने शाबाश दी थी और साथ ही घायलों के घावों पर मरहम लगाने का एक और निष्काम व परोपकारी कार्य भी सौंप दिया था। ऐसे अद्वितीय गुरु जी के अद्वितीय जीवन, उनके अपूर्व व्यक्तित्व तथा जीवन-उद्देश्यों को सदैव सामने रखना आज देश-कौम की प्रगति एवं विकास के लिए बहुत हितकारी हो सकता है।

संपादकीय लेख

विशेषांकों, इनके पाठकों, लेखक-लेखिकाओं के भरपूर सकारात्मक प्रतिउत्तर के लिए हार्दिक आभार

'गुरमति ज्ञान' पत्रिका प्रतिनिधि सिक्ख संस्था शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की धर्म प्रचार कमेटी द्वारा प्रकाशित की जाती एक मासिक पत्रिका है। इस पत्रिका का सिक्ख गुरु साहिबान के जीवन, उनकी मानवता को बहुआयामी देन तथा उनके द्वारा मानवता को बख्शी सर्वसांझीवालता की आधारशिला पर विकसित गुरमति विचारधारा के साथ बहुत ही गहरा संबंध है। सिक्ख धर्म सांप्रदायिक सीमाओं से कोसों दूर है। यही कारण है कि सारे संसार में सिक्ख धर्म के बारे में अधिक से अधिक जानने की तीव्र एवं व्यापक जिज्ञासा रहती है। 'गुरमति ज्ञान' पत्रिका का तो प्रकाशन ही देश के ऐसी जिज्ञासा के धारक व्यक्तियों के अनुरोध पर किया गया। दूरंदेश अनुभवियों ने दर्जनों पत्र इस सुप्रसिद्ध तथा सक्षम सिक्ख संस्था को हिंदी भाषा में पत्रिका का प्रकाशन-कार्य प्रारंभ करने के मनोभाव सहित लिखे। संस्था स्वयं भी इस दिशा में कुछ समय से प्रयत्न कर रही थी। अकाल पुरख परमात्मा की ओट तथा गुरु पातशाहों की कृपा-दृष्टि का सदका 'गुरमति ज्ञान' के पाठकों तथा लेखक-लेखिकाओं का आज एक विशाल दायरा बन चुका है। इसको हम यदि 'गुरमति ज्ञान' का परिवार कह लें तो यह कोई अतिश्योक्ति नहीं।

'गुरमति ज्ञान' के कुछ विशेषांक हमने इससे पहले भी प्रकाशित किये। उन विशेषांकों को भी हमारे प्रिय पाठकों तथा माननीय लेखक-लेखिकाओं ने सकारात्मक प्रतिउत्तर दिया। प्रकाशित विशेषांकों की उम्मीद से भी अधिक सफलता से उत्साह तथा प्रेरणा प्राप्त करते हुए हमने दस गुरु साहिबान पर विशेषांकों की एक 'श्रृंखला' प्रकाशित करने का चुनौतियों भरा निर्णय ले लिया। अकाल पुरख वाहिगुरु का तथा दस गुरु साहिबान का कोटानि-कोटि शुक्रिया है जिन्होंने 'गुरमति ज्ञान परिवार' पर अपनी कृपा-दृष्टि बनाए रखते हुए यह स्मरणीय कार्य संपूर्ण कराया। संपादकीय मंडल को तो इस श्रृंखला को संपूर्ण करने के लिए साधारण से कहीं अधिक मेहनत करनी ही पड़ी साथ ही 'गुरमति ज्ञान परिवार' में जो लेखक-लेखिकायें शामिल हैं, इनकी मेहनत भी आम आलेख लिखने में लगने वाली मेहनत से कई गुना अधिक लगने का हमको हार्दिक अहसास है। यह संपादकीय लेख 'गुरमति ज्ञान परिवार' के इन सदस्यों के स्मरणीय योगदान को समर्पित कर रहे हैं। लेखक-लेखिकाओं के प्रति हमारा आभार इतना अधिक है कि यह लघु आकार का संपादकीय लेख इसको व्यक्त करने के लिए नाकाफी प्रतीत होता है।

दस गुरु साहिबान पर विशेषांक प्रकाशित किए जाने सम्बंधी निर्णय हो जाने के बाद जब हमने योग्य लेखक-लेखिका के लिए विषय का निर्धारण करने के उपरांत उनसे संपर्क किया तो प्रत्येक लेखक-लेखिका ने न केवल सकारात्मक उत्तर ही दिया बल्कि सौंपे गए विषय की प्रशंसा भी की।

एक आशंका हमारे मन में थी कि प्रत्येक गुरु साहिब का जीवन तथा व्यक्तित्व तो हरेक

लेखक-लेखिका ने लेना है इसलिए कहीं विभिन्न आलेख दोहराव के कारण नीरस न हो जाएं। यह आशंका निर्मूल सिद्ध हई, इसलिए कि लेखकों-लेखिकाओं ने रुचि एवं रस से आत्म-विभोर होकर लिखा। पाठकों को भी उनके आलेख रस-विभोर ही करते रहे। वैसे भी गुरु-व्यक्तित्व अपने आप में संसार के विलक्षणतम व्यक्तित्व हुए हैं। प्रत्येक गुरु साहिब का जीवन अपने आप में एक विस्मादी वृत्तांत है। कुछ गुरु साहिबान का जीवन अधिक चुनौतियों से भरपूर रहा, जैसे पंचम पातशाह, छठे पातशाह, नौवें पातशाह और दशमेश पिता। ऐसा जीवन-वृत्तांत अपने आप में लिखने, पढ़ने, सुनने में अधिक प्रभावशाली तथा दिशा लेने योग्य होता है। फिर मूल बात तो सरोकार की होती है। जितना सरोकार हम किसी कार्य को अंजाम देते हुए करते हैं उसी हिसाब से उस कार्य का संपूर्ण होना यकीनी बनता है।

विशेषांक आरंभ करने से पूर्व हमें इस बात की पूरी तसल्ली थी कि हमारे पास वर्षों से 'गुरमति ज्ञान' पत्रिका के साथ जुड़े ऐसे कलमकार हैं जिनको कोई भी कार्य सौंप दो वे उसको बहुत ही अच्छी प्रकार से पूरा करेंगे और ऐसा ही हुआ, जो आप सबके सामने है। विशेषांकों की यह श्रृंखला आरंभ करने से कुछ ही समय पूर्व 'गुरमति ज्ञान' की लेखिकाओं में शामिल हुए हमारे बहन जी प्रो. सुरिंदर कौर ने अपनी ऊंची प्रतिभा, व्यापक अध्ययन तथा असीम परिश्रम का प्रमाण इन विशेषांकों के आलेखों द्वारा दिया। डॉ. जगजीत कौर, डॉ. नवरत्न कपूर, डॉ. मनजीत कौर, डॉ. कुलदीप सिंघ, डॉ. राजेंद्र सिंघ साहिल, कैप्टन डॉ. मनमीत कौर, डॉ. सत्येंद्रपाल सिंघ, डॉ. जोगेशवर सिंघ, डॉ. परमवीर सिंघ, डॉ. परमजीत कौर, डॉ. जसविंदर कौर, स. गुरबखश सिंघ पिआसा, प्रो. बलविंदर सिंघ जौड़ासिंघा, स. गुरदीप सिंघ, डॉ. निर्मल कौशिक, डॉ. गुरमेल सिंघ, डॉ. रछपाल सिंघ, डॉ. अंजूमन, डॉ. मधु बाला, डॉ. देवेंद्रपाल कौर, स. रूप सिंघ, डॉ. अविनाश शर्मा, डॉ. परमजीत सिंघ मानसा, प्रो. ब्रहमजगदीश सिंघ, डॉ. दलविंदर सिंघ, डॉ. भगवंत सिंघ, डॉ. जसबीर सिंघ साबर, डॉ. मनविंदर सिंघ, ज्ञानी हरबंस सिंघ, बीबी किरनदीप कौर, बीबी रविंदर कौर, बीबी रणजीत कौर पंनवां, बीबी रजवंत कौर, स. गुरदीश सिंघ भागोवालिया, बीबा सरबजीत कौर, स. बिक्रमजीत सिंघ, बीबी रजवंत कौर पठानकोट, स. जसविंदर सिंघ, स. सतविंदर सिंघ फूलपुर, स. अपिंदर सिंघ, बीबी मनजीत कौर तथा बीबी मनमोहन कौर आदि ने खूब मेहनत करके 'गुरमति ज्ञान' विशेषांकों में अहम योगदान दिया। हम अपने इस लेखक परिवार का तहेदिल से धन्यवाद करते हुए भविष्य में भी उनसे इसी प्रकार के सहयोग की आशा रखते हैं।

कुछ कलमकारों का विशेष उल्लेख करना बनता है, जैसे डॉ. राजेंद्र सिंघ साहिल एवं उनकी धर्म-पत्नी डॉ. रणजीत जीवन कौर; स. ऊधम सिंघ तथा उनकी धर्म-पत्नी प्रिं. अमरजीत कौर। जब घर-परिवार के दोनों मुखिया कलम चलाते हैं तो साधारणत: घर-परिवार की आवश्यक जिम्मेदारियां पूरी करने में अत्यधिक बल लगाना पड़ता है। डॉ. हुसन-उल-चराग एक जाने-माने वातावरण-प्रेमी हैं। इनकी फारसी भाषा की अच्छी पकड़ का लाभ लेते हुए इनको भाई नंद लाल जी द्वारा लिखे स्रोतों से संबंधित आलेख लिखने की विनती की गई। इन्होंने बेशक काफी संक्षेप रूपाकार में लिखा लेकिन जितना भी लिखा हृदय को स्पर्श करता हुआ, आत्मा को आनंदित करने वाला लिखा। ज्ञानी मोहन सिंघ श्री अकाल तख्त साहिब के भूतपूर्व मान्यवर ग्रंथी हैं जो कुछ

ही वर्ष पूर्व सेवामुक्त हुए। इनके गुरबाणी-अध्ययन का लाभ भी हमको और हमारे पाठकों को प्राप्त हुआ है।

जिन लेखक-लेखिकाओं ने सभी विशेषांकों के लिए लिखा उनका हम हृदय की गहराइयों से धन्यवाद करते हैं। कुछ एक ने अपनी व्यक्तिगत विवशताओं तथा व्यस्तताओं के कारण थोड़े ही विशेषांकों के लिए लिखा। उन्होंने जितना भी लिखा हम उसके लिए उनके प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हुए उनसे आगे के लिए इस पत्रिका के साथ निरंतर रूप से जुड़े रहने की गुजारिश करते हैं। जिन स्रोतों को हम इन विशेषांकों में शामिल नहीं कर पाए यदि उन स्रोतों पर कोई अच्छे आलेख किसी लेखक-लेखिका की ओर से किसी समय भी हमें प्राप्त हुए तो उनको भी प्रकाशित करने का प्रयास किया जाएगा।

कुछ स्रोतों में कई प्रकार की भ्रांतियां विद्यमान हैं जिनका पूर्णत: समाधान एकदम संभव नहीं। हमारे गुरमति सिद्धांतों की समझ रखने वाले लेखक-लेखिकाओं ने ऐसे स्रोतों का अधिक गहराई के साथ विश्लेषण करते हुए वास्तविकता को उजागर करने का प्रयास किया है। ऐसे भ्रांतिपूर्ण स्रोतों के बारे में यही कहा जा सकता है कि उस युग में गुरमति चेतना आज जितनी प्रचंड नहीं थी। कुछ स्रोतों के लेखक गैर-सिक्ख ही नहीं बल्कि मुगल काल के राजनैतिक प्रबंध में स्वयं भी शामिल थे जिनसे सही सिक्ख इतिहास लिखने की आशा नहीं की जा सकती। ऐसे स्रोतों से ज्ञान प्राप्त करने वाले अध्ययनकर्त्ता की अपनी गुरमति सोच जागृत रहे एवं ऐतिहासिक बातों को सदा सामने रखना होगा। हरेक ऐतिहासिक स्रोत का अपना अलग महत्व एवं प्रासंगिकता है। सिर्फ अध्ययन तथा विश्लेषणकर्ता की आलोचनात्मक दृष्टि कायम होने की आवश्यकता है। इन बातों का अच्छा उदाहरण प्रो. सुरिंदर कौर ने विशेष रूप से अपने कुछ आलेखों में प्रस्तुत भी किया है।

विशेषांकों को सामने रखते हुए कुछ कवियों ने अपने आप विशेषांक से संबंधित कविताएं रच कर भेजने का उद्यम किया, जिससे विशेषांकों में विधा-विभिन्नता तथा प्रभाव-रस-विभिन्नता का संचार हुआ। डॉ. करमजीत सिंघ नूर, डॉ. सुरिंदरपाल सिंघ, उर्दू शायर स. करनैल सिंघ 'सरदार पंछी', डॉ. दीनानाथ शरण, श्री संजय बाजपेयी रोहितास और बुजुर्ग पंजाबी कवि स. सेवा सिंघ हमारे धन्यवाद के पात्र हैं। आधुनिक कविता में व्यापक अध्ययन और गहरी खोज के आधार पर गुर-इतिहास का पुन: प्रस्तुतीकरण हमारे इन परिश्रमी कवियों के हिस्से आया है।

जाने-माने पंजाबी इतिहास की गुणवत्ता के बारे में नाटक लेखक तथा रंगकर्मी डॉ. हरचरन सिंघ का मत है कि साधारण रूप से तत्कालीन इतिहास, विशेषत: जो बादशाहों, शासकों के जरखरीद इतिहासकारों द्वारा रोचनामचे के रूप में लिखा जाता है, वह अधिकतर समय का सच नहीं होता, बल्कि समय का सच अनुभवी साहित्यकार अपनी संवेदना तथा अनुभवशीलता की आधारशिला पर सदियों बाद भी जगजाहिर करने की क्षमता एवं संभावना रखते हैं। हम कह सकते हैं कि प्रो. करतार सिंघ, प्रिं: तेजा सिंघ-डॉ. गंडा सिंघ, प्रिं: सतिबीर सिंघ आदि नवीन इतिहासकारों ने ऐसा कर दिखाया है।

भाई गुरदास सिंघ जी द्वारा रचित वार में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जीवन, इतिहास एवं उपमा

*-स. बलविंदर सिंघ जौड़ासिंघा**

गुरु साहिबान के जीवन-इतिहास एवं सिक्ख इतिहास को कलमबद्ध करने वाले लेखकों में भाई गुरदास जी और भाई गुरदास सिंघ जी हुए हैं। भाई गुरदास सिंघ जी को भाई गुरदास जी दूसरे (द्वितीय) भी कहा जाता है। *"ੴ सतिगुर प्रसादि ॥ (वार श्री भगउती जी की पातिसाही दसवीं की) बोलणा भाई गुरदास का"* के शीर्षक तले भाई गुरदास सिंघ जी की एक वार भी भाई गुरदास जी की ४० वारों के साथ मुद्रित हुई है।[१] सिक्ख इतिहास में चार-पांच व्यक्ति भाई गुरदास जी के नाम से जाने जाते हैं। भाई कान्ह सिंघ नाभा के 'महान कोश' में चार नामों का उल्लेख मिलता है। प्रथम, भाई गुरदास जी (भल्ला), जो श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के पहले लिखारी थे। द्वितीय, भाई बहिलोवंशी गुरदास मसंद, जो बाबा रामराय का सेवक था और बाबा रामराय की मृत्यु के पश्चात दशमेश पिता के दरबार में *"वार श्री भगउती जी की पातिसाही दसवीं की"* लिखी यह वार चालीस वारों के साथ जोड़ी है। तीसरे, शिकारपुर निवासी एक उदासी संत जिसने श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पर्याय लिखे हैं व सिंध में इसने धर्मशाला बनाई, जो बहुत प्रसिद्ध हुई।[२] चौथे भाई गुरदास जी के बारे में भाई वीर सिंघ ने उल्लेख किया है जो नौवें पातशाह के सिक्ख थे और दशमेश पिता के चौरबरदार कीर्तनीए सिक्ख के पिता थे।[३] भाई गुरदास सिंघ जी के बारे में लिखते समय प्रो. पिआरा सिंघ पदम का ४१वीं वार के कर्त्ता और इस वार की संरचना संबंधी मत भी विचार योग्य है। प्रो. पदम के अनुसार, "गुरदास सिंघ पहला कवि है जिसने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के आंखों देखे क्रांतिकारी कारनामों की वार लिखी है। . . . इस वार में बहुत बदलाव दिखाई देते हैं। वास्तव में यह पहले १४ पउड़ियों की वार थी। फिर किसी कवि ने इसमें ६ पउड़ियां और मिला दीं, जिसमें सिक्ख मिसलों की चढ़दी कला के समय का वर्णन है। पंक्तियों की गिनती भी काफी बढ़ोत्तरी वाली है। भाई गुरदास जी की पउड़ियां छ: पंक्तियों वाली हैं, लेकिन यह वार १८-२० पंक्तियों वाली हैं। अत: यह आपेक्षित हिस्सा छोड़कर हम कह सकते हैं कि भाई गुरदास सिंघ जी ने आंखों देखकर इस कौतुक की उपमा की है।"[४]

प्रो. पिआरा सिंघ के अनुसार "नौवें पातशाह के समय भाई पदमे का पुत्र भाई दुरगू एक प्रेमी गुरसिक्ख हुआ है। उसके चार पुत्र थे--भाई बीर सिंघ, भाई आलम सिंघ, भाई चौपा सिंघ और भाई गुरदास सिंघ। पहले इनके बुजुर्ग सोधरा जिला गुजरांवाला के निवासी थे और फिर वहां से उठकर दबुर्जी जिला सियालकोट में गए। भाई आलम सिंघ तो दशमेश पिता जी का सहपाठी था और फिर दरबार का मुसाहिब रहा और अंतत: चमकौर साहिब में शहीद हुए। चुस्त शरीर होने के कारण इनका इतिहास में 'आलम सिंघ नच्चणा' नाम प्रसिद्ध है। भाई

**उप सचिव, शिरोमणि गु: प्र: कमेटी, श्री अमृतसर। मो : ९८१४८-९८२१२*

गुरदास सिंघ जी ज्ञानी पुरुष थे और पहले से ही साहित्यक शौक भी रखते थे। इन्होंने श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पर्याय लिखे, जो मुद्रित नहीं हुए। ये दसम गुरु जी के ज्योति-जोत समा जाने के पश्चात साधु बन कर शिकारपुर सिंध की ओर चले गये और लगभग डेढ़ सौ वर्ष की आयु भोग कर वहां पर शरीर त्यागा। अब शिकारपुर में खट्ट वाली धर्मशाला आपकी यादगार है और दबुर्जी जिला सियालकोट में भी देश के बंटवारे से पहले २९ ज्येष्ठ को आपकी वर्षगांठ मनाई जाती है।

आपकी तीन रचनाओं के बारे में पता चलता है:

१. वार पातशाही दसवीं की
२. बारहमाहा श्री रामचंद्र जी का
३. पर्याय श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के[५]

प्रो. पिआरा सिंघ पदम के अनुसार यह वार श्री अनंदपुर साहिब में लिखी गई।[६] प्रो. पिआरा सिंघ पदम की सूचना के अनुसार सिक्ख रेफ्रेंस लाइब्रेरी के मसौदा नं: ११९१ में भाई गुरदास सिंघ जी की वार और बारहमाहा इकट्ठे मिलते हैं। इससे पुष्टि होती है कि दोनों का कर्त्ता एक ही है।[७] (यह ज्ञात रहे कि खरड़ा नं. ११९१ सिक्ख रेफ्रेंस लाइब्रेरी में इस समय मौजूद नहीं है, क्योंकि जून ८४ में श्री दरबार साहिब पर हुए फौजी हमले में अन्य बहुमूल्य सहित्य के साथ यह खरड़ा भी फौजी हमले की भेंट चढ़ चुका है।)

डॉ. रतन सिंघ (जग्गी) ने भाई गुरदास जी द्वितीय को श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का सिक्ख एवं समकालीन माना है और इसकी एक ही रचना *"वार श्री भगउती जी की पातिसाही दसवीं की" मानी है।*[८]

उपरोक्त चर्चा से चाहे भाई गुरदास जी द्वितीय के जीवन के बारे में प्रमाणिक तौर पर कोई अंतिम निर्णय नहीं लिया जा सकता किंतु जितनी देर तक कोई और ठोस जानकारी नहीं मिलती, हमें प्रो. पिआरा सिंघ पदम की जानकारी के साथ ही सहमत होना पड़ेगा।

चर्चा की जा रही है *४१वीं "वार श्री भगउती पातिसाही दसवीं की"* की कुल २८ पउड़ियां हैं। इन २८ पउड़ियों को एकजुट (युगल) माना जाता है। इस वार में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के आरंभिक जीवन इतिहास के बारे में क्रमवार कोई जानकारी उपलब्ध नहीं होती। फिर भी वार में सतिगुर जी के इतिहास एवं उपमा के बारे में जो जानकारी मिलती है उसकी बांट हम निम्नलिखित अनुसार कर सकते हैं:

१. श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की महिमा-वर्णन
२. खालसा पंथ की साजना
३. दूसरे गुरु साहिबान के बारे में
४. खालसा पंथ की महिमा

४१वीं वार में कवि ने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जीवन-चित्रण करते हुए पहले अकाल पुरख की उपमा का गायन करके दशमेश पिता जी को परमात्मा का रूप बताते हुए कहा है कि गुरु जी परमात्मा का रूप बन कर प्रकट हुए हैं :

वह प्रगटिओ पुरख भगवंत रूप गुर गोबिंद सूरा।
अनंद बिनोदी चोजीआ सचु सची वेला।
वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला ॥

(वार ४१:१४)

४१वीं वार में अमृत के दाते सतिगुरु जी के तेज प्रताप का वर्णन करते हुए कहा है कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी दसवें अवतार प्रकट हुए हैं जिन्होंने अपना पंथ तैयार किया। सभी शत्रु पछाड़ फेंके, सभी तुर्क दुष्ट भाग गए, सभी ओर

हलचल मच गई :

उहु गुरु गोबिंद होइ प्रगटिओ दसवां अवतारा।
जिन अलख अपार निरंजना जपिओ करतारा।
निज पंथ चलाइओ खालसा धरि तेज करारा।
सिर केस धारि गहि खड़ग को सभ दुसट पछारा।
सील जत की कछ पहरि पकड़ो हथिआरा।
सच फते बुलाई गुरू की जीतिओ रण भारा।
सभ दैत अरिनि को घेर करि कीचै प्रहारा।
तब सहिजे प्रगटिओ जगत मै गुरु जाप अपारा।
इउं उपजे सिंघ भुजंगीए नील अंबर धारा।
तुरक दुसट सभि छै कीए हरि नाम उचारा।
तिन आगै कोइ न ठहिरिओ भागे सिरदारा।
जह राजे साह अमीरड़े होए सभ छारा।
फिर सुन करि ऐसी धमक कउ कांपै गिरि भारा।
तब सभ धरती हलचल भई छाडे घर बारा।
इउं ऐसे दुंद कलेस महि खपिओ संसारा।
तिहि बिनु सतिगुर कोई है नही भै काटनहारा।
गहि ऐसे खड़ग दिखाईऐ को सकै न झेला।
वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला ॥
(पउड़ी १५)

दशम पिता की उपमा करते हुए कवि वर्णन करते हैं कि दसवें अवतार श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने ऐसे खालसा पंथ की साजना की जो कभी भी हारता नहीं है और जिसको कभी भी जीता नहीं जा सकता। खालसा पंथ ने सभी तुर्क आदि नष्ट कर दिए। सतिगुरु जी की प्रतिभा के साथ सभी ओर आनंद-मंगल हो गया:

गुरु गोबिंद दसवां अवतारा।
जिन खालसा पंथ अजीत सुधारा।
तुरक दुसट सभ मारि बिदारे।
सभ प्रिथवी कीनी गुलज़ारे।
इउं प्रगटे सिंघ महां बल बीरा।
तिन आगे को धरै न धीरा।
फते भई दुख दुंद मिटाए।
तह हरि अकाल का जाप जपाए।
प्रिथम महल जपिओ करतारा।
तिन सभ प्रिथवी को लीओ उबारा।
हरि भगति द्रिड़ाइ नरू सभ तारे।
जब आगिआ कीनी अलख अपारे।
इउं सतिसंगति का मेल मिलायं।
जह निस बासुर हरि हरि गुन गायं।
इउं करि है गुरदास पुकारा।
हे सतिगुरु मुहि लेहु उबारा ॥ (पउड़ी २४)

खालसा पंथ की सृजना : श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के जीवन की उपमा करते हुए, सतिगुरु जी के जीवन-इतिहास की सबसे महान कृपा खालसा पंथ की साजना के रूप में हुई। ४१वीं वार के अनुसार सतिगुरु जी ने अकाल पुरख के आदेश अनुसार खालसा पंथ की साजना की :

--निज पंथ चलाइओ खालसा धरि तेज करारा।
(पउड़ी १५)
--गुरुबर अकाल के हुकम सिउं उपजिओ बिगिआना।
तब सहिजे रचिओ खालसा साबत मरदाना।
(पउड़ी १६)

खालसा पंथ की सृजना करके हिंदू-मुसलमानों के साथ एक तीसरा धर्म मजहब तैयार कर दिया :

इउं दोनो फिरके कपट मों रच रहे निदाना।
इउं तीसर मजहब खालसा उपजिओ परधाना।
जिनि गुरु गोबिंद के हुकम सिउ गहि खड़ग दिखाना।
तिह सभ दुसटन कउ छेदि कै अकाल जपाना।
फिर ऐसा हुकम अकाल का जग मै प्रगटाना।
तब सुंनत कोइ न करि सकै कांपति तुरकाना।
इउं उमत सभ मुहंमदी खपि गई निदाना।

तब फते डंक जग मो घुरे दुख दुंद मिटाना।
इउं तीसर पंथ रचाइअनु वड सूर गहेला।
वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुर चेला ॥
(वार ४१:१६)

खालसा सृजना के समय धार्मिक परंपरा में परिवर्तन यह हुआ कि पहले सिक्खी धारण करने के लिए 'चरण पाहुल' की मर्यादा थी। फिर इसकी जगह 'खंडे की पाहुल' का आरंभ हो गया:
पीउ पाहुल खंडधार होइ जनम सुहेला।
(वार ४१:१)

खालसा पंथ की सृजना के साथ एक अन्य महत्वपूर्ण परिवर्तन यह हुआ कि सिक्ख संगत जो पहले धूणिओं, मंजीदारों, मसंदों या स्थानीय मुखिया के अधीन थी, अब समूची संगत को खालसा बना दिया अर्थात् अब सिक्ख संगत सीधी गुरु के अधीन हो गई। गुरु और संगत के बीच अब कोई नहीं था। गुरु साहिब 'गुरु चेला' और चेला 'गुरु रूप' हो गया :
संगति कीनी खालसा मनमुखी दुहेला।
वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला ॥ (वार४१:१)

४१वीं वार के अनुसार गुरु जी ने खालसा पंथ की सृजना करके धर्म का राज्य स्थापित किया और लोगों के दुख काटे। सभी ओर सच-धर्म का बोलबाला शुरू हो गया :
फिर सुख उपजाइओ जगत मै सभ दुख बिसराए।
निज दोही फिरी गोबिंद की अकाल जपाए।
तिह निरभउ राज कमाइअनु सच अदल चलाए।
इउ कलिजुग मै अवतार धारि सतिजुग वरताए।
सभ तुरक मलेछ खपाइ करि सच बनत बनाए।
तब सकल जगत कउ सुख दीए दुख मारि हटाए।
इउं हुकम भइओ करतार का सभ दुंद मिटाए।
तब सहजे धरम प्रगासिआ हरि हरि जस गाए।
वह प्रगटिओ मरद अगंमड़ा वरीआम इकेला।
वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला ॥
(वार ४१:१७)

इस वार में जहां गुरु साहिब के जीवन-इतिहास के कुछ पहलुओं के बारे में जानकारी मिलती है वहां दस गुरु साहिबान की उपमा का वर्णन भी २१वीं, २२वीं, २३वीं पउड़ी में हुआ है। उपरोक्त सामूहिक वर्णन का निष्कर्ष यही है कि भाई गुरदास जी ने ४१वीं पउड़ी में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की उपमा करते हुए कहा कि दशम पिता जी तेज प्रताप वाले और "आपे गुरु चेला" हैं। सतिगुरु जी ने खालसा पंथ की साजना की। खालसा पंथ की साजना के कारण अत्याचारी मुगल राज्य की नींव हिल गई। सतिगुरु जी ने 'खंडे की पाहुल' की मर्यादा चलाकर सारी संगत को 'खालसा' बना दिया। इस प्रकार यह एक महत्वपूर्ण स्रोत है जो हमें दशमेश पिता की उपमा करते हुए महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं की जानकारी देता है।

संदर्भ सूची :

१. वारां भाई गुरदास जी, शिरोमणि गु: प्र: कमेटी, श्री अमृतसर, पृष्ठ ४३६
२. महान कोश, भाषा विभाग पंजाब, १९८८, पृष्ठ ४१६
३. वारां भाई गुरदास जी--सटीक, भाई वीर सिंघ, खालसा समाचार, पृष्ठ ६६२
४. श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी दे दरबारी रतन, प्रो. पिआरा सिंघ पदम, लोअरमाल, पटियाला, पृष्ठ १८९-९०
५. वही।
६. वही।
७. वही।
८. सिक्ख पंथ विश्व कोश, संपादक डॉ. रतन सिंघ (जग्गी), पटियाला।

"गुर सोभा" कृत कवि सैनापति में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का तेजस्वी व्यक्तित्व

*-डॉ. जगजीत कौर**

साहिबे-कमाल, पुरख अगंमड़ा, बादशाह दरवेश, शाहे-शहंशाह, जुमलाफैजिनूर, परम पुरख के दास, तेजस्वी योद्धा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का व्यक्तित्व कुल संसार के धर्म-इतिहास में एक विलक्षण व निराला व्यक्तित्व है, जिसकी तुलना का कोई अन्य धर्मप्रणेता, प्रतापवान, तेजपुंज मिलना नितांत असंभव है। संसार में ऐसा कोई विलक्षण व्यक्तित्व नहीं जो अपने इष्ट देव के चरणों में पूर्ण समर्पित हो, साधना-रत हो, पूर्ण तादात्म्य व एकसुरता की अवस्था में प्रभु से यह वरदान मांग रहा हो--*"क्रिपा कर सयाम इहै बरु दीजै ॥ शस्त्रन सो अति ही रण भीतर जूझ मरौं तउ साचु पतीजै ॥"* इस सर्वस्वदानी महान प्रभु-दास के जीवन का लक्ष्य ही यही था :

याही काज धरा हम जनमं ॥
समझ लेहु साधू सभ मन मं ॥
धरम चलावन संत उबारन ॥
दुसट सभन को मूल उपारन ॥

इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए आपने अपने इष्ट देव प्रभु अकाल पुरख से प्रार्थना की :

. . . सुभ करमन ते कबहूं न टरों ॥ . . .
जब आव की अउध निदान बनै,
अति ही रन मै तब जूझ मरों ॥

यह तेजस्वी योद्धा रण में जूझता रहा, केवल स्वयं ही नहीं अपने पिता का शीश भी पंथ हित न्यौछावर किया, दो लख्ते-जिगर चमकौर की गढ़ी में कुर्बान किए, दो नन्हें दुधमुंहे दुलारों को सरहिंद की दीदार निगल गई, माता गुजरी जी शहादत का जाम पी गईं, स्वयं जीवन भर देश को जालिमों, आततायियों से मुक्त कराने हेतु पंथ की शान-मान-मर्यादा को कायम रखने, कुल मानवता को सुख-चैन से जीने, चढ़दी कला में रमने-रचने की मानसिकता प्रदान कर, संघर्षरत रह परम ज्योति में आत्मसात हो गए।

ऐसे महापुरुष का जीवन-वृत्तांत अनेक साहित्य-प्रेमियों, इतिहासवेत्ताओं, राजनीति विशेषज्ञों और साधारण जनमानस की जिज्ञासा, खोज और चाहत का विषय रहा है। कई विद्वान जिज्ञासुओं ने अपने-अपने ढंग से बयान भी किया है। इनमें कवि सैनापति रचित "गुर सोभा" भी विषय आकर्षण का केंद्र है।

"गुर सोभा" का महत्व इस दृष्टि से सर्वाधिक अमूल्य है क्योंकि कवि सैनापति श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के ५२ दरबारी कवियों में से प्रमुख कवि थे और अत्यंत श्रद्धावान हजूरी कवि थे। इनकी यह रचना गुरु साहिब के ज्योति-जोत समाने के तीन वर्षों के अंतराल में ही संवत् १७६८ (सन् १७११) में संपूर्ण हुई। इस ग्रंथ के महत्व का वर्णन करते हुए प्रसिद्ध विद्वान व इतिहासकार डॉ. गंडा सिंघ तो यहां तक कहते हैं कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दरबारी कवियों में से केवल सैनापति ही हैं जिन्होंने गुरु साहिब के ऐतिहासिक जीवन पर कुछ विस्तार से लिखा है। यदि हजूर के दरबार के दो-चार और लेखक इसी प्रकार जीवन-वृत्तांत पर कुछ लिख जाते तो उसकी सहायता से एक अच्छी भरोसे योग्य जीवनी लिखी जा सकती थी और अनेक उलझनें स्पष्ट हो जातीं। डॉ. साहिब यह

1801-C, Mission Compound, Near St. Mary's Academy, Saharanpur (U.P.)-247001, Mob. : 92197-87756

भी स्पष्ट करते हैं कि "ऐसा प्रतीत होता है कि कवि सब समय उनके साथ नहीं रहे, इसलिए सुनी-सुनाई बातें कई स्थलों पर भ्रम उत्पन्न करती हैं। कई नामों और घटनाओं का भी जिक्र भ्रम पैदा करता है, लेकिन उन्हें शोधने का यत्न किया गया है।"

ग्रंथ के लेखक ने अपना पूरा नाम-पता कहीं नहीं बताया है। ग्रंथ का प्रारंभ करते हुए प्रथम अध्याय में वह 'खालसा बाच' लिखता है। संभवत: वह अमृत-पान कर 'खालसा' सजा हो और स्वयं को 'खालसा' कहने में फख्र महसूस करता हो, इसलिए कुछ आलोचकों ने इसे 'सैना सिंघ' भी कहा है। भाई कान्ह सिंघ "गुर सोभा" का लेखक सैनापति बताते हैं और इसे दशमेश जी का विद्वान दरबारी कवि मानते हैं, जिसे गुरमुखी और संस्कृत का उत्कृष्ट कोटि का ज्ञान था। इसने चाणक्य नीति का भाखा (भाषा) में अनुवाद किया था।

"गुर सोभा" ग्रंथ २० अध्यायों में है और इस ग्रंथ का मुख्य विषय श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की तेज प्रतापपूर्ण जीवन-झलकियों को ही प्रस्तुत करना है। कवि ने गुरु साहिब के जीवन के उन अंशों का ही वर्णन किया है जो उनके उच्च धार्मिक विचार, उनकी निष्पक्ष समदृष्टि की भावना, शत्रु-मित्र की भावना से मुक्त मनोदशा, शौर्यपूर्ण वृत्ति, सैन्य बल-संगठन में निपुणता, खालसा पंथ साजना में निहित दूरदृष्टि, खालसा की रहित मर्यादा और गुरदेव जी के अनेक विलक्षण तेज प्रतापपूर्ण गुणों को उजागर करते हैं।

प्रथम अध्याय *"पंथ प्रगास"* के कवि गुरु-चरणों में नमस्कार कर कथा-रचना की पूर्णता हेतु बुद्धि प्रकाश-प्राप्ति की अरदास करता है:

नमसकार करि जोरि कै करित जीव अरदासि।
रचों ग्रंथ तुमरी कथा करहु बुध प्रगास।४।१।

अत्यंत प्रेम से रची गुरु-कथा का समय स्पष्ट करता है :

संमत सत्रह सै भए बरख अठासठ बीत।
भादव सुद पंद्रस भई रची कथा करि प्रीति।६।१।

इसके पश्चात दस गुरु साहिबान के नाम स्पष्ट करते हुए दसों जामों की एकरूपता, एक ज्योति का जिक्र करते हैं। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के जन्म लेने का वर्णन और मकसद वे 'बचित्र नाटक' की तर्ज पर करते हुए अकाल पुरख परम ज्योति द्वारा गुरु साहिब को इस सृष्टि पर रूपमान होने का वर्णन करते हैं:

जिते मैं पठाए। सु आपी कहाए। . . .
तुझै जो बनाइआ। सु एही उपाइआ।
करउ पंथ मेरा। धरम काज केरा।३०।१।
यहै कहि पठायो। तबै स्रिसटि आयो।

इसके पश्चात गुरु साहिब के पटना शहर में प्रकाश, बालरूप में अनेक लीलाओं का वर्णन आदि वह नहीं करता और सीधा ही दूसरे अध्याय में 'तेग प्रगास-शाह संग्राम युद्ध' भंगाणी के युद्ध पर आ जाता है। फतेह शाह पहाड़ी राजा के साथ किए गए युद्ध में गुरु साहिब की जीत होती है : *"जीत संग्राम आनंद मंगल भयो आन गोबिंद गुण सबन गाए।"* तीसरे-चौथे अध्याय में नादौण और हुसैनी के युद्ध का वर्णन है जिसमें भीमचंद कहलूरीआ, अलफ खान और दिलावर खान के पुत्र खानजादा हुसैनी खान से युद्ध कर गुरु साहिब ने फतह हासिल की। गुरु साहिब युद्ध नहीं करना चाहते थे। वे पाउंटा साहिब के शांत स्थल पर प्रकृति के सुहावने माहौल का आनंद लाभ ले रहे थे, लेकिन पहाड़ी राजे गुरु साहिब की बढ़ती ताकत तथा उनके तेज प्रतापपूर्ण व्यक्तित्व से भयभीत हो गए थे और इकट्ठे होकर इस बढ़ती शक्ति को खत्म करना चाहते थे, जो वे नहीं कर सके, हार कर बैठ गए।

अब गुरु साहिब ने पंथ को संगठित करना

चाहा। "गुर सोभा" के पांचवें अध्याय में खालसा पंथ साजने का वर्णन है। इसमें कवि ने न तो खालसा पंथ साजने की तारीख व दिन दिया है और न ही पांच प्यारों का चयन, चयन-विधि का कौतुक, खंडे-बाटे का अमृत तैयार करने आदि का वर्णन किया है, केवल इतना ही कहा है:

चेत मास बीतिउ सकल मेला भयो अपार।
बैसाखी के दरस पै सतिगुर कीयो बिचार।११८।. . .
गोबिंद सिंघ करी खुशी संगति करी निहाल।
कीउ प्रगट तब खालसा चुकिओ सकल जंजाल।१२०।
सब समूह संगति मिली सुभ सतिलुद्द्र के तीर।
केतक सुन भए खालसा केतक भए अधीर।१२१।

लेकिन एक विचार जो कवि ने दिया है वह अत्यंत महत्वपूर्ण इस दृष्टि से है कि गुरु साहिब खालसा पंथ की साजना खालसा पंथ को सर्वोपरि सत्ता के रूप में प्रतिष्ठित करने के विचार से करते हैं, खालसा को खुदमुख्तियार बनाते हैं, मसंद-प्रथा को खत्म कर गुरु और सिक्ख का सीधा सम्बंध स्थापित करते हैं। अमृत-पान कर खालसा सजा, व्यक्ति, गुरु के सीधे निकट हैं। वह गुरु का विशेष कृपा-पात्र बन जाता है। जैसा कि उस समय मुगलकालीन शासन-सत्ता में, 'खालसा' अरबी भाषा के शब्द का अर्थ ही ऐसी सम्पत्ति, जो सीधे बादशाह के अधीन हो, बादशाह आप जिसका स्वामी हो, तो अमृत-पान कर गुरु का खालसा गुरु में ऐसे मिल जाता है जैसे दूध में जल। खालसा का एक अर्थ खालिस, शुद्ध, निर्मल भी है। गुरु साहिब ने गुरसिक्ख को निर्मल जीवन-यापन करने की प्रेरणा देकर उसे 'खालसा' उपाधि प्रदान की:

--जगत उधारन कारने सतिगुर कीओ बिचार।
कर मसंद तव दूर सब निरमल कर संसार।१३१।
--तज मसंद प्रभ एक जप यहि बिबेक तहा कीन।
सतिगुर सो सेवक मिले नीर मधि जो मीन।१२२।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब और श्री गुरु हरिराय साहिब के समय मसंदों की स्थापना इसलिए की गई थी कि उस समय तक सिक्खी का प्रचार-प्रसार दूर-दूर तक हो गया था। मसंद एक तो गुरमति का प्रचार करते थे और साथ ही सिक्खों द्वारा दी गई कार-भेंट एवं चढ़ावा गुरु जी तक पहुंचाते थे, परंतु समय पाकर मसंद पूरी तरह समर्पित नहीं रहे, वे गुरमति प्रचार में आलसी हो गए और कार-भेंट भी गुरु साहिब तक पूरी तरह नहीं पहुंचाते थे। अत: इस भ्रष्ट श्रेणी को दूर कर गुरु और सिक्ख का सीधा निर्मल पवित्र सम्बंध स्थापित करने के उद्देश्य से श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'खालसा' की साजना की :

करनहार करतार हुकमु करते कीआ।
कर मसंद सभि दूरि खालसा करि लीआ। १४८। . . .
सिमरत नाम पुनीत टूटत फंद है।
भए खालसा सोइ छोड़ि मसंद है। . . . १६२।

गुरु साहिब ने खंडे की पाहुल बख्श कर खालसा को खुद खुदाई दे दी :

खांडे की पाहिल दई करनहार प्रभ सोइ।
कीओ दसो दिस खालसा तां बिन अवर न कोइ।१४८।

'खंडे की पाहुल' धारण किए खालसा एक ऐसे समाज के रूप में उभरा जिसके जीवन का आदर्श अध्यात्म जीवन के साथ, सांसारिक जीवन में ऐसे निष्काम समाज सेवक बनना था जो शक्ति, साहस, शौर्य और बल के आधार पर दुष्ट आततायियों का नाश कर सके, जिससे कि आम साधारणजन शांतिपूर्ण जीवन जी सके :

असुर सिंघारबे को दुरजन के मारबे को
संकट निवारबे को खालसा बनायो है।१३०।

ऐसे सजे खालसा के लिए गुरु साहिब ने रहित बनाई :

--ऐसी रीति रहत बरताई।
संतन सुनी अधिक मन भाई। . . . १४२।
--हुक्का न पीवै सीस दाढ़ी न मुंडावै

सो तो वाहिगुरू वाहिगुरू गुरू जी का खालसा।१४६।
हुक्का तिआग हरि गुन गावै।
इछा भोजन हरि रसु पावै।
भद्दर तिआग करो रे भाई।
तब सिखन यह बात बताई।१३७।

'केश' खालसा की विशेष रहित है। किसी भी हालत में केशों की बेअदबी नहीं करनी, हुक्का, तंबाकू आदि नशों का सेवन नहीं करना।

जब इस प्रकार की रहित मर्यादा सुनकर नए सजे खालसा अपने-अपने नगरों, शहरों गन्तव्य स्थानों पर पहुंचे और उन्होंने गुरु जी का आदेश सबको सुनाया तो कई श्रद्धालुओं ने तो नत्मस्तक हो स्वीकार किया और कुछ विरोध करने लगे। इस प्रकार के मतभेद से खालसे को कई जगह अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। कवि सैनापति दिल्ली के सिक्खों का विशेष रूप से वर्णन करता है। वहां के व्यापारी क्षत्रियों ने विशेष विरोध किया कि यह कैसे हो सकता है कि माता-पिता के मरने पर भी केशों का भद्दण न किया जाये। ऐसे में हम समाज में नहीं रह सकते। अमृतधारियों की दुकानें बंद करवा दी गईं। उन्हें आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा पर बाद में सब ठीक हो गया। उन्हें अपनी भूल का अहसास हुआ, माहौल सुखप्रद हो गया :

तब दिल्ली मै आइ कै सब सो कही सुनाइ।
केतन मानी प्रीत कर केतन दई भुलाइ।१९७। . . .
ब्रहमण होइ कै भदर न कीजै।
जग मै सोभ कवन बिधि लीजै। . . .२०१। . . .
सब मजीत खोल कर दीनी।
तबी सुला आपस मो कीनी।
हाटैं खुली भयो रुजगारा।
भयो अनंद क्रोध जब मारा।२९३। . . .
फेरि सिख संगति मै आए।
केतन आइ गुनाह बखशाए।२९४।
तब सिखन उन लीओ मिलाई।
फेरि चाल दरशन की आई।
दर दरशन के सिख सिधाए।
भए अनंद प्रभू गुन गाए।२९५।

आठवें अध्याय में कवि अनंदपुर साहिब की पहली जंग का वर्णन करता है जो भंगाणी के युद्ध में हार चुके राजा भीमचंद के पुत्र अजमेर चंद) जो उस समय कहिलूर का राजा था (और गुरु साहिब के बीच हुई। राजा अजमेर चंद ने अन्य पहाड़ी राजाओं को साथ मिलाकर गुरु जी के साथ युद्ध छेड़ने की दृष्टि से गुरु जी को कहलवा भेजा कि वे अनंदपुर साहिब की जमीन खाली कर दें अथवा इस जमीन के पैसे भरें। यह भूमि श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने पैसे देकर खरीदी थी, इसलिए पैसे भरने का तो सवाल ही नहीं उठता था और खाली भी क्यों करते? अत: युद्ध का नगाड़ा बज गया :

तब ही बचन पाइ चढ़िओ नगारा बजाइ
सुआर भयो जीत सिंघ जुध के करन को।३१५। . . .
और तब :
केतन दिन इह भांत करि भयो जुध संग्राम।
प्रबल भयो तह खालसा राजन मानी आन।३३४।

युद्ध जीत कर गुरदेव निर्मोह में आ टिके। यहां फिर अजमेर चंद ने पहले तो गुरु साहिब के अनंदपुर साहिब न रहने पर किले का कीमती सामान लूट लिया और फिर साथ लगते गांव भी लूट लिए। उत्तर में गुरु के सिंघों ने इन पहाड़ियों के गांव घेर लिए। घबरा कर अजमेर चंद ने मुगलों से सहायता मांगी जिससे सरहिंद के नवाब वजीर खान ने कुछ सेना भेजी और पहाड़ी सेना ने मिलकर धावा बोल दिया। सिंघों ने वे करारे हाथ दिखाए कि सम्मिलित सेना भाग निकली :

छोड खेत कलमोट को भजे मूड़ अगिआन।
फते भई प्रभ पुरख की राजन मानी आन।४०१।

कलमोट, बिसाली का जंग जीत कर गुरु साहिब अनंदपुर साहिब अपने किले में आ गए। पहाड़ी राजाओं को चैन नहीं था। उन्होंने मुगलों की सहायता से और पठान सेना को साथ ले भारी संख्या में सैन्य बल द्वारा अनंदपुर साहिब के किले अनंदगढ़ को घेर लिया। घेरा इतना लंबा चला कि अंदर अनाज समाप्त हो चला, लोग भूख से तड़पने लगे। तब उन्होंने गुरु जी से प्रार्थना की :

इस ही भांति कई दिन गए।
नगर लोग ठाढे सभि भए।
दर कै आगै करी पुकारा।
अंनि बिनु जी जीऊ जाइ हमारा।४६१। . . .
बिना भोजन जीवन अब नाहीं।
सो बीजै है सांझ सुभा ही।४६२।

अंत में गुरु जी ने किला छोड़ने का निर्णय ले लिया। सैनापति कवि ने इसकी तारीख, दिन नहीं बताया है :

सामां कूच साहिब ने कीना।
सिक्खन बांट खजाना दीना। . . .
और वसतु जेती हुती दीनी सबै जलाइ।
छोडि चले अनंदगढ़ निमख बिलम नही लाइ।४६९।

गुरु साहिब कुछ अस्त्रों-शस्त्रों सहित परिवार व सिक्खों के लेकर अभी थोड़ी दूर ही पहुंचे थे कि मुगलों की सेना ने सरसा नदी के किनारे उन पर आक्रमण कर दिया। अचानक के हमले से भागदौड़ मच गई, परिवार बिखर गया और कीमती सामान व साहित्य भी नदी में बह गया। गुरु साहिब, दो बड़े साहिबजादों और मुट्ठी भर सिक्खों सहित चमकौर की कच्ची गढ़ी में पहुंचे और वहीं से सैन्य संगठन किया। इस समय केवल चालीस सिंघ उनके साथ थे और लाखों की तादाद में विपक्षी सेना, फिर भी गुरु जी ने अद्वितीय सैन्य संगठन के बल पर दुश्मनों का ऐसा डटकर शूरवीरता से सामना किया कि दुश्मन सेना गढ़ी के द्वार तक नहीं पहुंच सकी। गुरु साहिब ने स्वयं अपने हाथों से सुसज्जित कर अपने बड़े साहिबजादे बाबा अजीत सिंघ को भेजा जिन्होंने उसने युद्ध में अनुपम वीरता का प्रदर्शन किया :

बहुत जुध भारी भयो निकटि गांव चमकउर।
जिहके मारत वार गहि ते राखत है ठउर।५११।
कीउ जुध इह भांत करि बली सिंघ रणजीत।
बडे सूरमा जे हुते चुन मारे इह रीत।५१२। . . .
लई तरवार अर वार ऐसे करे करै दुइ टूक भुइ माह डारे। . . . ५१३।
--भांति इह जुध रणजीत भारी कीओ सभै दल वाहि वाहि कहि पुकारे। . . . ५०८।

शत्रु दल भी वाहवाही कर रहा है। अंत में बाबा अजीत सिंघ जी शहादत का जाम पी गए। बड़े साहिबजादे के शहीद हो जाने पर गुरु साहिब ने दूसरे पुत्र बाबा जुझार सिंघ जी को रणभूमि में भेजा। बड़े पुत्र की शहादत गुरु साहिब ने अकाल पुरख का धन्यवाद करते हुए कहा कि आज खालसा-सृजन का लक्ष्य पूरा हुआ। पंथ में ऐसे शूरवीर उत्पन्न हुए हैं जो शत्रु-दल, जालिमों का मर्दन करने के समर्थ सिद्ध हुए हैं :

लगी कार असवार कै कीनो काम अपार।
पीओ पिआला प्रेम का मगन भयो असवार।५१९।
ताहि समै ऐसे कहिओ गोबिंद सरन बीचार।
आज खास भए खालसा सतिगुर के दरबार।५२०।

बाबा जुझार सिंघ ने शत्रुओं से खूब लोहा लिया। वीरता का प्रदर्शन करते हुए अंत में खून से लथपथ हो शहादत को प्राप्त हुए :

बहुतु घाइल भयो स्रोन तन ते गयो
जूझ कै खेत मै यो बिचारे।५३७।

गुरु साहिब के अचूक बाण-प्रहार के सामने कोई टिक नहीं सका। यहां कवि एक शत्रु के तीर से गुरु साहिब की एक अंगुली कट

जाने का जिक्र करता है :

मारत तीर बिलंमु नही कछु चोट पै चोट करै धुनि लाए।
ताहि समै प्रभ कौतक कै इक दूत ने चोट करी खुनसाइ।
यौ प्रभ जी करनी इव ही इक उंगल पोर रही तिह ठाए।५४०।

यद्यपि चमकौर के युद्ध का अत्यंत उत्साह सहित सजीव वर्णन कवि ने किया है, किंतु कुछ नामों के प्रति और घटनाओं सम्बंधी मुगालता पैदा किया है। बाबा अजीत सिंघ जी का नाम कहीं 'जीत सिंघ' और कहीं 'रणजीत सिंघ' लिखा है और एक 'जोरावर सिंघ' को बाबा जुझार सिंघ जी के युद्धों के मध्य प्रवेश कराया है। जोरावर सिंघ संभत: कोई बहादुर सिंघ रहा होगा। आगे कवि कहता है कि इसी बीच चमकौर में ही कुछ मुगल सिपाहियों ने छोटे साहिबजादों को पकड़ लिया और उन्हें सरहिंद पहुंचा दिया, जहां *"दोऊ जूझत ही प्रभ लोक सिधाए।"* छोटे साहिबजादों की शहादत का भी विस्तृत वर्णन कवि ने नहीं किया है, सिर्फ इतना ही कहता है :

धंनि धंनि गुरदेव सुत तन को लोभ न कीन।
धरम राख कल मो गए दादे सो जस लीन।५४३।
फते सिंघ जुझार सिंघ इह बिधि तजे प्रान।
प्रगट भए तिह लोक मै जानत सकल जहान।५४४।

यहां भी बाबा जोरावर सिंघ की बजाय बाबा जुझार सिंघ लिखा है और दोनों को मुगलों द्वारा पकड़ 'सब सीरंद लाए' बताया है जो इतिहास सम्मत नहीं है। माता गुजरी जी का कहीं जिक्र नहीं किया है।

तेरहवें अध्याय में कवि गुरु साहिब द्वारा चमकौर छोड़कर बराड़ों के इलाके में आने का जिक्र करता है। जब शत्रु-दल को भनक पड़ी तो वे फिर हमला बोलने चल पड़े। यहां गुरु साहिब को वे सभी सिंघ सूरमे आ मिले जो अनंदपुर साहिब में बेदावा लिखकर दे आए थे। वे इतनी बहादुरी से लड़े कि *"भाजि तुरकान मैदान छोडै तबै खेत सिंघान के हाथ आयो।"* गुरु साहिब ने उन सभी चालीस सिंघों को मुकत होने का वरदान दिया। वह पावन सरोवर, जिसके निकट गुरु साहिब ने छावनी की थी, 'मुकतसर' प्रसिद्ध हुआ। मुकतसर की जंग पर विजय प्राप्त कर गुरु साहिब ने औरंगजेब को पत्र लिखा जो 'जफरनामा' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। औरंगजेब उस समय दक्षिण भारत में था। भाई दया सिंघ जी को यह पत्र देकर दक्षिण भारत में औरंगजेब के पास भेजा। भाई दया सिंघ जी को औरंगजेब से मिलने में कठिनाई हो रही थी। उनको समय भी काफी लगा। इस बीच गुरु साहिब स्वयं दक्षिण की ओर चल पड़े। भाई साहिब दक्षिण से वापिस आते हुए उन्हें रास्ते में ही मिल गए और बताया कि पत्र प्राप्त कर औरंगजेब ने गुरु जी को आदर सहित दर्शन देने के लिए दक्षिण बुलाया है। अभी गुरदेव जी जाने की तैयारी में ही थे कि औरंगजेब का अहमदनगर में देहांत हो गया।

अब उसके पुत्रों में गद्दी को लेकर विद्रोह चला। शाहजादा मुअज्जम पेशावर से दिल्ली की ओर भागा। गुरु साहिब इस बीच दिल्ली पहुंच चुके थे। मुअज्जम स्वयं गुरु साहिब के दर्शन करने आया। बहादुर शाह के नाम से वह तख्त का मालिक बन चुका था, परंतु अभी भी उसके भाई झगड़ रहे थे। दक्षिण में उसके भाई कामबख्श ने बगावत खड़ी की। उसे दबाने के लिए उसे दक्षिण जाना था। वह गुरु साहिब को भी साथ ले गया। वह गुरु साहिब से आशीर्वाद लेना चाहता था और वह गुरु साहिब का एक महान आध्यात्मिक योद्धा के रूप में आदर-सम्मान करता था। गुरु साहिब भी उसे जब

मिलते तो पूरी शानो-शौकत और अपने तेजस्वी, प्रतापी, शस्त्रधारी स्वरूप में मिलते। कवि के अनुसार :

चढ़ी कमान शसत्र सब सारे।
कलगी छब है अपर अपारे।
लटकत चलत तरां चल आए।
शाह पास बैठे इम जाइ।७२०। . . .
कलगी और धुगधुगी आनी।
खिलअत एक शाह मनमानी।
शाह प्रभू को भेंट चढ़ाई।
खुशी करो तुम सो बन आई।७२३।

गुरु साहिब यह खिलअत पहनते नहीं थे, अपने अन्य सभी निजी शस्त्र धारण कर बादशाह से मिलते थे। दक्षिण में बादशाह बुरहानपुर से वापिस लौट आया परंतु नर्बदा नदी पार कर ताप्ती नदी के किनारे बुरहानपुर जब गुरु साहिब ठहरे तो वहां आस-पास इलाके की संगत में उत्साह की लहर दौड़ी और वो उमड़-उमड़ कर गुरु साहिब के दर्शन करने आने लगी। गुरु साहिब ने वहां की संगत को प्रेम सहित उपदेश किया। कई दिन तक सतसंग, प्रवचन-उपदेश चलते रहे। तब गुरु साहिब गोदावरी नदी के पास नांदेड़ शहर में आ गए। कुछ दिन यहां टिक कर और संगत को दर्शन दे तृप्त कर उनका पंजाब वापिस मुड़ जाने का इरादा था। जब सरहिंद के सूबेदार वजीर खां को पता चला कि गुरु साहिब को बादशाह ने सम्मानित किया है और दोनों में मित्रता हो गई है तो वह डरने लगा कि पंजाब आकर गुरु साहिब शक्ति संगठित कर उससे छोटे साहिबजादों की शहादत और खालसे को पहुंचाए गए कष्टों का बदला लेंगे। उसने सोचा कि उन्हें वापिस ही न आने दिया जाये, वहीं कत्ल कर दिया जाये। उसने दो पठान--एक जमशेद खान और दूसरा उसका साथी भेजे, जिन्होंने मौका पाकर गुरु जी पर जमधर तेज कटार से वार किया:

नहीं सिंघ कोई तहां पास औरे।
रहे एक ही ऊंघ सोई गयो रे।
इते मै प्रभू आप बिसराम लीना।
गही दुशटि जमधार उरवार कीना।७७७।

एक को तो गुरु जी ने वहीं खत्म कर दिया, दूसरे को सिंघों ने मार डाला। घाव काफी गहरा लगा जिसे तब धो-पोंछ कर सी दिया गया, लेकिन कुछ दिन बाद बाण पर प्रत्यंचा चढ़ाते हुए शक्ति लगा खींचने पर घाव में से फिर रक्तस्राव होने लगा। गुरु जी ने विचलित होती संगत को तसल्ली दी :

टेक करी ताही समे जागै सिंघ अपार।
वाहिगुरू जी की फते कही अंत की बार।७९९।
--भरोसा सबै को भली भांति दीना।
गई अरध रातं घरी चार अउरै। . . . ७९८।

अर्धरात्रि के पश्चात :

संमत सत्रा सै भए पैंसठ बरख प्रमान।
कातक सुद भई पंचमी निस कारन करि जान।८०२।

कार्तिक सुदी पंचमी संवत् १७६५ वि. (७ अक्तूबर, सन् १७०८) को गुरदेव जी नांदेड़ में ज्योति-जोत समाए।

गुरु साहिब का अंत समय निकट जान एक दिन पहले खालसे ने पूछा, "गुरदेव जी! आपका दीदार हमें किस रूप में होगा?" तो गुरु साहिब ने कहा :

ताह समे गुर बैन सुनायो।
खालस आपनो रूप बतायो।
खालस ही सो है मम कामा।
बखश खीउ खालस को जामा।८०६।
दोहरा। खालसा मेरे रूप है हौं खालस के पासि।
आदि अंत ही होत है खालस मै प्रगास।८०७।
खालस खास कहावै सोई
जा कै हिरदै भरम न होई।

भरम भेख ते रहै निआरा
सो खालस सतिगुरू हमारा। . . . ८०८।

गुरु साहिब ने अपना शारीरिक रूप *"बखश कीउ खालस को जामा"* कह कर गुरु-पंथ को दिया और 'आत्म-रूप', 'ज्योति-रूप', 'शबद-विचार' गुरबाणी को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में विराजमान बताया:

सतिगुरू हमारा अपर अपारा
शबदि बिचारा अजर जरं।
हिरदे धरि धिआनी उचरी बानी पद निरबानी अपर परं।
गति मिति अपारं बहु बिसथारं वार न पारं किआ कथनं।
तब जोति प्रगासी स्रब निवासी सरब उदासी तव सरनं।८०८।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की निर्वाण पद तक पहुंचाने वाली अपरंपार, अगाध प्रभु के शबद-विचार से परिपूर्ण बाणी, ज्ञानी-जनों के ध्यान-विचार का केंद्र, अकथनीय, सारतत्वपूर्ण बाणी ही गुरु का ज्योति प्रकाश है। गुरसिक्ख को इसकी ही शरण में रहना है। ऐसा स्पष्ट उपदेश गुरु साहिब ने खालसा पंथ को दिया।

आगे के उन्नीसवें और अंतिम बीसवें अध्याय में कवि ने अपनी अनन्य भक्ति-भाव से पूरित और खालसा पंथ की चढ़दी कला से प्रेरित भावनाओं, व्यक्तिगत उद्गारों को मूर्तिमान किया है। 'राज करेगा खालसा' की अनन्य आस्था और शुभ कामना से प्रेरित होकर वह कहता है कि आशा का स्वर्णिम प्रकाश यह उद्घोष कर रहा है कि गुरु का खालसा :

करि मै गहि तेग दरेग नही सब दूतन मारि खपावहिंगे।
भजि है इह भांत कमानन ते सर यो तिन को बिचलावहिंगे।
भल भाग भया तुम ताहि कहो गढ़ आनंद फेर बसावहिंगे।८३१।

देग-तेग का धनी गुरु का खालसा तीखे बाणों से प्रहार कर, मानवता के शत्रुओं का मर्दन कर, संपूर्ण संसार में अनंदगढ़ को बसाएगा, संपूर्ण पृथ्वी पर आनंद एवं शाश्वत सुख का राज्य कायम करेगा; संपूर्ण जगत का जनमानस, सामान्य व विशेष गृहस्थ-जन सुख-शांति से रहेंगे, कवि खालसा पंथ से ऐसी अपेक्षा, आशा व उम्मीद रखता है :

गिरही ग्रिह मै सुख आनंद सो करि मंगल साज बजावहिंगे।
भल भाग भया तुम ताहि कहो गढ़ आनंद फेर बसावहिंगे।८३६।

ऐसे महान तेजस्वी, महान गुरदेव जी को बीसवें अध्याय में *"नमो नाथ नाथं अचरजं सरूपे। नमो सिशटि करता अनंतं बिभूते।"* बता कर कवि अपनी दृढ़ आस्था प्रकट करते हुए हमें भी निरंतर उसी परम ज्योति का चिंतन-मनन करने की प्रेरणा देता है :

काहू कै मात पिता सुत है अर काहू के भ्रात महा बल कारी।
काहू के मीत सखा हित साजन काहू के ग्रह बिराजत नारी।
काहू के धाम मह निधि राजत आपस मो करि है हित भारी।
होहु दइआल दइआ करि कै प्रभ गोबिंद जी मुहि टेक तिहारी।८१०।

"श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" कृत भाई संतोख सिंघ के अनुसार श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जीवन एवं व्यक्तित्व

*-स. कुलदीप सिंघ**

कवि चूड़ामणि भाई संतोख सिंघ ने अपनी संपूर्ण काव्य-यात्रा का उल्लेख करते हुए "नानक प्रकाश" और "श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" को मिलाकर दोनों ग्रंथों की संरचना पर प्रकाश डाला है। उन्होंने सतिगुरु की प्रेरणा से दस गुरु साहिबान का यश-गायन किया है। दोनों ग्रंथों में २२ प्रकरण हैं। श्री गुरु नानक देव जी की गाथा "नानक प्रकाश" के दो प्रकरणों में है, नवम पातशाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब तक की गाथा १२ राशियों में है तथा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की गाथा भवन (अयन) ८ प्रकरणों (६ रास और २ अयन) में है :

चाहत भए आप गुरु जब हूं।
भा संचय दस गुरु यश तब हूं।
पूरवारध उतरारध दोइ।
कथा बनी गुरु गुरु नानक सोइ ॥
बरणी द्वादश रास अगारी।
नवम गुरु लगि कथा सुधारी।
खट रितु युकत बने युग अयन।
स्री गुबिंद सिंघ गाथा अयन ॥
भए प्रकरण सरब जे बाई।
नौ रस ते पूरण सुकदाई।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के जीवन की मुख्य गाथा "श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" की छः रितुओं में वर्णित है जो गुरु जी की दसतारबंदी से आरंभ होकर पारिवारिक बलिदान तथा चमकौर के युद्ध के बाद ग्राम डल्ला के पास दीना कांगड़ में ज़फ़रनामा पत्र भेजने तक विस्तृत है। इसके बाद की जीवन-घटनाएं दो अयनों में दी गई हैं।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के गुरगद्दी पर आसीन होने से पूर्व के जीवन की की घटनाएं-जन्म लेना, बाल-जीवन तथा पंजाब पहुंचने का विवरण रास ११ एवं १२ में श्री गुरु तेग बहादर साहिब के जीवन के प्रसंगों में सम्मिलित है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के प्रति निष्ठा व्यक्त करते हुए कवि भाई संतोख सिंघ ने जन्म से पूर्व श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के मुख से माता नानकी जी को श्री गुरु तेग बहादर साहिब की गंभीरता के साथ-साथ होनहार पौत्र होने के वरदान का उल्लेख किया है :

--अजर जरन उर धीर धुरंधर।
इस मनिंद न अपर जग अंदर। . . .
इस को पुत्र होहि बलवंड।
तेज प्रचंड झुंड खल खंड ॥३०॥

(रास ८, अध्याय ४३)

--सहि सरीर पर बिघन अनेक।
तव सुत राखहि गुरता टेक।
पुन पौत्रा तुव हुइ गुर भारी।
सहहि कशट जे अनिक प्रकारी ॥४३॥

(रास ८, अध्याय ५५)

श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने त्रिवेणी (इलाहाबाद) पहुंचने से पूर्व के चार अध्यायों में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के जन्म की पृष्ठभूमि के रूप में प्रकृति-चित्रण है तथा गुरु जी की अकाल पुरख से विदाई का वर्णन है। अकाल पुरख से विदाई के समय गुरु जी ने आत्म-कथा में प्रभु के आदेश का वर्णन किया है : *"मैं*

**सी-२७, गुरु तेग बहादर नगर, इलाहाबाद (उ. प्र.)। फोन : ०५३२-२६५७९६९*

अपना सुत तोहि निवाजा ॥ पंथ प्रचुर करिबे को साजा ॥" कवि संतोख सिंघ ने इसका भाव-विस्तार किया है :

मम सुत तूं हैं मम सरूप ही,
पिता पुत्र महिं भेद न होइ।
धरम करहु बिदतावनि जग महिं,
तुझ बिन अपर समरथ न कोइ।
पुत्रादिक महिं रहिन अमोहं,
रिपुनि हतनि को आलस खोइ।
सिमरन सतिनाम परबिरतहु, छत्री पंथ उपजि है सोइ ॥२२॥ *(रास ११, अध्याय ५२)*

श्री गुरु तेग बहादर साहिब की पूर्व यात्रा का क्रम रास १२ के पहले ११ अध्यायों में दिया गया है। आसाम के राजा रतन राय ने संघर्ष त्याग कर गुरु जी की शरण ग्रहण की। आसाम-यात्रा के बाद अगले १० अध्यायों में दशम गुरु जी के जन्म सम्बंधी वर्णन के लिए कथा का केंद्र पटना साहिब बनाया गया है :

सोढी कुल भूखन जनम पूस मास महि लीन।
हुती सुदी थिति सपतमी सुंदर समैं सु चीन ॥१॥
(रास १२, अध्याय १३)

माता गुजरी जी तथा दादी माता नानकी जी दोनों प्रसन्न हैं। पंजाब के सूफी फकीर भीखण शाह को घुड़ाम नगर में रहते हुए गुरु जी के जन्म लेने का पता चलता है। वह अपनी आस्था के अनुसार गरीब-निवाज प्रभु-रूप बाल-गुरु जी के दर्शन करने आया। उसने अपने तरीके से गुरु जी की जिंदगी के भावी उद्देश्य को प्रकट किया कि "बाल सम्पूर्ण मानव जाति से प्रेम करने वाला होगा। वह एक नए पंथ को जन्म देगा। उसका वरदहस्त हिंदू और तुर्कों को समान रूप से शरण प्रदान करेगा।"

हिंदू तुरक रहै जग दोऊ।
उपजहि पंथ राज ले सोऊ ॥४१॥
जे इक पर निज हाथ धरंते।
जग महिं तौ नहिं तुरक रहंते।
(रास १२, अध्याय १६)

जन्म और भीखण शाह द्वारा गुरु-दर्शन के बाद पांच अध्यायों में कबित्त सवैया शैली में बाल-लीला, बाल-क्रीड़ा, नौका विहार तथा एक तरुणि को पुत्र वरदान के प्रसंग हैं। अंगों के रूप वर्णन में वीर रस, लोक जीवन तथा ऐश्वर्य की झलक है। भाई संतोख सिंघ ने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की बाल-लीला और बाल-चोज के संदर्भ में वात्सल्य रस का उदात्त रूप प्रस्तुत किया है जो कबित्त सवैयों के एक शतक के रूप में पठनीय है।

वात्सल्य रस की भूमिका के बाद श्री गुरु तेग बहादर साहिब की आसाम से वापसी, पटना होकर अनंदपुर साहिब पहुंचना तथा कशमीरी पंडितों के उत्पीड़न सम्बंधी वृत्तांत हैं, जिसका अवसान श्री गुरु तेग बहादर साहिब को दिल्ली में कैद में डाले जाने से होता है। गुरु जी का परिवार पटना में था। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की बाल सुलभ चंचलता, बौद्धिकता विचार की ओर मुड़ रही थी। उनका मन पंजाब लौटने का हुआ। कुछ दिनों बाद अनंदपुर साहिब से एक सिक्ख ने आकर पंजाब लौटने का संदेश दिया। गुरु जी का परिवार काशी-अयोध्या होकर भीखण शाह के ग्राम लखनौर पहुंच गया। वे लखनौर में भाई जेठा जी के पास रहे। दिल्ली से पुन: संदेश मिलने पर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी कीरतपुर साहिब होते हुए अनंदपुर साहिब पहुंचे।

रास १२ के अंतिम ९ अध्यायों में कथा-केंद्र पुन: श्री गुरु तेग बहादर साहिब के बलिदान पर केंद्रित होता है :

अबि सुनियहि दिल्ली पुरि गाथा।
रची गुरू जिम तुरकन साथा। . . . ३२॥
(रास ३१, अध्याय ६०)

बलिदान के पूर्व गुरगद्दी सम्बंधी आदेश

भेजा गया :

नौ तन महिं जो बरती जोति।
सुत महिं करी प्रवेश उदोत।
सिख सों हुकम करयो ले जईऐ।
अरपहु श्री गोबिंद गुर हईऐ ॥४२॥
(रास १२, अध्याय ६३)

"श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" की छः रितुओं के ३१२ अध्याय श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की जीवन-गाथा के मुख्य भाग को समर्पित हैं। प्रथम रितु के आरंभ में श्री गुरु तेग बहादर साहिब के शीश-संस्कार का वर्णन है। उसके बाद फाल्गुन मास के प्रथम पक्ष की पंचमी को दसतारबंदी का वर्णन है। इसके बाद गुरु जी की शादी का विस्तृत प्रसंग है। गुरु जी की शादी माता जीतो जी से २३ आषाढ़, संवत् १७३४ को हुई। बारात अनंदपुर साहिब के समीप बसाये गए गांव 'गुरू का लाहौर' गई।

गुरु जी की नित्य-क्रिया वीर-रसमयी थी। एक श्रद्धालु सिक्ख दुनीचंद सुंदर तंबू (शामियाना) काबुल से लाया। आसाम का राजा रतन चंद एक सुंदर हाथी लाया। स्थानीय शासक भीम चंद ने इन उपहारों को कपट से लेने का प्रयास किया। गुरु जी ने विवाद से बचने के लिए अनंदपुर साहिब से अन्यत्र प्रस्थान का विचार किया। नाहन के राजा मेदिनी प्रकाश ने गुरु जी को नाहन क्षेत्र में आने के लिए निमंत्रित किया। रणजीत नगारा बजाया गया और गुरु जी नीले घोड़े पर सवार हुए। गुरु जी ने राजा के साथ नाहन से पर्वतों के रमणीक दृश्य को देखा। यह प्रकाशवान नगरी भूषण पहने हुए सुंदर वेश वाली चतुर महिला के रूप में शोभा पा रही थी :

पुरी पहार सीस पै बिसाल शोभ पावही।
सु डीठ दूरि जाति है, महीरुहं सुहावही।
बसंति थोर थान मैं, महान है उजागरी।
विभूखणादि धारिबे सु बेसु बेसु नागरी ॥२०॥
(रितु १, अध्याय ४५)

यमुना तट पर गुरु जी ने वृक्षों की सघन छाया में पाउंटा साहिब स्थान को पसंद किया। श्रीनगर का राजा फतेह शाह भी मिलने आया। फतेह शाह और मेदिनी प्रकाश में मित्रता हो गई। गुरु जी ने निकटवर्ती क्षेत्र में शेर का शिकार तलवार से किया। पाउंटा साहिब में सढौरा का फकीर बुद्धू शाह गुरु जी से मिला।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के जीवन सम्बंधी द्वितीय रितु में रामराय के मसंदों को दंड देने का प्रसंग है। रामराय की पत्नी के अनुरोध से गुरु जी डेहरा (देहरादून) गए और मसंदों को दंडित किया। रितु २ का मुख्य प्रसंग भंगाणी का युद्ध है। यह युद्ध पाउंटा साहिब से १० किलोमीटर दूर भंगाणी गांव के नजदीक यमुना और गिरी नदी के बीच के स्थान पर हुआ। लड़ाई का मूल कारण कहिलूर (बिलासपुर) के राजा भीम चंद की हठधर्मितता थी। भीम चंद के लड़के की शादी फतेह शाह की बेटी से हो रही थी। गुरु जी ने फतेह शाह की बेटी को उपहार भेजा, जिस पर भीम चंद नाराज हो गया। फतह शाह को झुकना पड़ा और उसने गुरु जी पर चढ़ाई कर दी। इस युद्ध में गुरु जी की बूआ के पांच पुत्र, पीर बुद्धू शाह के भाई, पुत्र व अन्य सैनिक गुरु जी के साथ थे। बूआ के दो पुत्र संगो शाह और जीत मल शहीद हुए। बुद्धू शाह के दो पुत्र शहीद हुए। तीन दिन के युद्ध (१६-१८ वैसाख, सन् १६८९) में गुरु जी की विजय हुई। पीर बुद्धू शाह ने पुत्रों की शहीदी को ऊंचे मनोबल से स्वीकार करते हुए गुरु जी के धर्म-रक्षा के उद्देश्य के प्रति दृढ़ता दिखाई। गुरु जी ने करुणा से मानव-संवेदना दिखाई।

भंगाणी के युद्ध के बाद गुरु जी पुनः

अनंदपुर साहिब लौट आये। रास्ते में रायपुर ग्राम की रानी ने उनका सत्कार किया। रानी के पुत्र को गुरु जी ने केश रखने की हिदायत दी। अनंदपुर साहिब में १६९८ तक की अवधि की घटनाओं का वर्णन रितु २ में है। इसमें चार साहिबजादों के जन्म का उल्लेख है। इस अवधि में नादौण के युद्ध में अलफ खां परास्त हुआ।

रितु तीन में युद्ध के प्रसंगों से हटकर सामाजिक और धार्मिक संगठन को सुदृढ़ करने के प्रसंग है। आरंभ में देवी-पूजन के कर्मकांडों का वृत्तांत हैं। पर्यावरण में वृक्षारोपण सम्बंधी एक संदर्भ अध्याय ९ में है। पटना शहर से एक माली आम का पौधा लाया। गुरु जी ने उसके लगाने का स्थान निर्धारित किया :

सेवक ले करि संग सिधाए।
गड्यो तीर जहिं बान दिखाए।
तहां अरोपनि कीनसि माली।
प्रतिपाला पुन भई बिसाली ॥२७॥ (रितु ३:९)

धार्मिक संगठन में दसवंध लेने वाले मसंदों के गोलमाल (खोट) के शुद्धीकरण का संदर्भ (अध्याय १४-१६) भी महत्वपूर्ण है। एक गरीब सिक्ख ने हीरे का कंकण चेतो नाम के मसंद को दिया जो उसने गुरु जी को नहीं दिया तथा पूछने पर मना कर दिया। गुरु जी के निर्देश से छिपाये स्थान से वह कंकण (चूड़ा) प्राप्त किया गया। चेतो को सम्यक दंड दिया गया।

खालसा पंथ का सृजन सर्वविदित युगांतकारी घटना है। माता जीतो जी ने अमृत में मधुरता का संचार किया :

भलो भलो तूं चलि करि आई।
नीर बिखै पाई मधुराई।
नातुर पंथ होति बड क्रूरा।
तेज क्रोध कलहा करि पूरा ॥२५॥ (अध्याय १९)

गुरु जी ने पांच प्यारों से स्वयं भी अमृत ग्रहण किया :

खालसा गुरू है गुरू खालसा करौं मैं अबि,
जैसे गुरू नानक जी अंगद को कीनिओ।
शंक न करीजै सावधान होइ दीजै अबि,
अंम्रित छकावो मुहि जैसे तुम लीनीओ।
काल हूं को काल असिकेत है अकाल प्रभु,
दीरघ क्रिपाल यौं हुकम हमैं दीनिओ।
थापनि धरम कौ अथापनि भरम कौ,
कुकरम कौ खापन, सिमर नाम, चीतिओ ॥६॥
(रितु ३:२०)

खालसा पंथ के सृजन के बाद भाई संतोख सिंघ ने भाई नंद लाल जी के प्रसंग से वातावरण में उल्लास और उत्साह का संचार कर दिया है। गुरु जी की कृपा-दृष्टि से भाई नंद लाल जी का जीवन सार्थक हो गया :

क्रिपा द्रिशटि सों देखनि करयो।
भ्रम अगयान सु तिस परहरयो।
मोह महान नींद महिं सोवा।
जागति भयो गुरू रवि जोवा ॥३२॥
हाथ जोरि बोल्यो तिस काल।
'नानक नदरी नदरि निहाल ॥' (रितु ३:२४)

भाई नंद लाल जी के जीवन में बसंत की बहार आ गई। गुरु के प्रकाश से उनका जीवन प्रसन्नता से भर गया।

होली का फल इस दुनिया के बाग में खिल गया है। उसने ओठों को कली के समान पवित्र शुभ स्वभाव वाला कर दिया है। हर प्राणी के ओठ मुस्करा रहे हैं। गुलाब, अंबर, कसतूरी और अबीर की फुहार की चारों ओर वर्षा हो रही है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के हाथों से गुलाल उड़ाये जाने से जमीन और आसमान का रंग लाल हो रहा है :

गुले होली बबागे दहर ईं बिशगुफ्त।
लबे चूं गुंचह रा फरखुंदह खू करद।
गुलाबो अंबरो मुशको अबीरो।
चूं बारां बारशे अज सूबसू करद।

गुलाल अफशानीए दसते मुबारिक।
जमीनों आसमां रा सुरखरू करद।

रितु तीन के अंत में वैराग्यवान, गुरबाणी के द्वारा शुभ मति वाले जनों से गुरु की सांझ व्यक्त की गई है :

भाई साईंलोका! सुनीअहि।
गुर अरु सिख मैं भेव न जनीअहि ॥३१॥ . . .
जे बैरागवान जन भारे।
सभि के सांझे गुरू उदारे। *(रितु ३:५१)*

रितु तीन में खालसा पंथ के सृजन के बाद रितु चार में पुन: युद्धों का क्रम आरंभ होता है। दीना बेग और पैंदे खां के आक्रमण के समय पैंदे खां को गुरु जी ने स्वयं तलवार से मारा। पहाड़ी राजाओं ने मिलकर भीमचंद के पुत्र अजमेर चंद की अगुआई में पुन: युद्ध आरंभ किया। उसने लोहगढ़ किले के द्वार को तोड़ने का निश्चय किया। भाई बचित्तर सिंघ श्रद्धालु सिक्ख ने मस्त हाथी का सामना करने का संकल्प किया। उसके पास एक बरछा और नेजा था। गुरु जी द्वारा बख्शिश किया बरछा पाकर उसका बल और उत्साह बढ़ गया। बरछा मारने पर हाथी ने वंदना की :

बरछा लगति चिंघारयो दीरघ कुंचर सीस निवायो।
जनु गुरसिक्ख को बंदन ठान्यो मैं भूलयो इत आयो ॥४३॥ *(रितु ४:२६)*

पहाड़ी सेना का संचालक केसरी चंद भाई उदै सिंघ से द्वंद्व युद्ध में मारा गया। रितु चार में दूसरा युद्ध वजीर खां के आक्रमण से सम्बंधित है। गुरु जी के बाण से एक कोस दूरी पर वजीर खां के दो तोपचियों की मौत हो गई। पहाड़ी राजाओं ने वजीर खां का साथ दिया। बिसोली नगर के राजा ने गुरु जी का साथ दिया। विजय के उपरांत गुरु जी परिवार सहित बिसोली गए। बिसोली (भभौर) राजा के पास विश्राम किया। अनंदपुर साहिब लौटते समय कलमोट गांव के उपद्रवी लोगों का दमन किया।

सिक्खों का मार्गदर्शन और संतों का आदर गुरु जी के स्वाभाविक गुण थे। सिक्खों के मार्गदर्शन का उदाहरण पेशावर के सिक्ख भाई जोगा सिंघ के प्रसंग का है।

संत-सत्कार का उदाहरण माता गुजरी जी की संत-दर्शन की इच्छा से स्पष्ट होता है। "श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" के कथावाचक बाबा बुड्ढा जी के वंशज राम कुंअरि जी पधारते हैं। माता गुजरी जी श्रद्धा से सत्कार करती हैं।

रितु पांच के अंतर्गत विविध गौण प्रसंगों का समावेश है। पर्वतीय क्षेत्र के संदर्भ में गुरु जी मेले के समय रवालसर गये। रवाल मंडी का राजा था। गुरु जी ने उसे पुन: राज्य-प्राप्ति का आशीर्वाद दिया। रितु पांच के एक प्रसंग में वास्तविक निष्ठा और स्वार्थमयी कामना के अंतर को स्पष्ट किया गया है। उज्जैन का निष्ठावान सिक्ख विशंभरदास है और उसका पुत्र हरिगोपाल व्यवहार से बुद्धि वाला है। विशंभरदास ने हरिगोपाल को ५००/- रुपए गुरु जी को अर्पण करने हेतु भेजा। गुरु जी ने उसे प्रसाद रूप में लोहे का एक कड़ा दिया। धन के प्रीतिवान हरिगोपाल ने वह कड़ा एक श्रद्धावान सिक्ख को बेच दिया :

बनीएं ले धन मन हरिखायो।
नहिं जानति जड़ सकल गवायो ॥४४॥
(रितु ५:१२)

विशंभरदास ने परिवार सहित गुरु जी से क्षमा मांगी।

सामान्य प्रसंगों के बाद रितु पांच के दस अध्यायों (४१-५०) में आत्म-ज्ञान का विशद विवेचन किया गया है। यह विवेचन भाई दया सिंघ के माध्यम से दिया गया है। प्रथम पांच अध्यायों (४१-४५) में भारतीय दर्शन की सम्पूर्ण भूमिका बताई गई है। अध्याय ४५ की

अंतिम पांच चौपाइयों में सिक्ख गुरु साहिबान के स्वरूप और मार्गदर्शन को परिभाषित करने का प्रयास है।

गुरु साहिबान की एक श्रेणी केवल श्रुतियों की जानकारी रखती है। वे श्रोती गुरु दूसरों का कल्याण नहीं कर सकते। गुरुओं की दूसरी श्रेणी ब्रह्मनिष्ठ की है जो कृपा से दूसरों का कल्याण भी कर देते हैं। सिक्ख गुरु साहिबान का मार्गदर्शन का स्वरूप कवि चूड़ामणि श्रद्धापूर्ण रूप से दर्शाते हैं :

याते सुनहु खालसा श्रोन।
हमरे गुरू सकल गुन भौन।
श्रोती बहमनिषठी हितकारी।
करहिं क्रपा ते श्रेय हमारी ॥४२॥
इष्ट देव भी इही हमारे।
सतिगुर रूप प्रतापी भारे।
अहै जगतपति के अवतार।
चार पदारथ देति उदार ॥४३॥
इन की शरन न त्यागन जोग।
ग्रिहसत भोग महिं देते जोग।
निज करुणा बल ते कलिआन।
देति सिक्ख उर ब्रहम गिआन ॥४४॥
दस पतिशाह इसी बिधि भए।
कोटन सिक्ख उधारनि कए।
गुरू रूप है हरि अवतार।
तुम को प्रापत भए उदार ॥४५॥
भले भाग अपने मन जानों।
इन कौ संग सदा तुम ठानो।
तन मन अरपहु बनि करि दास।
जग सागर उबरहु अनयास ॥४६॥ (रितु ५:४५)

गुरु जी के द्वारा कैवल्य के तीन साधन हुक्म मानना, तनहंता (देह भावना-त्याग) तथा नाम-सिमरन को भाई दया सिंघ जी आत्मिक जीवन का आधार मानते हैं:

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के माहि।
भगति उपदेश अधिक अधिकाहि।
इक तौ सतिनाम को सिमरन।
लिव लगाइ, नहिं त्यागहि निस दिन ॥४०॥
दुतीए भाणा प्रभु का माने।
प्रभु क्रित ते उर हरख सु ठाने।
त्रितीए तनहंता को त्यागे।
तजि कूरे सच पर अनुरागे ॥४१॥
इन तीनहु मैं परपक होइ।
ब्रहम ग्यान अधिकारी सोइ।
फुरहिं चतुषटै साधन रिदै।
लखैं उचित उपदेशनि तदै ॥४२॥ (रितु ५:४६)

गुरमति के उक्त तीन साधन मनुष्य को ब्रह्मज्ञानी, गुरमुख का अधिकारी बनाते हैं। अध्याय के आरंभ में सिक्ख की परिभाषा साधन चतुष्टय के रूप में दी गई है। जिस व्यक्ति में विवेक, वैराग्य, ममुक्षा (मोक्ष-प्राप्ति की इच्छा) के तीन गुण हों और षट सम्पत्ति के अंतर्गत आने वाले छः गुणों का समूह हो, वह सिक्ख है। षट सम्पत्ति के छः गुण हैं--विषयों से मन को रोकना (शम), विषयों से इंद्रियों को रोकना (दम), विषय प्राप्त होने पर तृष्णा न होना (उपरति), शीत-उष्ण आदि दुखों को सहन करना (तितिक्षा), परमात्मा का ध्यान (समाधान) तथा गुरु-वचन पर सच्ची निष्ठा (श्रद्धा)। उसी सिक्ख का कल्याण होगा जो साधन चतुष्टय नौ गुणों को (खट सम्पत्ति के गुणों को पृथक-पृथक गणना करने पर) धारण करता है बाकी का शरीर दिखावा-मात्र है।

रितु पांच के अंत में गुरु जी के दरबारी कवियों के काव्य की बानगी दो अध्यायों में प्रस्तुत की गई है। खालसा पंथ की सृजना के बाद सिक्ख संगठन का प्रभाव बढ़ने लगा। पहाड़ी राजा अजमेर चंद ने गुरु जी के विरोध का हर संभव प्रयास किया। रितु ६ में गुरु जी के संघर्षमय ४ वर्षों की निर्णायक गाथा है।

१७०२ में सैयद बेग और अलफ खां को धनराशि देकर अनंदपुर साहिब पर आक्रमण करने की योजना बनाई गई। गुरु जी की अजमत से प्रभावित होकर सैयद बेग गुरु जी का सिक्ख बन गया। अलिफ खां भी लाचार हो वापिस चला गया।

पहाड़ी राजा फरियाद लेकर दक्षिण भारत में औरंगजेब के पास गोलकुंडा गये। वजीर कां नवाब सरहिंद तथा जबरदस्त खां सूबेदार लाहौर ने आक्रमण किया। सेना द्वारा अनंदगढ़ को घेरने का ओजपूर्ण वर्णन किया गया है। भाई गुरदास जी ने वार २५ की पउड़ी १५ में अन्यायी राजाओं की तुलना वर्षा की झड़ी से की है। लाखों अन्यायी राजाओं के सिरों को जला कर तवा गर्म होता है। भाई संतोख सिंघ ने गुरु जी की तोपों के मुंह की तुलना तवे से की है जिसमें गिरने के लिए वैरी की सेना समुद्र जल की तरह बढ़ रही थी :

गुरू तोप तवा पै परनि धाए जोर करि।
चल्यो दल आइ कैधों जल है समुद्र को ॥१८॥
(अध्याय ९)

इस युद्ध के चौथे दिन अनंदपुर साहिब से ढाई कोस की दूरी पर सिंबल पेड़ की छाया में बैठे सूबेदारों ने गुरु जी के तीरों को पहुंचते देखा। यह अजमत के बल से ही संभव था।

किले में घिराव के समय रसद समाप्त हो गई। माता जी और सिक्खों ने अनंदपुर साहिब छोड़ने का आग्रह किया। गुरु जी के मना करने पर ४० सिक्खों को छोड़कर बाकी ने बेदावा (गुरु जी से सम्बंध-विच्छेद) लिख दिया और अनंदपुर साहिब से चले गये।

वजीर खां तथा पहाड़ी राजाओं के द्वारा सुरक्षित प्रस्थान के आश्वासन के बाद गुरु जी ने किला अनंदगढ़ छोड़ा। शत्रुओं ने शपथ भूलकर पीछा किया। वीर उदै सिंघ शत्रुओं का संहार करता शहीद हो गया। अनंदपुर साहिब से प्रस्थान के बाद पुन: चमकौर की गढ़ी में संघर्ष जारी रहा। बाबा अजीत सिंघ और बाबा जुझार सिंघ दोनों बड़े साहिबजादे शहीद हुए। गुरु जी तीन सिक्खों (भाई दया सिंघ, भाई धरम सिंघ और भाई मान सिंघ) के साथ चमकौर से निकले, आगे सरसा नदी पार करते समय परिवार से बिछुड़ गए। गुरु जी माछीवाड़ा के दुर्गम मार्ग से होकर एक उद्यान में पहुंचे, जहां भाई गनी खां और भाई नबी खां ने सेवा की। तीन सिक्ख साथी भी आ गये। गुरु जी के लिए गुलाबे नाम के दर्जी ने सूफी पीर के वस्त्र बनाये। नूरपुर के श्रद्धालु सैयद ने भी स्थानीय नवाब के सामने गुरु जी की अजमत बयान की।

गुरु जी माछीवाड़ा के बाद रायकोट पहुंचे जो जगरावां तहसील का गांव है। रायकोट के श्रद्धालु भाई राय कल्हा ने गुरु जी का स्वागत किया। भाई कल्हा ने अपने सेवक माही को बिछुड़े परिवार का कुशल जानने को सरहिंद भेजा। लौट कर उसने गुरु जी के छोटे साहिबजादों की शहीदी का वृत्तांत सुनाया। भाई कल्हा को गुरु जी ने कृपाण बख्शी :

रिदै प्रसंन राइ बहु होवा।
सुंदर खड़ग बिकीमति जोवा।
राज तेज अर बंस उदारा।
आयहु राखनहारा हमारा ॥२१॥ (रितु ६:५३)

भाई राय कल्हा के पास १६ दिन रहकर गुरु जी दीना पहुंचे। दीना में "जफरनामा" (फारसी में औरंगजेब को संबोधित पत्र) लिखा और प्रेषित किया :

गुरु दसम पातिसाह की मैं कथा बनाई।
रुता खट पूरन करी शुभ गिरा अलाई ॥

गुरगद्दी से आरंभ करके श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के संघर्ष और खालसा पंथ के उत्कर्ष

की गाथा भाई संतोख सिंघ ने छ: रितुओं में विस्तार से प्रस्तुत की है। उसके बाद गुरु जी के जीवन के विविध पक्षों को उजागर करने के लिए दो अयनों में कथा को अलग केंद्र मानकर प्रस्तुत किया गया है।

संघर्ष की निरंतरता के संदर्भ में वजीर खां की अनुसरण करने की मुहिम खिदराणा के युद्ध के रूप में समाप्त होती है। गुरु जी कोटकपूरा होते हुए हरीके पत्तन होकर खिदराणे के पास एक तालाब के समीप पहुंचे। खिदराणे के युद्ध में वजीर खां ने सोचा कि उसने गुरु जी को मार लिया है। वह हर्ष व्यक्त करते हुए गुरु जी की वीरता का सम्पूर्ण विवरण चौधरी कपूरे से कहता है :

सो गुर अबहि मार करि लीन।
फते खुदाइ हमहुं को दीनि ॥३६॥ (ऐन १:११)

गुरु जी ने युद्ध में मारे गये सैनिकों को देखा। बेदावा लिखकर आने वाले सभी सिक्ख शहीद हो गये थे, केवल भाई महां सिंघ अभी जीवित था चाहे कि वह अंतिम श्वासों पर ही था। सतिगुरु उन सब की बहादुरी पर प्रसन्न थे। प्रसन्नता में उन्होंने भाई महां सिंघ को कुछ भी मांगने को कहा। भाई महां सिंघ ने खुद के समेत सभी को पुन: अपना सिक्ख बनाने का वरदान मांगा :

जो मुझ को दैबौ बर चहो।
टूटी मेल लेहुं, बच कहो ॥३१॥ (ऐन १:१२)

गुरु जी ने भाई महां सिंघ का अनुरोध स्वीकार किया :

वाहु खालसा सिख मम धंन।
परउपकारि महां मन मंन।
तेरे कहे मेल हम लए।
राज भाग तिस देशहिं दए ॥३३॥ (ऐन १:१२)

सिक्ख शहीदों (मुकतों) के नाम से 'खिदराणा' का नाम 'मुकतसर' प्रसिद्ध है। संघर्षमय जीवन के बाद गुरु जी ने तलवंडी साबो में ९ महीने (जनवरी १७, १७०६ से अक्तूबर ३०, १७०६) तक निवास किया। यह स्थान बठिंडा से २७ किलोमीटर दूर दक्षिण में है। हिंदू गूजर ने ४८ गांव जागीर में प्राप्त किये। चौधरी का पुत्र नहीं था, अत: साबो चौधरी बनी। डल्ला में पांच दिन निवास के बाद गुरु जी तलवंडी साबो पहुंचे थे। माता सुंदर कौर जी और माता साहिब कौर भी दिल्ली से तलवंडी पहुंचीं। तलवंडी साबो में भाई मनी सिंघ ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब की सम्पूर्ण बीड़ तैयार की।

दमदमा साहिब में निवास के समय रामा और तिलोका लंगर के लिए सामग्री लाये। रामा, रामा सिंघ के नाम से प्रसिद्ध है। उसके पुत्र स. आला सिंघ ने पटियाला नगर की नींव डाली। तिलोका, त्रिलोक सिंघ नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसका पुत्र स. सुखचैन सिंघ जींद रियासत का तथा स. गुरदित्त सिंघ नाभा रियासत का संस्थापक है। स. दया सिंघ ने रामा और तिलोका की कठिनाई को ध्यान से सुना :

दया सिंघ सुनि धीरज दीनि।
तुम तौ देश सकल ही लीनि ॥१३॥
ऐसे पाइ तुमारे जमैं।
भूपन भूप देश गन नमैं।
दिल्ली लवपुरि के विच वधो।
ग्राम हजारन ही कहु सधो ॥१४॥ . . .
मनहुं कामना पूरन भई।
दोनहुं कौ दसतार दु दई।
सपति दिवस गुर के ढिग रहे।
बर ले करि दरशन बर लहे। . . . १७॥
(ऐन १:२९)

गुरु जी ने दक्षिण भारत जाने का विचार राजस्थान के मार्ग से होकर निर्धारित किया। वे दादूद्वारा पहुंचे। वहां ज्वार की भाकुरी (रोटी) खाई, महंत का सत्कार किया तथा

अपना मत स्पष्ट किया :

धरहिं शसत्र सिमरहिं सतिनामू।
धरम धरहिं पहुंचहिं सुरधामू ॥२९॥
इस कारन ते पंथ उपायो।
दे आयुध रस बीर वधायो। *(ऐन १:३६)*

राजस्थान में दादूद्वारा से बघौर (उदयपुर रियासत) पहुंचे। वहां उन्हें औरंगजेब की मृत्यु का समाचार मिला। भाई नंद लाल जी ने बहादुर शाह की सहायता का निवेदन किया। गुरु जी ने प्रस्ताव स्वीकार किया। धौलपुर के निकट जाजउ में बहादुर शाह का युद्ध तारा आजम से हुआ। आजम युद्ध में मारा गया। उसके माथे पर तीर लगे थे। बहादुर शाह ने उन तीरों को संभाल कर रखा :

देखति तीर भाल निकसाए।
जो कंचन ते लिपत सुहाए।
सो निज निकट संभारन करे।
हेतु परखबे किन परहरे ॥४३॥ *(ऐन १:४२)*

वह तीर गुरु जी द्वारा चलाये गए थे। गुरु जी दिल्ली मोतीबाग पहुंचे। गुरु जी ने नवम गुरु के संस्कार-स्थान को देखा और वहां गुरुद्वारा-निर्माण का विचार रखा। बहादुर शाह ने गुरु जी को आगरा आने का निमंत्रण दिया। आगरा पहुंचने पर गुरु जी का सम्मान किया गया। गुरु जी ने बादशाह के हमराह हैदराबाद जाना भी स्वीकार किया। गुरु जी ने बादशाह को सहायता करते समय यह वचन लिया था कि वह सरहिंद के नवाब को गुरु जी को सौंपेगा, जिसका पालन वह नहीं कर पाया। गुरु जी ने बाबा बंदा सिंघ बहादर के विषय में भविष्यवाणी की :

अब इक ऐसो सिक्ख बनावौं।
जग महिं दे करि तेज बधावौं ॥३४॥ . . .
पुरि अरु ग्राम देश गन जेते।
उठहिं उपद्रव नाशहि तेते।
आदि सिरहंद बसहि समुदाया।
करहि उजार लूटहि नर घाया ॥३७॥
(ऐन १:५१)

"श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ" के अंतिम प्रकरण अयन दो में दशम गुरु जी की बुरहानपुर, नागपुर होकर नांदेड़-यात्रा का वर्णन है। ग्रंथ का आरंभ सिक्ख राज के उत्कर्ष काल से हुआ था, किंतु ग्रंथ-समाप्ति के समय पंजाब में महाराजा रणजीत सिंघ के उत्तराधिकारी षड़यंत्रों में लीन थे। भाई संतोख सिंघ की रचना पर भी तत्कालीन समाज की अधोगति का प्रभाव पड़ा। गुरु जी ने बाबा बंदा सिंघ बहादर के सामने समस्या रखी :

तूं बताउ कहु कैसे करना।
मिलहु कि नहीं शत्रुगन हरना? *(ऐन २:५)*

बाबा बंदा सिंघ बहादर ने निवेदन किया:

बोल्यो साध, आप हो मालक।
तुमरा बंदा करौं न आलक ॥३७॥
हुइ रावरि आइसु अनुसारी।
करौं जंग भंगौं रिपु भारी। *(ऐन २:५)*

गुरु जी ने हंसकर कहा, "हमारा तुम्हारे लिए निर्देश है कि तुम में असंभव को संभव करने की सामर्थ्य है।"

सावधान होवहु धरि धीरा।
लिहु पलोटा सांभहु पंच तीरा।
बाबा इह बिनोद सिंघ भारी।
तिन सुत काहन सिंघ बल धारी ॥३५॥
बाज सिंघ तीसर हुइ संग।
हम कर ते अंम्रित ले अंग।
रिदे शुद्ध घालहिं घमसाना।
तुम सहाइता करहिं महाना ॥३६॥ *(ऐन २:६)*

गुरु जी को गुल खां नामक पठान की तलवार से जख्म हुआ। उन्हें परलोक-गमन का समय निकट आने का अनुभव हुआ और गुरु जी परलोक गमन कर गए।

"पंथ प्रकाश" कृत ज्ञानी गिआन सिंघ में
दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का नूरानी जीवन-परिचय

*-डॉ. मनजीत कौर**

साहिबे-कमाल, अमृत के दाते, सरबंसदानी, महान योद्धा, ५२ विद्वान कवियों के संरक्षक, दार्शनिक, संत-सिपाही, अनेक शास्त्रों के ज्ञाता, 'आपे गुर चेला' की अद्वितीय मिसाल, कलगीधर पातशाह ने इतनी शक्तियों के मालिक होते हुए भी संसार में अमन व शांति कायम करने हेतु मानवतावादी दृष्टिकोण को सर्वोपरि जानते हुए जो परिपाटी चलाई उसकी मिसाल दुनिया में नहीं मिलती।

"पंथ प्रकाश" में ज्ञानी गिआन सिंघ ने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के नूरानी जीवन-वृत्तांत को बड़ी श्रद्धा-भावना से ब्रज भाषा की कोमल-कांत शैली में पृष्ठ १७१ से ३४४ तक विस्तारपूर्वक वर्णन किया है।

संक्षिप्त जीवन-परिचय : ज्ञानी जी ने गुरु पातशाह के नूरानी जीवन का वर्णन 'दोहिरा' में इस प्रकार प्रारंभ किया है कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के चरण-कमलों को हृदय में बसाकर उनकी जीवन-गाथा का वर्णन करता हूं जो चारों फल प्रदान करने वाली है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब के गृह में माता गुजरी जी की पावन कोख से १७२३ पौष माह की सप्तमी को गुरु जी ने पटना साहिब में जन्म लिया। ज्ञानी जी के काव्यानुसार :

स्री गुर गोबिंद सिंघ के चरन कवल उरधार।
अब उनकी गाथा कहो जो दाइक फल चार।१।
(पृष्ठ १७१)

आलौकिक बाल-लीला : आगे ज्ञानी जी ने बाल गोबिंद राय जी की विस्मयकारी बाल लीलाओं का वर्णन मनोरम शैली में किया है कि किस प्रकार सब बाल गोबिंद राय जी की लीला को देखकर आश्चर्यचकित होते। कभी गंगा किनारे खेलने जाते, गांव के बच्चों को साथ ले जाकर दो टोलियां बनाते, उनके हाथों में निर्मित शस्त्र पकड़ाते, आपस में युद्ध करवाते। यह सब देख सभी हैरान रह जाते (और कहते) कि रवि और चंद्रमा इनके नूर से प्रकाशवान हैं। इनके समक्ष आने की किसी में हिम्मत न होती:

लीला बालक पन मैं जोई।
करत अलोकक रहे अतोई। . . .
हक्के बक्के रहित अपारे।
रविसस दिपत इनो की जोत। . . .
इत्यादिक बातैं जन करहीं।
बंदन कहत दूर तै डरहीं।४।

पटना साहिब में और भी कई लोग गुरु जी के मुरीद हो गए। राजा मैणी की मनोकामना पूर्ण करने हेतु गुरु जी उसके घर गए और रानी की गोद में जा विराजे। रानी ने अति श्रद्धा-भावना से गदगद होकर सेवकों को मिठाई लाने का आदेश दिया। गुरु जी बोले, मंदिर में जो चने और पूड़ी रखी हैं, माई, हमें वही दे दो। गुरु जी को अंतरयामी जानकर रानी निहाल हो गई और प्रसाद गुरु जी के समक्ष रखा, शेष साथ आए बालकों में बांट दिया। इसी बीच फतेहचंद दर्शनार्थ आया। अनेक तरह की भेंट गुरु-चरणों में रखी। राजा और रानी

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, मो: ९९२९७-६२५२३*

गुरु जी के सेवक बन गए। जब तक बाल गोबिंद राय जी पटना में रहे, हर रोज वहां जाते और चने तथा पूड़ी का प्रसाद छकते। जब रानी ने पुत्र-प्राप्ति हेतु आशीर्वाद मांगा तो गुरु जी ने वचन किया कि मुझे ही अपना पुत्र जानो :

इक दिन उन मन ऐस विचारा।
जे इहु गुरू राम अवतारा। . . .
परचे गुर के पेख सिताब।
भयो मुरीद करीम बखस है। . . .
आप गए गुर तांहि निकेतैं।
बैठे जाइ तिसी की गोदैं। . . .
बोले प्रभु जो मंदर अंदर।
चणे तले युत पूरी सुंदर। . . .
इक दिन दासी बिनै सुनाई।
इक सुत बखसो रानी तांईं। . . .
मैणी गोत हुते तिन केरों।
संगत मैणी भई उजेरों। (पृष्ठ १७२-१७४)

इस प्रकार सवा पहर रात्रि व्यतीत होने पर गुरु जी नित्यप्रति प्रसाद ग्रहण करके आते। आज तक वहां यही मर्यादा चली आ रही है।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब का परिवार को अनंदपुर साहिब बुलवाना : आगे ज्ञानी जी ने श्री गुरु तेग बहादर साहिब द्वारा पत्र भेज कर श्री गुरु गोबिंद राय जी को सपरिवार अनंदपुर साहिब बुलाने तथा यह खबर सुनकर वहां की संगत की व्याकुलता का वर्णन करते हुए गुरु साहिब द्वारा उनकी आशंका का निवारण करके उन्हें ज्ञान दृढ़ करवाने का जिक्र किया है :

स्री गुरु तेग बहादर जी की चिट्ठी पहुंची तब लौ। . . .
गिआन दिढाइ करयो निर संसे सतगुर सबके तांई। (पृष्ठ १७५)

आगे ज्ञानी जी ने गुरु साहिब का काशी पहुंचने तथा मार्ग में संगत का दर्शनार्थ आने एवं प्रसन्नतापूर्वक भेंट लाने का वर्णन किया है। वहां से चलकर गुरु साहिब मथुरा-वृंदावन गए। रास्ते में लोगों का उद्धार करते हुए हरिद्वार पहुंचे। वहां लोगों से मुगलों के जुल्म का वृत्तांत सुनकर वचन किया कि जल्दी ही इनकी जड़ें उखड़ जायेंगी। यह वचन सुन आर्य प्रसन्न हृदय से अपने घरों को गए।

वहां कुछ समय ठहर लखनौर के निकट अंबाला पहुंचे। गुरु जी के पिता श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने यहां संदेश भिजवाया कि जब तक हम बुलावा न भेजें तब तक यहीं निवास करो। इसी स्थान पर भीखन शाह ने गुरु जी की शक्ति देखी। इसी स्थान पर गुरु जी ने कुआं खुदवाया जो मीठे जल के कारण अभी तक विख्यात है और बहुत संगत यहां जुड़ती है। ज्ञानी जी ने इस सारे घटनाक्रम को इस प्रकार कलमबद्ध किया है :

पटने ते चल सने सने पुन उतरे कांशी आई। . . .
गुरमुख भए अनंत नारि नर सरधा धरकरभारी। . . .
तहितै चल मथ्रा ब्रिंद्राबन सैलअनकथा लीआ। . . .
जुलम पठानो के उन ते सुन बचन करिओ गुर ऐहै।
इक अपणे बंदे तै इनका तला मूल उखड़ है। . . .
मान हुकम निज पिता गुरू का रहे प्रभ तिस ठौरैं। . . .
है अब लौ परसिद्ध तहां ही मानत सिक्ख बिसाला।१०। (पृष्ठ १७५-१७७)

पिता जी की आज्ञा पाकर अनंदपुर साहिब आगमन : बाल गोबिंद राय जी के अनंदपुर साहिब पहुंचने पर पिता श्री गुरु तेग बहादर साहिब के आदेश से संगत सत्कारपूर्वक उन्हें लेने आई और उनके दर्शन करके निहाल हुई। बाल

गोबिंद राय जी के ईश्वरीय रूप को देख सब भावविभोर हो उठते।

आगे सवैया में बाल गोबिंद राय जी के तेजस्वी एवं मनमोहक रूप का वर्णन रूपक एवं उपमा अलंकार के माध्यम से बहुत ही मनोरम शैली में किया गया है :

अलकैं झलकैं अहि छौननसी पलकै खलकै वस वल्ले करें। . . .
हरता मद कंजन खंजनके म्रिग मीनन की छब छीन करैं। . . .
गुर बोलन तै सु कपोलन तै छबके समगंग तरंग उठैं।७। (पृष्ठ १७९-१८०)

ज्ञानी जी ने आगे चौपई में भी गुरु साहिब के आकर्षक व्यक्तित्व एवं पराक्रमी मीरी-पीरी स्वरूप के सामंजस्य को बहुत ही सुंदर शैली में अभिव्यक्ति दी है। ऐसे अद्वितीय गुणों, यश, पराक्रम के मालिक के समक्ष कोई नहीं ठहर सकता था। चहुं ओर गुरु जी की कीर्ति फैल गई। एक आदमी ने श्री गुरु तेग बहादर साहिब के समक्ष करबद्ध विनती की कि मैं बाल गोबिंद राय जी से अपनी कन्या की सगाई करना चाहता हूं। गुरु पातशाह ने उनकी विनम्रता को देखते हुए सहजता से यह रिश्ता स्वीकार कर लिया। तत्काल दशम गुरु जी की झोली में शगुन डाल दिया गया। उस व्यक्ति की पत्नी बोली, "जब गुरु साहिब लाहौर हमारी कन्या से विवाह करने आएंगे तो वहां के लोग इनके दर्शन करके निहाल हो जायेंगे।"

अधर बिंब बिंद्रम ते सूचे। . . .
बलथाती छाती भलभांती। . . .
मीरी पीरी ताबे जांही। . . .
पिख निंम्रिता सरल सुभाए। . . .
दसम गुरू की झोली पावा। . . .
जनम लाभ फल चारो पैहैं।८। (पृष्ठ १८०-१८२)

गुरु जी का विवाह (नए लाहौर शहर की रचना) : ज्ञानी जी के चिंतनानुसार संवत् १७३० में २३ आषाढ़ को शादी होना निश्चित हुआ। लाहौर में लोगों को दर्शन देकर निहाल करने हेतु जब विनती की गई तो गुरु जी ने वहां जाने से इंकार कर दिया और साथ ही उन्हें आश्वासन दिया कि आपके लिए यहीं 'लाहौर' की रचना कर देंगे। उत्तर दिशा में ७ कोस दूर गुरु साहिब ने सुंदन नगर 'लाहौर' की रचना करवा दी। वहीं विवाह की तैयारियां शुरू हो गईं। दोनों घरों में चहल-पहल हो गई। ज्ञानी जी ने इसका बहुत ही बारीकी से वर्णन किया है जिसे पढ़कर सारा दृश्य आंखों के सामने रूपमान हो उठता है तथा संगीत की मधुर धुनें कानों को रसान्वित करती हुई प्रतीत होती हैं। प्रतीत होता है मानो ज्ञानी गिआन सिंघ साक्षात वहां मौजूद रहे हों। वाकई कवि की दृष्टि अति सूक्ष्म होती है--"जहां न पहुंचे रवि, वहां पहुंचे कवि।"

गुरगद्दी पर विराजमान होना : नौवें गुरु के बलिदान के पश्चात जब श्री गुरु गोबिंद राय जी गुरगद्दी पर विराजे उसी दिन से औरंगजेब रोगग्रस्त हो गया; किसी भी हिंदू का वह जबरन धर्म न बदलवा सका। गुरु साहिब उस समय किशोरावस्था में थे लेकिन प्रवीण नीतिवेत्ता थे। राजा दीपचंद का देहांत हो गया तथा उसका पुत्र भीमचंद गद्दी पर बैठा। वह गुरु जी से ईर्ष्या करने लगा। वह गुरु जी की शक्ति और तेज देखकर बौखला गया। आगे ज्ञानी जी ने धनी और उदार सौदागर दुनीचंद का गुरु-घर में भेंटें लेकर आने का वर्णन किया है, जिसे गुरु-कृपा एवं आशीर्वाद से वृद्धावस्था में पुत्र-रत्नों की प्राप्ति हुई थी :

जप तप वारो हुतो बखिआतै। . . .

दुनीचंद सिख हुतो सुदागर। . . .
उनका जब तिंह मोल पवायो। . . .
लाइओ तंबू मध मैदानैं। . . .
सिरो पाउ दै करे बिदाई।३। (पृष्ठ १८९-१९०)

राजा रत्न राय का भेंट लेकर गुरु जी के दर्शनार्थ आना : नवम् गुरु के आशीर्वाद से जन्मे रत्न राय को जब अपनी माता से सम्पूर्ण वार्ता का ज्ञान हुआ तो वह अनेक बेशकीमती तोहफे लेकर गुरु जी के दर्शनार्थ आया। सफेद माथे वाला (परसादी) हाथी, पांच कला शस्त्र, चंदन की चौकी आदि अनेक वस्तुएं गुरु जी को भेंट कीं। आगे ज्ञानी जी ने बिशन सिंघ राजा द्वारा पांच घोड़े, गहने, कलगी आदि अनेक कीमती सामान लाने का जिक्र भी किया है।

इसके आगे ज्ञानी जी ने गुरु जी की शोभा सुनकर पहाड़ी राजाओं के गुरु जी के दर्शनार्थ आने एवं वैसाखी पर अमूल्य भेंटें लाने का वर्णन करने के साथ यह भी स्पष्ट किया है कि पहाड़ी राजे किस प्रकार गुरु-दरबार की अद्भुत शोभा देखकर आश्चर्यचकित रह गए।

भीमचंद की दुष्टता : कहिलूर का राजा भीमचंद जो गुरु-घर की इतनी शोभा देखकर रातों की नींद खो बैठा था, उसकी छाती पर ईर्ष्या के सांप लोटने लगे। ज्ञानी जी लिखते हैं कि भीमचंद बदनीयति से ये बहुमूल्य उपहार गुरु-घर से किसी तरीके से लेना चाहता था लेकिन उसके खोटे इरादों को अंतरयामी गुरु जी जान गए। जो परसादी हाथी वगैरह वो अपने बेटे की सगाई का बहाना बनाकर हथियाना चाहता था, उसे गुरु साहिब ने संगत की प्यार भरी भेंट कहकर देने से इंकार कर दिया। भीमचंद ईर्ष्या-द्वेष से आग-बबूला होकर युद्ध के लिये ललकारने लगा:

भीम चंद कहिलूर पती को अन्य नींद नहि रूचे। . . .
हमको मंगी दीजै सतगुर फिर वापस कर दैहैं। . . .
साफ जवाब टका सा मंत्री लै न्रिप को जा दीआ। . . .
किले चार अनंदगढ़ आदिक इसी साल बनवाए।७। (पृष्ठ १९३-१९४)

नाहन के राजा का निमंत्रण : राजा भीमचंद की युद्ध करने की तैयारी को देखते हुए नाहन के राजा मेदनी प्रकाश नाहन ने इस युद्ध को रोकने हेतु गुरु साहिब को अदब-सत्कार से अपने राज्य में चरण डालने हेतु निमंत्रित किया। मेदनी प्रकाश ने दसों दिशाओं में चिट्ठियां भेज दीं। दोनों में गुरु-कृपा से सुलह हो गई। जिन पर गुरु की कृपा हो जाए उनका लोक-परलोक सफल हो जाता है। यहीं यमुना तट पर गुरु साहिब ने सुंदर शहर 'पाउंटा साहिब' बसाया :

नाहण मैं जाकर रचे नग्र पाउंटा जैस। . . .
न्रिप की मदद हेत सबोधा। . . .
सेवक दोवें गुरके भए। . . .
नगर बसाइओ पाउंटा जमना तट सुभ ठीक।८।
(पृष्ठ १९४-१९६)

पाउंटा-निवास तथा सेना की भर्ती : यहां गुरु साहिब का प्रताप सुन दूर-दूर से अनेक सिक्ख-संगत भेंट लेकर गुरु-दर्शनार्थ आने लगी। गुरु जी ने शत्रुओं के बचाव हेतु कई हिंदू-मुसलमान जवान सेना में भर्ती करने आरंभ कर दिए। सैयद पीर बुद्धू शाह ने भी अपने समेत चार सौ पठानों को गुरु जी की सेवा में भर्ती करवा दिया। (अधिकतर इतिहासकारों ने पांच सौ की सेना का जिक्र किया है।) यहीं से गुरु जी शिकार खेलने जाते, अनेक राजाओं के साथ शेर का शिकार

करते। गुरु साहिब की शक्ति बढ़ती देख अनेक राजा गुरु जी की शरण में आ गए। राजा फतेह शाह और मेदनी प्रकाश में यहीं पर गुरु जी ने संधि करवाई। इस तरह हजारों की तादाद में सेना भर्ती हो गई :

भूप मेदनी प्रकाश परजा लगाइ खास, . . .
बुदधू शाहि पीर हुतो सय्यद सढोरो धीर मेली . . .
लैके गुरू संग मौज आगे जुटे जाइकै।१४।
(पृष्ठ १९६-१९७)

भंगाणी का युद्ध एवं गुरु साहिब की विजय: आगे ज्ञानी जी ने फतेह शाह की गुरु साहिब पर चढ़ाई करना एवं अनेक पठान नौकरों की गद्दारी, उदासी साधुओं का मैदान छोड़ जाना आदि का वर्णन करने के साथ पीर बुद्धू शाह का पुन: अपने दो पुत्र, भाई और हजार शिष्य लेकर गुरु जी की शरण में आने, घमासान युद्ध करने, दुश्मनों का मैदान छोड़कर भागने आदि का प्रभावपूर्ण व ओजस्वी शैली में वर्णन किया है। राजा हरीचंद और गुरु साहिब के बीच भयानक युद्ध हुआ। अंत में गुरु साहिब की जीत हुई। १७४३ में गुरु जी पुन: पाउंटा साहिब आ विराजे। यहीं पर पीर बुद्धू शाह की वीरता, धैर्य एवं श्रद्धापूर्वक की गई सेवा पर प्रसन्न हो पीर बुद्धू शाह पर बख्शिश की, उसे केश सहित कंघा प्रदान किया। इसी विजय की खुशी में महान समारोह करवाया और शूरवीरों को मान-सम्मान, आशीर्वाद बख्शे:

इक भीम ससि कहिलूरीआ गोलेरीआ गोपाल। . . .
इत्यादि राजे मिल दिराजे राजपूत बनैत। . . .
इह्हु सार सुनके शाहि बुद्धू अयो लै मोरीद। . . .
हरी चंद भूप कोपयो आइ रण पाउ रोपयो, . . .
जीत जंग पुन पांउटे आए साथ बहीर। . . .
जथा जोग खुशि सब करे लोग गुरू परबीन।२७।
(पृष्ठ १९८-२००)

साहिबजादा अजीत सिंघ का जन्म : गुरु साहिब ने पाउंटा साहिब में ठहराव के समय बाणी की रचना की। इसके पश्चात गुरु साहिब अनंदपुर साहिब वापिस आ विराजे। इसी वर्ष साहिबजादे का जन्म हुआ। भंगाणी का जंग जीतने की खुशी में गुरु जी ने साहिबजादे का नाम 'अजीत सिंघ' रखा:

बाणी सुखदानी रची है जो ग्रंथ मझार।२८। . . .
जंग जीतने कर रखयो नाम गुरू अजीत।३०।
(पृष्ठ २००)

खालसा पंथ की सृजना : खालसा पंथ की सृजना परमात्मा की मौज और समय की मांग थी। ज्ञानी गिआन सिंघ ने इस तथ्य को "पंथ प्रकाश" में स्पष्ट करते हुए लिखा है कि एक दिन संगत ने आकर गुरु जी के चरणों में विनती की कि तुर्क हमें बहुत दुखी करते हैं, आपके समक्ष लाने वाली भेंट भी हमसे छीन लेते हैं, स्वयं को बड़े और हमें तुच्छ प्राणी समझ कर हमारा अपमान करते हैं। गुरु साहिब ने उनकी मनोव्यथा को समझ कर ऐलान कर दिया कि हिंदू और इसलाम दोनों से न्यारा पंथ 'खालसा' बनाया जाए।

देश-विदेश से आई संगत के समक्ष गुरु साहिब ने पांच सिरों की मांग की। बिजली-सी चमकती तलवार देख सब भयभीत हो गए। गुरु जी ने तीन बार ललकारा। पांच-जने बारी-बारी से उठे, जिन्हें गुरु साहिब अंदर ले गए। रक्त से सनी तलवार देखकर सभा में हाहाकार मच गई। मसंदों ने माता जी के समक्ष जाकर शिकायत की तथा अनेक सिक्ख बहाने बनाकर वहां से खिसक गए। इसके पश्चात गुरु जी पांचों सिक्खों को शस्त्र-वस्त्र से सुसज्जित कर बाहर ले आए :

संगत देस बदेसी आई। . . .

पांच सीस सिक्खन के हमै। . . .
दया सिंघ तब ठाढा थीओ। . . .
हाहाकार सभा मैं माचयो। . . .
कच्चे सिक्ख जे हुते कितांने। . . .
कलगी जिगा समान निज अपना रूप बनाइ।१३।
(पृष्ठ २२६-२२९)

गुरु जी ने लोहे के बाटे में जल डालकर बाणियों का पाठ करना प्रारंभ किया। माता जीतो जी ने उसमें बताशे मिलाए। अमृत का बाटा तैयार किया। गुरु जी ने वचन किया कि यह मिठास अमृत में बहुत जरूरी थी। पांच तैयार सिक्खों को अमृत-पान कराकर पांच ककारों की महत्ता और साथ ही कुरहितों (वर्जनीय कार्य) के बारे में समझा कर पांचों सिंघों की उपमा की :

सभा बीच सतगुर लै आए। . . .
गुर सिखन मैं धरम अपारा। . . .
बैसाखी संक्रांत निहाल। . . .
वाहिगुरू मंत्र मुख भाखो। . . .
फिर अंम्रित की कर अरदास। . . .
एहो पांच ककार धरैहै। . . .
पुन उन पांचों की वडिआई।
आप गुरू या बिधि फरमाई।१६। (पृष्ठ २२९-२३३)

आगे ज्ञानी जी ने पांच प्यारों के नाम, जाति एवं जन्म-स्थान का जिक्र करते हुए स्पष्ट किया है कि एक ही बाटे से अमृत-पान करके उनकी कुल, जाति सब उसी में विलीन हो गई। गुरु साहिब ने आदेश किया कि खालसा पंथ दूर-दूर तक फैले। गुरु-वचन से उनके द्वारा खालसा पंथ में वृद्धि हुई।

ज्ञानी जी ने खालसा-सृजना के उपरांत प्रश्नोत्तरी शैली में खालसा पंथ द्वारा पूछे प्रश्नों के उत्तर गुरु साहिब द्वारा देकर समस्त ककारों का महत्व दर्शाया है तथा जिज्ञासु-मन के प्रश्नों का सहज समाधान किया गया है और अकाल उसतति, जापु साहिब बाणी में एक अकाल पुरख की पूजा दृढ़ करवाई गई है आदि का विस्तार से वर्णन किया गया है।

मसंदों की बदनीयति की पोल खुलना : आगे ज्ञानी जी ने अनंदपुर मेले में दूर-दूर से संगत के गुरु-दर्शनार्थ आने एवं ढाढियों द्वारा वीर रस की वारें गायन कर संगत में वीरता का संचार करना और गुरु साहिब द्वारा उन्हें मनवांछित फल देने का वर्णन करते हुए मसंदों की करतूतों का भी उल्लेख किया है। पेशावर, मुलतान, मालवा आदि से आई संगत ने मसंदों द्वारा किये जोर-जुल्म और बदसलूकियों का दुखांत वर्णन गुरु जी के समक्ष पेश किया। गंभीरतापूर्वक ये सब कारनामे सुनकर गुरु जी शांत रहे, तत्पश्चात स्वांगियों ने स्वांग धार कर उनकी काली करतूतों का पर्दाफॉश किया, जिसे देख-सुनकर गुरु साहिब के नेत्र नम हो गए। "ये लोग आपका नाम लेकर सिक्खों को प्रताड़ित करते हैं और मनवांछित वस्तु न मिलने पर श्राप देते हैं तथा कीमती सामान जोर-जबरदस्ती से छीन लेते हैं।

इस प्रकार मसंदों के घरों की तलाशी ली गई। चोर और मक्कार मसंदों के सिरों में गुरु-आदेश से गर्म तेल डाल कर पाप का समूल नाश किया गया। साथ ही गुरु साहिब ने निर्भीक होकर उन मसंदों की पोल खोलने वालों की पीठ थपथपाई।

पहाड़ी राजाओं को उपदेश : दीपावली के अवसर पर गुरु साहिब ने चारों वर्णों के लोगों, पहाड़ी राजाओं को निमंत्रण भेजे। जब गुरु जी ने उन्हें अमृत-पान करने को कहा तब राजाओं ने प्रत्युत्तर में कहा कि "हम श्रेष्ठ क्षत्रिय वर्ण, ऊंची कुल वाले हैं। हम शूद्रों के साथ मिलकर

शूद्र क्यों बनें?" गुरु साहिब ने समझाया कि "परमेश्वर को तो भक्त प्यारे हैं। जाति-भेद का यह अभिमान तुम्हें ले डूबेगा। आज जिन्हें तुम शूद्र कह रहे हो एक दिन उन्हीं से भीख मांगोगे।" उस समारोह में आए समस्त राजाओं को स्नेहपूर्वक समझाया कि तुर्कों ने हिंदुओं को भेड़ समझ रखा है, इसलिए इनमें वीर-रस का संचार करके, अमृत-पान करवा कर इन्हें 'सिंघ' सजाना है, ताकि ये वीरतापूर्वक उनका मुकाबला कर सकें।

हुसैनी युद्ध (तुर्कों से टक्कर) : ज्ञानी गिआन सिंघ ने इस युद्ध का वर्णन विलक्षण ढंग से किया है। यहां उनकी व्यंग्यात्मक शैली दृष्टव्य है कि मेघ के बिना किसान क्या करे? अगर चंद्रमा ही न निकले तो चकोर कहां जाए? पतंग पवन के बिना कैसे उड़े? अगर बैल ही हार कर खड़े हो जाएं तो बैलगाड़ी कैसे चले? बिना राजा के सेना कैसे जीत सकती है? ऐसे कई उदाहरणों से ज्ञानी जी ने तुर्कों की हार की कहानी को बहुत सुंदर शब्दावली में अभिव्यक्ति दी है। इसके विपरीत सिक्खों ने प्राणों की परवाह न करके गुरु साहिब की खुशी लेने हेतु गुरु जी की अगुवाई में धर्म-युद्ध लड़े और जीत हासिल की। इसके पश्चात ज्ञानी जी ने राजपूतों की चढ़ाई, पैंदे खां से युद्ध और इसमें गुरु साहिब के जख्मी होने आदि का भी वर्णन किया है। साथ ही सैद खान श्रद्धावत गुरु जी के दीदार करके, उन्हें वली मान कर, अपना दीन छोड़कर हमेशा के लिए गुरु जी का हो गया। साथ ही गुरु साहिब की विजय और तुर्कों द्वारा अनंदपुर साहिब से की लूटपाट का भी वर्णन है :

तब सैद बेग धर गुरू धिआन। . . .
गुर हम कर दयो इनाम वेस।४५।
पैंदे खान पठान इक बध कर बोलयो आन। . . .
भेजयो था पातशाहि ने जो कर वड मुखतयार।४६।
जस गुर का था उन बहु सुनिओ। . . .
आप बजिनस खुदाइ महान। . . .
सैद खान का हाल पिख होए तुरक हिरान। . . .
फेर पुकार कहयो सरदारन आपनी सैन मझार तबै है। . . .
सिंघ लौट गुर डिग अए तुरक गए दिस शाहि।४६। (पृष्ठ २६२-२६५)

गुरु-महिमा का वर्णन : आगे ज्ञानी जी ने गुरु नानक साहिब की उपमा करते हुए उनकी गद्दी पर विराजमान दशम गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की महिमा का गायन किया है कि किस प्रकार गुरु जी ने एक न्यारे पंथ की सृजना की। गुरु पातशाह की कीर्ति चारों दिशाओं में फैल गई। फलतः औरंगजेब के जुल्मों की चर्चा भी गुरु साहिब तक पहुंची। अनंदपुर साहिब को घेर लिया गया। इससे आगे घमासान युद्ध का वर्णन किया गया है :

गुर नानक इक भयो फकीररु। . . .
तिस गादी पर दसमी ठौरैं। . . .
नाम खालसा तिसका धरयो। . . .
तुम को झूठे शाहि बतावै। . . .
दस हजार सरहंदो धाया। . . .
लाखैं नर मिल मिल बिनु देरी।५।
दोहिरा
चार दिसन तै आइ कर घेरयो पुर आनंद।
खान पान लौ वसतु सभ करी चुफेरयों बंद।६।
(पृष्ठ २६६-२६८)

सिक्खों का गुरु जी को बेदावा लिखना : युद्ध के दौरान बनी गंभीर परिस्थितियों में जब अंदर किले में खाने को कुछ भी शेष न रहा तो बाहर से रसद-पानी बंद हो गया। सिक्खों ने माता जी से विनती की कि अनंदपुर साहिब

छोड़ देना चाहिए। माता जी ने गुरु साहिब को समझाया। गुरु जी ने आठ दिन की मोहलत मांगी लेकिन सिक्ख हताश हो चुके थे। वे वहां पल भर भी नहीं ठहरना चाहते थे। आखिर में वे गुरु जी को बेदावा लिख कर दे आए कि आज से हम आपके सिक्ख नहीं। उस सम्पूर्ण मार्मिक प्रसंग का वर्णन ज्ञानी जी ने बहुत ही भावभीनी शब्दावली में किया है। जो सिक्ख वहां शेष रह गए उन्हें गुरु जी ने आशीर्वाद बख्शे और वचन किए :

धन्य सिख धंन तुमरी सिक्खी।
लाज रखी जिन खंडयं तिक्खी।३७।
(पृष्ठ २६९-२७४)

आगे ज्ञानी जी ने चमकौर साहिब की गढ़ी के युद्ध से पूर्व सरसा नदी पर हुये परिवार विछोड़े का वर्णन भी किया है। उस विपदा की घड़ी में सारा परिवार एवं प्यारे सिक्ख बिछुड़ गए। सरसा नदी में कितना ही कीमती सामान, धार्मिक साहित्य बह गया :

तज अनंद पुर जयों परै बिपति जंग चमकौर। . . .
गुर असथांन साधु इक तांई। . . .
पुसतक सकटिओ वीच पवाए। . . .
आगे सरसा नदि चढ आयो। . . .
सिदक सिंघन के परखन हेतैं। . . .
परी बिपत्ती ऐस तब को कर सकै बखान।
चितवन तै छतीआ फटै कहि नहि सकत जबान।७।
(पृष्ठ २७५-२७६)

जब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी इन्हीं विकट परिस्थितियों में रोपड़ नगर पहुंचे तो वहां के लोगों ने गुरु साहिब को नगर में प्रवेश न करने दिया। गुरु साहिब कोटले की ओर गए। वहां पठानों ने आदर-सत्कार दिया, योग्य स्थान पर ठहराया। वहीं चमकौर में युद्ध की तैयारी हेतु स्थान नियत हुआ। पीछे से शत्रु सेना भी पहुंच गई। उस सारे दृष्टांत को ज्ञानी जी ने काव्यबद्ध किया है :

इह कुछ अचरज भयो न नयो। . . .
अर महंमद आदि पगंबर। . . .
नगर वासीअन बड़न न दए। . . .
सतगुर गए कोटले ओरैं। . . .
एक नगर चमकौर मझारा। . . .
पीछे सैना सत्रन आई।८। (पृष्ठ २७६-२७७)

चमकौर की गढ़ी में युद्ध : आगे ज्ञानी जी ने गढ़ी में हुए घमासान युद्ध का वर्णन ओजस्वी शैली में किया है। एक-एक सिक्ख अनेकों दुश्मनों को मौत के घाट उतारता हुआ शहीदी पा गया। इस युद्ध में गुरु साहिब के दोनों बड़े साहिबजादे गुरु जी से आशीष लेकर युद्ध-भूमि में शत्रुओं के छक्के छुड़ाने आ गए। दोनों ने दुश्मनों को सिंघ-नाद कर ललकारा। युद्ध के नगाड़े बज उठे। घमासान युद्ध हुआ। लाशों पर लाशें बिछ गईं। हिरनों के झुंड में मानो सिंघ की गर्जना हुई। शत्रु सेना की लाशों के ढेर लग गए। वैरियों के बड़े-बड़े पहलवानों का घमंड बाबा अजीत सिंघ जी व बाबा जुझार सिंघ जी ने चूर-चूर कर दिया। ताहिर बेग, खान सैयद आदि स्वयं को तीस मार खां समझने वालों को मलियामेट कर दिया। अंत में वीरतापूर्वक लाखों मुगलों को मौत के घाट उतार दोनों साहिबजादे शहीदी का अमर जाम पी गए :

नाहर खान मलेरी हुतो इक बीर भली अफगान करारा। . . .
यौ सुन कै गुर आन कहिओ अफगान बनो सवधान इहांही। . . .
हुते गुरू के जुगल सुत तहिठां तब गुर साथ। . . .
गुर बालक बालक रूप अनूपम अंगन पेख अनंग सुलाजै। . . .
कीन दुफार पुकार परी रण वाहि रे वाहि रे

सिंघ पिआरे।२१। . . .
नट्ट समान झटापट कट्ट दटा दट सट्ट धरा पर डारे।२२। . . .
मिरगिंद गजिंद बरिंदन जयों तुरकिंदन पै तिम सिंघ पुजे।२७। . . .
लुथ पै चढाई लुथ कीने बहु तुथ मुथ . . .
दौर हल्ला कूकत अवल्ला सिंघ खयाली है।३०। . . .
सिंघ अजीत अभीत जुझार हरी बल धार अपार न छाटैं। . . .

उपरोक्त युद्ध-वर्णन के उपरांत ज्ञानी जी ने चमकौर की घटना का वर्णन किया है। गुरु साहिब पांच सिक्खों के विनती भरे आदेश पर गढ़ी को छोड़कर बाहर निकले। गुरु साहिब का माछीवाड़े जाने एवं फिर राय कल्हा के पास जाने का भी जिक्र है।

गुरु-घर के रसोइये गंगू का विश्वासघात तथा छोटे साहिबजादों की शहीदी : सरसा नदी पर जब परिवार विछोड़ा हुआ तब माता गुजरी जी एवं दोनों छोटे साहिबजादों को गुरु-घर का रसोइया खेड़ी गांव का गंगू माता जी के पास धन-दौलत देखकर अविलंब उन्हें अपने घर ले गया। धन-दौलत के लालच में अकृतघ्न पापी ने माता जी की गहनों की पोटली चुरा ली। जब माता जी ने उससे पूछा तो 'उलटा चोर कोतवाल को डांटे' के अनुसार वो माता जी से झगड़ने लगा। उसने जाकर तुर्कों को माता जी एवं छोटे साहिबजादों की घर में होने की खबर दे दी। गंगू से खबर पाकर वजीर खान ने छोटे साहिबजादों तथा माता गुजरी जी को कई दिन तक कैद में रखकर शहीद करवा दिया। इस सारी शहीदी घटना का विस्तृत वर्णन ज्ञानी जी ने किया है। जिसका वर्णन यहां संकते मात्र ही हो सकता है।

आगे ज्ञानी गिआन सिंघ ने मुकतसर की जंग की जीत का हवाला देते हुए गुरु साहिब द्वारा दीना गांव में फारसी में औरंगजेब को 'जफरनामा' (जीत की चिट्ठी) लिखने का वर्णन किया है जिसमें जुल्मी औरंगजेब की करतूतों के अलावा उसको विश्वासघाती तथा कुरान की झूठी कसमें खाने वाला आदि कहकर अपना रोष प्रकट किया, साथ ही अपनी जीत का श्रेय अकाल पुरख को देते हुए अकाल पुरख की स्तुति की है। यह 'जफरनामा' भाई दया सिंघ जी के हाथ औरंगजेब को भिजवाया जिसे पढ़कर औरंगजेब तड़प उठा :

तब दीने नाम ग्राम मांहि।
गुर थिर हकाइता लिखी चाहि। . . .
गुरु उपालंभ बहु लिखे आप। . . .
जब दया सिंघ ने दयो जाइ।
पढ़ औरंग तरफ्यो दूख पाइ। (पृष्ठ ३०३)

इसके पश्चात गुरु साहिब ने दमदमा साहिब में लंबा समय ठहराव किया तथा श्री आदि ग्रंथ साहिब की बीड़ सम्पूर्ण करने के बाद दक्षिण दिशा में जा विराजे। चारों दिशाओं से संगत गुरु-दर्शनार्थ आने लगी। बाणी-कीर्तन के प्रवाह चलने लगे। संगत गुरु साहिब को गुरबाणी सुनाकर मनवांछित फलों की प्राप्ति करने लगी।

बाबा बंदा सिंघ बहादर से भेंट : ज्ञानी जी ने इस वृत्तांत को अपने चिंतनानुसार इस तरह अभिव्यक्त किया है कि बलशाली माधोदास बैरागी के डेरे गुरु साहिब पहुंचे। गुरु साहिब के चरणों में वो श्रद्धावश नत्मस्तक हुआ तब गुरु जी ने उसे स्नेहपूर्वक समझाया और पूर्व में किए समस्त अपराधों के लिए क्षमा किया। गुरु साहिब ने उसे अमृत-पान करवा कर 'सिंघ' सजा 'बंदा सिंघ बहादर' बना दिया। गुरु जी ने उसके सामने मुगलों द्वारा किए अत्याचारों का जिक्र किया। गुरु साहिब ने पांच तीर और पांच सिंघ

देकर उसे पंजाब रवाना किया। बाबा बंदा सिंघ बहादर ने वैरियों के छक्के छुड़ा दिए, ईंट का जवाब पत्थर से दिया:

तबै साधु मन मै ठटिओ जे इहु है समराथ।
तौ हम को दरशन दिवै परतक्ख हुइ रघुनाथ।२३। . . .
गुर आगया उन सिर धर मानी। . . .
फते जंग की तुमको ऐहै। . . .
तोरयो गुरू धिआइ भयो शांति।३०।

(पृष्ठ ३३९-३४४)

अंत में ज्ञानी जी ने गुरु साहिब के अबिचल नगर नांदेड़ में आगमन तथा श्री गुरु ग्रंथ साहिब को गुरतागद्दी सौंपने एवं ज्योति-जोत समाने का वर्णन अत्यंत श्रद्धापूर्वक किया है।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के खालसा को पावन आदेश एवं ज्योति-जोत समाना : गुरु जी ने माता साहिब कौर जी को दिल्ली जाने का आदेश दिया और खालसे की अगुवाई करने को कहा। भाई मनी सिंघ जी आदि कुछ सिक्खों को माता जी के साथ भेजा। कुछ दिन बाद गुरु साहिब पर गुल खान ने कटार से हमला कर दिया। उस दुष्ट के गुरु जी ने टुकड़े-टुकड़े कर दिए। गुरु साहिब का जख्म ठीक हो गया और बाद में किसी कारणवश पुन: जख्म हरा हो गया। संगत ने फरियाद की कि गुरु साहिब! हमें किसके भरोसे छोड़ कर जा रहे हो?" तब गुरु साहिब ने आदेश दिया :

आगिआ भई अकाल की तबै चलायो पंथ।
सब सिक्खन को हुकम है गुरू मानीओ ग्रंथ।

(पृष्ठ ३५३)

गुरु पातशाह का नूरानी जीवन पढ़-सुन कर अपना जीवन सफल करने का संदेश देते हुए ज्ञानी गिआन सिंघ ने अत्यंत श्रद्धाभाव से गुरु-चरणों में नतमस्तक होकर दशमेश पिता को श्रद्धा-सुमन अर्पित किए हैं :

हरि गिआन गाई प्रेम से लिव गुरू पग मै धार है।
जो पढै सरधा सहित सुन है चार फल सो पाइ है।
जस गुरू को रट बंदना ठट भयो पूरन ध्याइ है।१४।

इति स्री गुरु पंथ प्रकाशे गिआन सिंघ विरचिते अबचल नगर गुरू का जोती जोत वरननं नाम चालीसमो निवास:।४०। (पृष्ठ ३५८)

अनुरोध

'गुरमति ज्ञान' सिक्ख इतिहास तथा गुरबाणी में दर्ज शिक्षाओं द्वारा मानव समाज का मार्गदर्शन करती धार्मिक पत्रिका है। गुरबाणी के सम्मान को मुख्य रखते हुए 'गुरमति ज्ञान' के पाठक साहिबान से अनुरोध है कि वे 'गुरमति ज्ञान' को पढ़ने के बाद इसे न तो रद्दी में बेचें तथा न ही ऐसी जगह पर रखें जहां इसकी उचित संभाल न हो सके। पत्रिका को यदि घर में संभालकर रखने की उचित व्यवस्था न हो तो पढ़ने के बाद इसे किसी मित्र, रिश्तेदार आदि को दे दें अथवा किसी गुरुद्वारा साहिबान या पुस्तकालय में पहुंचा दें।

-संपादक।

"History of the Sikhs" कृत कनिंघम में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जीवन-व्यक्तित्व

*-प्रो सुरिंदर कौर**

आम लोग इतिहास पढ़ते या सुनते हैं, विद्वान इतिहास की खोज कर उसे लिखते हैं। बहुत कम मनुष्य ऐसे होते हैं जो इतिहास बनाते हैं, पर वे विरले ही होते हैं जो अपने जीवन, मरण और विचारधारा द्वारा सदियों की ऐतिहासिक धारा को बदल देते हैं। ऐसे पुरुष 'युगपुरुष' कहलाते हैं। इतिहास में सदियों बाद ऐसा युगपुरुष जन्म लेता है। सिक्ख गुरु साहिबान भी इसी पद पर सुशोभित हैं। हरेक ने अपने समय में अनुपम कार्य किया है। श्री गुरु नानक देव जी व श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को युगपुरुष मानने से कोई इंकार नहीं कर सकता। श्री गुरु नानक देव जी इसलिए कि उन्होंने निर्भीकता से अपने समय के प्रचलित धर्मों में धर्म के नाम पर प्रचलित बुराइयों का खंडन कर एक नवीन परिकल्पना के साथ सर्वगुण संपन्न एक नए धर्म की नींव रखी जिसने केवल इतिहास ही नहीं, सारे देश की तकदीर भी बदल दी; भय व पीड़ा से मुक्त एक स्वाभिमानी जीवन का संकल्प दिया। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का हर कदम बेजोड़ है, बेमिसाल है, अपने आप में एकमात्र है। चाहे खालसा-सृजना हो, पुत्रों का बलिदान हो या श्री गुरु ग्रंथ साहिब को गुरतागद्दी सौंपना हो, ऐसे महान युगपुरुष के लिए पंजाब की धरती अथवा लोक-मानसिकता ने बड़ा ही सुंदर शब्द दिया है--"मरद अगंमड़ा", जो युगपुरुष को ही व्याख्यायित करता है। ऐसे अनुपम व्यक्ति के लिए भाई गुरदास सिंघ जी के इन शब्दों से उपयुक्त अन्य उपमा क्या होगी?

वह प्रगटिओ मरद अगंमड़ा वरीआम इकेला।
वाह वाह गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला ॥
(वार ४१:१७)

ऐसे लासानी व्यक्तित्व के लिए कुछ कहने, सुनने, लिखने-पढ़ने से अधिक महत्वपूर्ण है उसे समझना, उसका अनुभव करना। इतिहासकारों ने अपनी समझ, सामर्थ्य, दृष्टिकोण व उपलब्ध-स्रोतों के आधार पर उन्हें चित्रित किया है। विशेषांकों की इस लड़ी द्वारा विभिन्न इतिहासकारों द्वारा प्रस्तुत की गई गुरु साहिबान की छवि को उकेरने का प्रयास किया जा रहा है। यह उसी शृंखला की अंतिम कड़ी है जहां कनिंघम द्वारा लिखित पुस्तक "History of the Sikhs" के आधार पर दशमेश पिता के व्यक्तित्व को समझने का प्रयास किया जा रहा है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी पर कनिंघम ने बहुत विस्तार से लिखा है और उनके जीवन के सभी महत्वपूर्ण पहलुओं को उभारने का प्रयास किया है। उन्होंने बहुत कुछ अपने पूर्व अंग्रेज इतिहासकारों के दस्तावेजों से प्राप्त किया और कुछ सामग्री मुगल दरबारी कातिबों के रोजनामचों से प्राप्त की। कहीं-कहीं उन्होंने जनश्रुतियों का भी आधार लिया है। इतिहास कुछ स्थानों पर पथभ्रष्ट कर देता है। इसलिए प्रमाणित स्रोतों के आधार पर कनिंघम द्वारा लिखित इतिहास को समीक्षा के उपरांत यहां प्रस्तुत किया जा

R.No. 2, Banta Singh Chawl, Opp. Manish Park, Jija Mata Marg, Pump House, Andheri (E), Mumbai-400093, Mob. 8097310773

रहा है:-

गुरतागद्दी और समकालीन परिस्थितियां : गुरु साहिब के जन्म के विषय में कनिंघम ने लिखा है कि उनका जन्म सन् १६६१ में पटना साहिब में हुआ था। जन्म-स्थान तो ठीक है परंतु जन्म-तिथि सही नहीं है। उन्हें यह तिथि कहीं से भी नहीं मिली थी, अत: उन्होंने अन्य दस्तावेजों में गुरुता के समय वर्णित गुरु साहिब की भूमिका से अनुमान लगाया कि उनकी आयु उस समय १४-१५ वर्ष रही होगी, जिससे गणना करने पर उन्हें यह जन्म-तिथि मिली। पाठकों के ज्ञान के लिए बता देना आवश्यक है कि गुरु साहिब का जन्म सन् १६६६ में दिसंबर के अंतिम दिनों में हुआ था (पौष सुदी सप्तमी, १७२३ वि. संवत्)। उनके बचपन के विषय में कनिंघम ने कुछ भी नहीं लिखा है। वैसे अपने जीवन के आरंभिक साढ़े तीन-चार साल गुरु साहिब ने पटना में व्यतीत किए। इसके पश्चात वे अपने पिता श्री गुरु तेग बहादर साहिब के बुलावे पर गुजरी जी के साथ अनंदपुर साहिब आ गए, जहां उनकी शिक्षा-दीक्षा का विशेष प्रबंध किया गया। उन्होंने बचपन में युद्ध-कला के प्रति विशेष रुचि दर्शाते हुए अपने हमजोलियों के साथ लड़ाइयों वाले खेल खेले।

कनिंघम लिखता है कि "अपने पिता की निर्मम हत्या (शहादत) के बाद (श्री गुरु) गोबिंद (सिंघ जी) बहुत व्यथित हुए। अभी वे आयु में बहुत छोटे थे और 'गुरु' का दायित्व बहुत बड़ा। अपने पिता की आज्ञा अनुसार वे गुरतागद्दी पर विराजमान हुए, जिससे सिक्खों में तो थोड़ा ढांढस बंधा, परंतु सरकार सतर्क हो गई। वह उम्मीद कर रही थी कि इस हत्या (शहादत) की प्रतिक्रिया अवश्य तीखी होगी। (श्री गुरु) गोबिंद (सिंघ जी) ने अपने पिता के क्षत-विक्षत शव का संस्कार पूरे सम्मान से किया।" (पृष्ठ ५९)

जिन परिस्थितियों में श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहादत हुई थी वे स्पष्ट रूप से औरंगजेब की धर्मांध नीतियों की ओर इशारा कर रही थी। हिंदू धर्म को समाप्त करने के लिए उसने जो-जो कठोर कदम उठाए उनका विवरण पाठक श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहादत के प्रसंग में पढ़ चुके हैं। यह सच है कि गुरु साहिब की शहादत से हिंदू धर्म तत्कालीन विकट समस्या से बच गया परंतु औरंगजेब इतनी आसानी से हार मानने वाला नहीं था। वह वैसे भी नित्य नये तरीकों से विधर्मियों का दमन करता रहता था, साथ ही अब उसने सीधे तौर पर इसलाम या मौत वाली नीति को छोड़कर दूसरी लचीली नीतियां अपनाईं। पहले वाली नीति निश्चित तौर पर आम लोगों को आतंकित करने में बहुत सफल हुई थी, परंतु ऐसा करने से दमित वर्ग को विरोध या प्रतिकार का सीधा कारण मिल जाता है।

जब धर्म खतरे में दिखाई दिया तो कौम एकजुट होने लगी जो भविष्य के लिए खतरा था। दूसरा, अत्याचार के विरुद्ध प्राय: कोई न कोई निडरता से संघर्ष के लिए सामने आता है और आवश्यकता पड़ी तो अपना बलिदान भी देता है। इतिहास में ऐसा कई बार हो चुका है और ऐसा बलिदान करने वाला व्यक्ति 'लोक नायक' बन जाता है। जनता सीधे उसके आदर्शों के नेतृत्व में जागृत और एकजुट हो जाती है। जन-जागृति और एकता ही अंतत: अत्याचार व अत्याचारी का पतन सुनिश्चित कर देती है। औरंगजेब की सीधे अत्याचार की नीति ने हिंदू जाति को बचाव के उपायों को खोजते हुए एकजुट कर दिया था। यह बात

और है कि उस समय उन्हें अपने धर्म में कोई योग्य नेतृत्व नहीं मिला और श्री गुरु तेग बहादर साहिब को उनकी रक्षा हेतु अपने सिक्खों समेत लासानी शहादत देनी पड़ी। इस शहादत ने जनता के समक्ष एक महानायक को उभार दिया था और नायक का यशगान व अनुसरण तो जनता सदियों से करती आ रही थी। औरंगजेब की इस नीति ने देश-कौम को संघर्ष करने का सशक्त कारण दे दिया था।

इसलिए अब उसने अप्रत्यक्ष नीति को अपनाते हुए विधर्मियों की संस्कृति, रहन-सहन व आर्थिक हालातों पर कठोरता अपनाई; संगीत पर पाबंदी लगा दी गई, भारतीय भाषाओं में शिक्षण और संचार के स्थान पर फारसी को अनिवार्य किया। भारतीय वेशभूषा, खान-पान, रहन-सहन सभी को इसलामी रंग में रंगा जाने लगा। यह छुपा हुआ वार था जिसे आम जनता सहजता से पहचान नहीं सकी। ऐसा करते हुए उसने प्रत्यक्ष रूप से थोड़ी शांति का प्रदर्शन भी किया। दूसरी तरफ वह राजनैतिक उलझनों में भी बहुत व्यस्त था। आए दिन किसी न किसी राज में बगावत होती रहती, उसकी सलतनत के कई राजा आपस में भी लड़ते रहते। औरंगजेब ऐसी मुहिमों पर अब ज्यादा ध्यान दे रहा था, इसलिए गुरतागद्दी के बाद के कुछ साल श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को सिक्ख पंथ के संगठन और धार्मिक उत्थान के लिए समय मिल गया। फिर भी वे पूरी तरह सतर्क ही रहे। पहाड़ी राजे भी औरंगजेब की व्यस्तता देखकर सिर उठा रहे थे। वैसे वे औरंगजेब के विरुद्ध नहीं थे, वे जाति-अभिमानी तो केंद्र-सत्ता से बल प्राप्त कर अपने ही देशवासियों पर अत्याचार कर रहे थे। उन्हीं के धर्म को बचाने के लिए श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने इतनी महान शहादत दी थी मगर आज वे ही लोग उसी के सपुत्र के वैरी हो गए।

धर्म-प्रचार व साहित्य-रचना : गुरु साहिब को 'युगपुरुष' यूं ही श्रद्धावश नहीं कहा जाता, जो आया ही संसार के उद्धार के लिए हो, जिसकी आंखें अपने समय से बहुत आगे देख रही हों और जिसकी आत्मा सदा अपने प्रीतम प्रभु में लीन हो, उसके लिए आयु कोई मायने नहीं रखती। गुरतागद्दी संभालते ही उन्होंने वर्तमान से सावधान होकर भविष्य के लिए तैयारियां आरंभ कर दीं। वे जानते थे कि अब क्रांतिकारी परिवर्तन और कठोर संघर्ष का दौर आरंभ होने वाला है। उन्होंने नौजवान पीढ़ी को शस्त्र-विद्या, घुड़सवारी, शिकार और युद्ध-कला का प्रोत्साहन देते हुए अनंदपुर साहिब में प्रशिक्षण की विशेष व्यवस्था की। नित्यप्रति सतिसंग में भी नाम-बाणी के अभ्यास के साथ वीर-रसी वातावरण तैयार किया जाने लगा। संगत को भेंट में अन्य सामग्री के स्थान पर शस्त्र और घोड़े आदि लाने का आदेश दिया गया। प्रशिक्षण के साथ-साथ उन्होंने इनके प्रदर्शन व मुकाबलों का भी प्रबंध किया जिससे युद्ध-कला को और मांजा-संवारा जा सके। संगत में वीर-रस के संचार हेतु 'होला महल्ला' का आयोजन अनंदपुर साहिब में आरंभ किया जो आज तक यथावत् जारी है। आस-पास के क्षेत्रों में शस्त्रों के उत्पादन हेतु कारखाने बनाए गए। देश भर से माहिर कारीगरों को नियुक्त किया गया। इन सभी प्रयासों ने कौम में नई रूह फूंक दी, आत्मविश्वास भर दिया। अब पंथ हर कठिनाई का सामना करने को तैयार था।

कनिंघम लिखता है कि "गुरु साहिब बहुत साहसी, संगठनात्मक और आशावादी स्वभाव वाले थे, परंतु उन्होंने कभी तानाशाही रवैया

नहीं अपनाया। उनकी दृष्टि में लोगों के मन बहुत अशुद्ध हो चुके थे, संसार में सामाजिक और आत्मिक पतन हो रहा था। इस पर शासकों के अत्याचारों ने मानवीय जीवन को दूभर कर दिया था। उन्होंने यह समझ लिया था कि लोगों में ऊर्जा और आत्मविश्वास की पुनर्जागृति के लिए फिर किसी रहबर को अपनी जान पर खेल कर उठ खड़ा होना होगा।" (पृष्ठ ६१)

गुरतागद्दी के बाद गुरु साहिब ने पंजाब व आस-पास के क्षेत्रों में बहुत-सी प्रचार-यात्राएं कीं। सन् १६८५ में उन्होंने नाहन में यमुना के तट पर एक नगर बसाया। गुरु साहिब की चरण-छोह के कारण ही उस स्थान का नाम 'पाउंटा साहिब' रखा गया। इसी स्थान पर गुरु साहिब ने बहुत सारी बाणी की रचना की, जिसमें जापु साहिब, ३३ सवैये, अकाल उसतति आदि प्रमुख हैं। इसी स्थान पर सन् १६८७ में साहिबजादा अजीत सिंघ का जन्म हुआ।

एक ओर जहां आम संगत गुरु साहिब के इस क्षेत्र में मौजूद होने से हर्षित थी वहीं पहाड़ी राजे उनसे द्वेष की भावना रखते थे। इन सभी में कहिलूर का राजा भीमचंद अग्रणी था। उन्हें गुरु-घर द्वारा जात-पात का विरोध, सांझा लंगर, नगारे (रणजीत नगारा) आदि का प्रयोग हिंदू धर्म पर प्रहार की भांति लगते थे। अत: वे सभी आपस में गुरु साहिब के विरुद्ध एकजुट होने लगे। भीमचंद के बेटे की शादी के समय ही उन्होंने गुरु साहिब पर हमले की योजना बनाई थी, परंतु गुरु साहिब की सूझ-बूझ और दूरंदेशी सोच के कारण वह प्रसंग ठीक-ठाक निकल गया। इस बात से गुरु साहिब सचेत हो गए और उन्होंने युद्ध की तैयारियां आरंभ कर दीं। वास्तव में इस युद्ध का कारण गुरु साहिब की कोई नीति नहीं थी जैसा कि कनिंघम को रोजनामचों से उल्लेख मिला, वरन् इसका मूल कारण पहाड़ी राजाओं को ब्राह्मणों का प्रोत्साहन और औरंगजेब की शह थी। लेख में अधिक विस्तार की आशंका के कारण विस्तृत वर्णन कर पाना कठिन है, केवल पाठकों को इतना बता देना आवश्यक है कि अप्रैल सन् १६८७ में भंगाणी के मैदान में गुरु साहिब की कमान में सिक्ख फौज का सामना पहाड़ी राजाओं की मिलीजुली फौज से हुआ जिनमें चंबा, कहिलूर, मंडी, किश्तवाड़, सुकेत, हंडूरा, जसवाल, भंभौर, कुटलोड़, नूरपुर, गढ़वाल, चंदौर आदि शामिल थे। नि:संदेह गुरु साहिब द्वारा लड़े गए पहले युद्ध में जीत सिक्खों की ही हुई, जिसका वर्णन गुरु साहिब ने 'बचित्र नाटक' में भी किया है। पहाड़ी राजाओं को मिली हार उनके लिए असहनीय थी। इस हार ने भविष्य के लिए कड़वाहटों की नींव रखी जो इतिहास में बहुत लंबी चली। दूसरी ओर इस युद्ध में जीत के कारण सिक्खों के हौंसले और भी बुलंद हो गए। वे अपने गुरु के लिए अब किसी भी हद तक जा सकते थे। गुरु साहिब अनंदपुर साहिब लौट आए, कुछ समय शांति बनी रही, पर पहाड़ी राजाओं ने इस बीच दिल्ली की हकूमत तक शिकायत पहुंचा दी। औरंगजेब को और क्या चाहिए था? उसने पहाड़ी राजाओं को हर प्रकार की सहायता का आश्वासन दिया। वह स्वयं मराठों की बगावत को कुचलने के लिए दक्षिण गया हुआ था, जहां उसने अपने जीवन के अंतिम २५ वर्ष बिताए।

खालसा-सृजना : गुरु साहिब को भविष्य की बहुत अच्छी समझ थी। उन्होंने अनंदपुर साहिब लौटकर कुछ किले बनवाने शुरू किये जो भविष्य में काम आ सकें। अनंदगढ़, निरमोहगढ़,

लोहगढ़ व फतेहगढ़ इसी काल में बनवाए गए थे। गुरु साहिब ने सिक्खों के लिए युद्ध-अभ्यास के शिविर फिर खोल दिए। जाहिर है कि पहाड़ी राजाओं व औरंगजेब के गुप्तचर एक-एक बात उस तक पहुंचा रहे थे। सन् १६८७ से लेकर १६९६ तक कई बार सिक्खों और विरोधियों में जंग हुई जिसमें नादौण की जंग, हुसैनी जंग व शहजादा मुअज्जम के साथ हुई जंग प्रमुख हैं। गुरु साहिब ने जान लिया था कि अब पंथ को नई शक्ल देने का समय आ गया है। उन्होंने १६९९ की वैसाखी पर सभी सिक्खों को अनंदपुर साहिब पहुंचने के आदेश देश भर में भेज दिए।

खालसा-सृजना का वृत्तांत लिखते समय कनिंघम के इतिहास में विरोधाभास स्पष्ट दिखाई देता है। उसने इस प्रसंग को बहुत विस्तार से लिखा है। इस वृत्तांत का पूरवार्द्ध निश्चित ही किसी सनातनी स्रोत से लिया गया है, जबकि उत्तरार्द्ध अन्य किसी विश्वसनीय स्रोत से है। गुरु साहिब ने जीवन भर एक अकाल पुरख की आराधना की है, किसी अन्य देवी-देवता को वे इस स्तर पर मानते ही नहीं थे। वे अपनी बाणी में कहते हैं :

पांइ गहे जब ते तुमरे तब ते कोऊ आंख तरे नहीं आन्यो ॥
राम रहीम पुरान कुरान अनेक कहैं मत एक न मान्यो ॥
सिंम्रित सासत्र बेद सभै बहु भेद कहैं हम एक न जान्यो ॥
स्री असिपान क्रिपा तुमरी करि मै न कह्यो सभ तोहि बखानयो ॥ (चौबीस अवतार)

गुरु साहिब के जीवन की तमाम घटनाओं से स्पष्ट है कि उन्होंने कभी कर्मकांडों को महत्व नहीं दिया। वे किसी जाति विशेष से वैर नहीं रखते थे, परंतु कर्मकांडियों के ढकोसंलों का खुलकर विरोध अवश्य करते थे। एक सच्चे गुरु, एक युगपुरुष की कथनी और करनी में अंतर हो ही नहीं सकता। 'रहितनामे' में वे स्पष्ट कहते हैं कि यदि मेरे सिक्ख ब्राह्मणों के बताए रास्ते पर चलें तो मैं उन पर भरोसा नहीं कर सकता। वे कहते हैं :

जब लग खालसा रहे निआरा।
तब लग तेज दीओ मैं सारा।
जब इह गहै बिपरन की रीत।
मैं न करों इन की प्रतीत। (सरब लोह ग्रंथ)

उनके जीवन का समूचा इतिहास उनके नि:स्वार्थ बलिदान का साक्षी है। उनके तो नाम के साथ ही 'सरबंसदानी' की उपाधि जुड़ी है जो उनकी महान वीरता को दर्शाती है। इस बात को हर इतिहासकार जानता और बखानता है कि उन्होंने अपने पिता, माता, चारों पुत्रों और स्वयं को देश-धर्म पर कुर्बान कर दिया। गुरु साहिब कहते हैं :

न डरो अरि सो जब जाइ लरो,
निसचै करि अपुनी जीत करों ॥ . . .
जब आव की अउध निदान बनै,
अति ही रन मै तब जूझ मरों ॥२३३॥
(चंडी चरित्र)

'खालसा-सृजना' का अगला हिस्सा उसने पूर्णत: तथ्यात्मक लिखा है। कनिंघम के शब्दों में:

"गुरु साहिब के हुकमनामे पर सारे देश से बड़ी भारी संख्या में संगत अनंदपुर साहिब पहुंची। उस समारोह में उन्होंने ऐलान किया कि आज से एक नया पंथ जन्म लेगा--'खालसा', जिसका अर्थ है--शुद्ध, पवित्र। इसको मानने वाले एक ईश्वर के पुजारी होंगे। जात-पात के भेदभाव का इसमें कोई स्थान नहीं होगा, सभी एक समान समझे जाएंगे। अब से धर्म-प्रवेश की रीति 'पाहुल' ग्रहण करने से निर्धारित की

जाएगी। सभी जाति, वर्ण व तबके के लोग, जो खालसा पंथ में आना चाहते हैं, उन्हें एक ही बर्तन से पाहुल लेकर समानता प्रदर्शित करनी होगी। 'खालसा' हिंदू, मुसलमान और अन्य किसी भी धर्म की जीवन-शैली नहीं अपनाएगा, उनका अनादर भी नहीं करेगा। 'खालसा' पूर्णतः गुरुओं द्वारा निर्धारित जीवन-शैली (रहित मर्यादा) का अनुसरण करेगा। 'खालसा' तन-मन से ईश्वर और अपने सतिगुरु के प्रति समर्पित होगा। गुरबाणी 'खालसे' का सर्वोच्च आधार है और रहेगी।

'खालसा' में प्रवेश करने के बाद व्यक्ति का 'कृतनाश', 'कुलनाश', 'धर्मनाश' और 'कर्मनाश' हो जाएगा। उसका गुरु-घर में दोबारा जन्म होगा और गुरु ही उसके माता-पिता होंगे। इसके बाद गुरु साहिब ने एक लोहे के बर्तन में जल डाला, उनकी पत्नी (माता साहिब कौर जी) ने उसमें मीठा (बताशे) डाला, गुरु (साहिब) ने उसे दोधारी तलवार (खंडे) से चलाते हुए कुछ मंत्रों (गुरबाणी) का उच्चारण किया और फिर सभी (पांच प्यारों) ने एक ही बर्तन से उसे पी लिया। सभी के नाम के साथ 'सिंघ' लगाना अनिवार्य हो गया। स्वयं गुरु साहिब ने भी अपना नाम 'गुरु गोबिंद सिंघ' रख लिया।" (पृष्ठ ६२-६५)

इसके बाद अगले दो पन्नों में कनिंघम ने 'रहित मर्यादा' और 'वज्र कुरहितों' का बहुत ही सटीक ब्यौरा दिया है। पाठक रहित मर्यादा को अच्छी तरह समझते हैं, इसलिए उसकी पुनरावृत्ति की आवश्यकता नहीं है। रहित मर्यादा उसे सीधे सिक्ख स्रोतों से ही प्राप्त की है, अतः उसे शत-प्रतिशत वैसे ही लिखा है। साथ ही उसे मोने (केश कत्ल करने वाले) लोगों को स्पष्ट रूप से सिक्खी से बाहर बताया है। खालसा-सृजना के संदर्भ में लेखक ने एक बड़े ही कमाल की बात कही है जो कलगीधर पिता के युगपुरुष को स्पष्ट प्रमाणित करती है। वे कहते हैं, "उन्होंने हिंदुओं के भ्रम और मुसलमानों की गलतियों के बीचोबीच 'खालसा' उत्पन्न किया, जहां सिंघों का एक छत्र राज है।" (पृष्ठ ६६)

खालसा-सृजना का सर्वव्यापी प्रभाव : खालसा-सृजना का सिक्खों पर बहुत ही सकारात्मक प्रभाव पड़ा। मुरझायी कौम में एक बार फिर जोश आ गया। जब सारी विषमताएं मिट जाएं और समूचा समाज एक ही इष्ट की आराधना करे, एक ही लक्ष्य के लिए एक ही रास्ता अपना ले, तब वह बरसाती नदियों से मिलकर बनने वाले उफनते सैलाब के समान होता है जिसे रोक पाना कठिन है। सिक्खों और स्वयं गुरु साहिब के जोश में अंतर कर पाना मुश्किल था और ऐसा क्यों न हो जब वे स्वयं कहते हैं:

आतम रस जिह जानही सो है खालस देव।
प्रभ महि मो महि तास महि रंचक नाहन भेव।
(सरब लोह ग्रंथ)

जहां एक ओर सिक्ख जगत में एक अभूतपूर्व उत्साह झलक रहा था वहीं सिक्ख विरोधी शक्तियां घबरा उठी थीं, जिनमें औरंगजेब, उसके वजीर और पहाड़ी राजा प्रमुख थे। ये लोग नित्य नये तरीके खोज रहे थे कि किस प्रकार सिक्खों की बढ़ती ताकत को रोका जा सके। वे कभी अपने लिए अलग अमृत की बात करते तो कभी खालसे के साथ मनगढ़त किस्से-कहानियां जोड़कर इस निराले पंथ हिंदू धर्म का ही एक पंथ बताने का प्रयास करते। पहाड़ी राजाओं ने यह बात स्पष्ट समझ ली थी कि अनंदपुर साहिब अब एक शक्तिशाली सिक्ख केंद्र बन गया है। अमृत की शक्ति ने सिक्खों को निडर बना दिया है। वे अपने गुरु के लिए कुछ

भी कर गुजरने को तैयार हैं। ऐसी स्थिति में यदि युद्ध होता है तो उन्हें मुंह की खानी पड़ेगी। यदि वे चुप बैठे रहे तो हो सकता है कि गुरु साहिब ही उन पर हमला कर दें। तब भी उनकी हार तय थी। सिक्खों की बढ़ती ताकत और धार्मिक स्वायत्ता की खबरों से औरंगजेब के भी कान खड़े हो गए थे, अत: औरंगजेब और पहाड़ी राजाओं ने संयुक्त आक्रमण की योजना बनाई। औरंगजेब स्वयं तो उस समय दक्षिण में ही था, परंतु दिल्ली से लेकर पंजाब तक के उसके प्रतिनिधि पहाड़ी राजाओं का साथ दे रहे थे। वजीर खान इन सब में अग्रणी था।

अंतिम संघर्ष : गुरु साहिब ने भविष्य में जिन हालातों की संभावना पर इतनी तैयारियां करते हुए किले बनवाए, सिक्खों को युद्ध-अभ्यास करवाया, घोड़े-शस्त्र आदि इकट्ठे किए, वे हालात अब स्पष्ट रूप से सामने आने लगे थे। युद्ध के हालात तभी पैदा होते हैं जब दो राज्यों में आपसी मतभेद हों या एक राज्य दूसरे पर हमला करना चाहता हो या किसी राज्य में होने वाले अत्याचारों को कोई दूसरा राज्य रोकना चाहता हो आदि। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने तो ऐसे कोई कार्य किये ही नहीं जिससे मुगलों और पहाड़ी राजाओं को कोई राजनैतिक खतरा हो सकता। वास्तविक कारण गुरु साहिब की धार्मिक गतिविधियां थीं। वैसे तो हर व्यक्ति को धार्मिक रूप से स्वतंत्र विचारधारा रखने का पूर्ण अधिकार है, परंतु मुगलों के शासन में भारतीय धर्म-सिद्धांतों की जो दुर्गति हुई वह सभी जानते हैं। मुगलों का गुरु साहिब से व्यक्तिगत वैर नहीं था। यदि वे ब्राह्मणों की भांति अपनी ही कौम की जमीर को मार कर केवल कर्मकांडों में ही धर्म-परायणता का बोध करवाते रहते तो ऐसा होने पर मुगलों को कोई आपत्ति नहीं होती। गुरु साहिब ने न केवल आम जनमानस के सोये हुए आत्म-सम्मान को ही जगाया वरन् अत्याचार के विरुद्ध एक निडर शस्त्रधारी कौम भी खड़ी कर दी। स्पष्ट है कि मुगल खालसे से घबरा गए थे, परंतु पहाड़ी राजाओं की गुलाम मानसिकता का तो कहना ही क्या था? जिन मुगलों ने हिंदुओं पर इतने जुल्म ढाए थे, उनका धर्म तक समाप्त कर देना चाहते थे, वे स्वेच्छा से उनकी जी-हजूरी कर रहे थे। वहीं जिस महापुरुष ने उनका धर्म बचाने के लिए अपने सिक्खों समेत अनगिनत यातनाएं सहीं और अपना बलिदान तक दे दिया, वे लोग उसी धर्म के शत्रु हो गए। अभी श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहादत को तीन दशक भी पूरे नहीं हुए थे कि ये पहाड़ी राजे मुगलों की विशाल सेना समेत अनंदपुर साहिब पर चढ़ आए और घेरा डाल दिया।

इस अंतिम संघर्ष का विवरण कनिंघम को दरबारी कातिबों के दस्तावेजों से ही मिला है इसलिए आपस में विरोधाभास वाली कई अटपटी बातें उसने इस संदर्भ में कही हैं, जैसे "पहले हुए युद्धों में गुरु साहिब के हाथों मारे गए इन पहाड़ी राजाओं के रिश्तेदारों का बदला लेने के लिए वे गुरु साहिब पर चढ़ आए थे। मुगल इसलिए नाखुश थे कि गुरु साहिब ने अपनी सेना में पठानों को भर्ती किया था। गुरु साहिब सभी (हिंदू और मुसलमान) को प्रलोभन देकर खालसा पंथ में शामिल कर रहे थे आदि।" सभी बातों का स्वरूप बदलकर यहां लिखा गया है। यह ठीक है कि भंगाणी के युद्ध में गुरु साहिब ने नालागढ़ के हरीचंद को मार गिराया था, पर इस युद्ध में उनकी बुआ बीबी वीरो जी के दो सपुत्र भी शहीद हो गए थे। जहां तक पठानों का प्रश्न है तो वे प्रशिक्षित सिपाही थे और उन्हें

तनखाह देकर कोई भी अपनी सेना में भर्ती कर सकता था। उस काल की प्राय: सभी भारतीय राजाओं की सेना में पठानों की टुकड़ियां थीं। यहां तक कि दक्षिण में शिवाजी मराठा और उनके पुत्र संभाजी की सेना में भी पठानों को भर्ती किया गया था, वैसे ही गुरु साहिब ने भी उन्हें भर्ती किया होगा। जहां तक अमृत-पान कर 'खालसे' में प्रवेश करने वाली बात थी तो वहां भी किसी को कोई प्रलोभन नहीं दिया गया था और यदि दिया भी जाता तो किस बात का? यहां तो सिक्ख सिर पर कफन बांध, अपने शीश को गुरु साहिब के चरण-कमलों पर अर्पित कर हर कठिनाई का सामना करने का प्रण लेकर आ रहे थे। भला मौत भी कोई प्रलोभन है जिसके लालच में कोई अमृत-पान करता? यह तो सदियों से अत्याचारियों को मुंहतोड़ जवाब देने की अदम्य इच्छा-शक्ति ही उन्हें खालासई ध्वज तले एकत्रित कर लाई थी।

आगे के हालातों के बारे में कनिंघम ने ठीकठाक ही लिखा है। सन् १७०४ में मिलीजुली फौजों ने अनंदपुर साहिब को घेर लिया। कई महीनों तक घेरा पड़ा रहा। किले के भीतर जीवनावश्यक वस्तुओं, शस्त्रों और गोला-बारूद की भारी कमी हो गई थी। रसद-पानी तो न के बराबर बचा था। बाहर मौसम की मार झेलकर विरोधी सेनाएं भी बेहाल हो चुकी थीं। पहाड़ी राजाओं ने गऊ की और शाही सेना ने कुरान की कसम खाकर गुरु साहिब को संदेश भेजा कि यदि वे किला खाली कर देते हैं तो उन्हें सुरक्षित बाहर निकलने दिया जाएगा। गुरु साहिब जानते थे कि यह धोखा है, परंतु और कोई रास्ता भी तो बाकी नहीं बचा था। गुरु साहिब ने सिक्खों समेत किला छोड़ दिया। आशंका अनुसार सेना ने पीछे से हमला किया। सरसा नदी के तट पर गुरु साहिब का परिवार तीन हिस्सों में बंट कर एक-दूसरे से बिछुड़ गया। भाई मनी सिंघ जी माताओं को सुरक्षित दिल्ली पहुंचाने में सफल रहे। गुरु साहिब दो बड़े साहिबजादे--बाबा अजीत सिंघ जी, बाबा जुझार सिंघ जी को साथ लेकर चमकौर की तरफ निकल गए। सरसा के तट पर हुई जंग में भाई उदै सिंघ जी और भाई जीवन सिंघ (भाई जैता) जी के साथ कई गुरसिक्ख शहीद हो गए। चमकौर साहिब में दस लाख की मुगल और पहाड़ी फौजों के साथ गुरु साहिब के दोनों साहिबजादे तथा अन्य ४० सिंघ शहीद हो गए। पांच प्यारों की आज्ञा के कारण गुरु साहिब को किला छोड़कर निकलना पड़ा। माता गुजरी जी और दो छोटे साहिबजादे--बाबा जोरावर सिंघ जी और बाबा फतह सिंघ जी को गंगू रसोइये ने लालच में आकर वजीर खान को सौंप दिया, जहां दोनों साहिबजादों को जिंदा दीवार में चिन कर और माता गुजरी जी को शहीद कर दिया गया। पूरा परिवार देश-धर्म की आन-बान-शान के लिए कुर्बान हो गया, पर किसी जालिम के सामने सिर नहीं झुकाया। कुछ महीनों में गुरु साहिब खिदराणे की ढाब पर पहुंच गये। वहां मुगलों और सिक्ख सेना के बीच गुरु जी के नेतृत्व में अंतिम युद्ध हुआ। यहीं वे चालीस सिंघ भी शहीद हुए जो गुरु साहिब के अनंदपुर साहिब छोड़ने और गुरु जी के पूरे परिवार के शहीद होने का समाचार सुनकर उनकी सहायता के लिए घरों से निकल पड़े थे। वे खिदराणे के पास उनसे मिले और उसी जंग में शहीद भी हुए। उन्हें गुरु साहिब ने 'मुकतों (मुक्त)' की उपाधि से सम्मानित किया। उस स्थान का नाम ही 'मुकतसर' पड़ गया। यहां से आगे वे बठिंडा पहुंचे, जहां उन्होंने कुछ महीने विश्राम किया।

संभव है कि इस काल तक औरंगजेब की आज्ञा से मुगल और पहाड़ी राजाओं ने युद्ध वापस ले लिया हो (अगली कार्यवाही रोक दी हो), क्योंकि जहां कुछ महीने पहले पंजाब के चप्पे-चप्पे पर गश्ती फौजें गुरु साहिब का पीछा कर रही थीं वहीं वे अब बड़े निर्भीक होकर विचरण कर रहे थे। बठिंडा में जिस स्थान पर गुरु साहिब ने विश्राम किया वहां अब 'तख्त श्री दमदमा साहिब' सुशोभित है। इसी स्थान पर कलगीधर पिता ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब का पुनर्संपादन करवाया तथा श्री गुरु तेग बहादर साहिब की बाणी भी दर्ज करवाई। लेखन की सेवा भाई मनी सिंघ जी ने निभाई।

नांदेड़ की ओर कूच : गुरु साहिब ने दमदमा साहिब में ही यह निश्चय कर लिया था कि औरंगजेब से आमने-सामने मिलकर दो टूक बात कर ली जाए जिससे अकारण हो रहे युद्धों में जाने वाली बहुत-सी जानें बच सकती हैं। उन्होंने सन् १७०६ के अक्तूबर में दक्षिण की ओर यात्रा आरंभ की। अभी वे राजस्थान तक ही पहुंचे थे कि फरवरी १७०७ में औरंगजेब की मृत्यु का समाचार उन्हें मिला। सत्ता को लेकर उसके पुत्रों में घमासान मच गया। बहादुर शाह ने गुरु साहिब से सहायता मांगी तो उन्होंने दी और वह राज-तख्त पर बैठने में सफल हो गया। कनिंघम ने लिखा है, "इसके पश्चात बहादुर शाह ने गुरु साहिब को अपने दरबार में बुलाकर सम्मानित किया और उन्हें मुगल सेना में ऊंचा ओहदा दिया।" (पृष्ठ ७२) यह बात सही है कि बहादुर शाह ने जुलाई १७०७ में गुरु साहिब को आगरा के दरबार में बुलाया और सम्मानित भी किया था परंतु गुरु साहिब ने किसी के अधीन कोई ओहदा स्वीकार नहीं किया था। उन्हें राजनैतिक ओहदों की कोई लालसा नहीं थी। बहादुर शाह से दोस्ती का सबब भी सिर्फ देश में अमन कायम करना था। यही कारण है कि गुरु साहिब तैयार-बर-तैयार होकर, कलगी सजाकर और घोड़े पर सवार होकर उसके दरबार में पहुंचे। बहादुर शाह स्वयं किले के द्वार पर उनका स्वागत करने आया था। उसने भरे दरबार में गुरु साहिब को खिलअत, साठ हजार की धुखधुखी और एक हीरे-जड़ी कलगी भेंट की। मुगल दरबार की प्रथा है कि जिसे भी खिलअत से निवाजा जाता है उसे दरबार में सबके सामने उसको पहनना पड़ता है। गुरु साहिब ने ऐसा नहीं किया, जिससे यह स्पष्ट है कि वे बहादुर शाह को एक स्वतंत्र व्यक्ति की भांति मिले थे। केवल अमन-चैन की खातिर ही वे उसके साथ दक्षिण तक आए। दोनों का लक्ष्य अलग होने के कारण दोनों अलग-अलग रास्ते पर चले गए। यहीं से गुरु साहिब नांदेड़ पहुंचे।

नांदेड़ में ही उनकी भेंट माधोदास वैरागी के साथ हुई और कलगीधर पिता से अमृत-पान कर वो 'बंदा सिंघ बहादर' बन गया। कनिंघम ने 'बंदा सिंघ बहादर' के 'सिंघ' सजने के वृत्तांत को सही-सही अंकित किया है, परंतु गुरु साहिब पर वार को उसने बिना किसी का नाम लेते हुए जातीय बदले की कार्यवाही बताया है। यह वृत्तांत भी उसे बादशाह के दरबारी लेखकों से ही मिला है। जाहिर है कि वे अपने कलंकित कृत्यों को क्यों लिखेंगे! वास्तविकता यह है कि बहादुर शाह द्वारा गुरु साहिब को सम्मानित करने वाली घटना से सरहिंद का सूबेदार वजीर खान बहुत चिढ़ गया था। वह गुरु साहिब से व्यक्तिगत वैर रखता था। गुरु साहिब के परिवार को निर्ममता से शहीद करवाने में उसने अहम भूमिका निभाई थी। उसने अपने गुप्तचरों

को गुरु साहिब के पीछे छोड़ रखा था जो दक्षिण तक उनके पीछे आए थे और सितंबर १७०८ में उन्होंने धोखे से गुरु साहिब पर खंजर से वार कर दिया। दोनों गुप्तचर वहीं मारे गए। गुरु साहिब के घाव गंभीर तो थे फिर भी उन्हें सिल दिया गया। महीने भर बाद एक दिन तीरंदाजी करते समय उनके टांके टूट गए। घाव का इलाज तो किया गया परंतु गुरु साहिब ने यह जान लिया था कि अब अंतिम समय निकट है। वे पहले ही अपने तीर, हुकमनामे, नगारा और निशान साहिब देकर बाबा बंदा सिंघ बहादर को पंजाब की तरफ रवाना कर चुके थे। उन्होंने पंथक जत्थेदारी बाबा बंदा सिंघ बहादर को सौंपी और 'देहधारी गुरु' की प्रथा को समाप्त कर युगो-युग अटल गुरतागद्दी साहिब श्री गुरु ग्रंथ साहिब को सौंप कर आदेश किया :

आगिआ भई अकाल की, तबै चलाइओ पंथ।
सब सिक्खन को हुकम है गुरु मानीओ ग्रंथ।

तत्पश्चात ७ अक्तूबर सन् १७०८ को कलगीधर पिता नांदेड़ में ज्योति-जोत समा गए। आज इस स्थान पर तख्त श्री हजूर साहिब नामक सुंदर स्थान सुशोभित है।

गुरु साहिब का व्यक्तित्व : कनिंघम ने गुरु साहिब के संपूर्ण व्यक्तित्व को सारगर्भित करके बड़े ही सुंदर शब्दों में प्रस्तुत करते हुए लिखा है: "The last apostle of the Sikhs did not live to see his own ends accomplished, but he effectivelly roused the dormant energies of a vanquished people and filled them with a lofty although filful longing for social freedom and national ascendancy, the proper adjunets of that purity of worship which has been preached by (Guru) Nanak, (Guru) Gobind saw what was yet vital and he returned it with promethean fire. (Guru) Gobind has not only elevated and altered the constitution of their minds, but has operated moderially and given amplitude to their physical frames. The Sikh form where observes distinguishing features in all, there also reveals their thoughtfulness, faith, presence and nearance to Lord and their divinity. (Guru) Gobind did not fetter his disciples with political systems or codes of municipal laws, yet in religious faith and worldly aspirations, they are wholly different from other Indians and they are bound together by a community of inward sentiment and of outward object unknown elsewhere. (page 75-76)"

अर्थात् "सिक्खों में अथाह जज्बा (पहले गुरु साहिबान द्वारा ही) भरा जा चुका था। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने ऐसी रूह फूंकी कि उसने न सिर्फ सिक्खों के मनों को बदल दिया वरन् उन्हें हर पक्ष से बलवान भी बना दिया; उनकी शक्ल, सूरत, मन, बुद्धि, आत्मा सब बदल दी। सिक्खों को उसकी न्यारी पहचान उन्होंने ही दी, साथ ही उनकी आत्मा को परमात्मा के नाम द्वारा इतना पवित्र बना दिया कि वे संसार में रहते हुए भी प्रभु के दिव्य सान्निध्य को अनुभव करते हैं। इसके लिए श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने न तो राजनैतिक नियम लागू किए और न ही सांसारिक प्रलोभन ही दिए। सिक्खों को हिंदुओं में ही शुमार किया जाता यदि गुरु साहिब उन्हें (खालसा बनाकर) तन, मन से बदल न देते। सिक्ख सारे भारतवासियों से भिन्न हैं। वे एक कौमी भावनात्मक सूत्र और समान लक्ष्य के कारण एक दूसरे से बंधे हुए हैं।

स्पष्ट है कि संसार में रहते हुए कलगीधर पिता ने जो आलौकिक कार्य किये और वे भी केवल ४२ वर्ष के जीवन-काल में, वह दुनिया में किसी और के लिए कदाचित संभव न हो पाया। उनका व्यक्तित्व चरम का एकीकरण था। कोमल ऐसे कि किसी मजलूम की आह को नजरंदाज नहीं कर सके और कठोर ऐसे कि जो भी अत्याचारी खड़ग के सामने आता, नाश हो जाता। भाई गुरदास सिंघ जी कहते हैं :

गहि ऐसे खड़ग दिखाईए को सकै न झेला।
(वार ४१:१५)

जब 'गुरु' बनकर नंगी कृपाण ले शीश की मांग करते हैं तो कोई इंकार नहीं करता। फिर स्वयं याचक बनकर अपने ही सजाए सिंघों से अमृत-पान करते हुए कहते हैं :

--सेव करी इनही की भावत अउर की सेव सुहात न जी को ॥
--इनहीं की क्रिपा के सजे हम हैं, नहीं मो सो गरीब करोर परे ॥ *(दसम ग्रंथ)*

सांसारिक रिश्तों के मोह से इतने ऊपर उठे हुए कि चार जिगर के टुकड़ों के शहीद होने पर भी परमात्मा का शुक्र करते हैं और जब सच्चे हार्दिक प्यार से प्रेरित हुआ मोह करते हैं तो ऐसा कि स्वयं अपनी रचना (खालसे) में पूर्णत: समा जाते हैं :

खालसा मेरो रूप है खास।
खालसे महि हौं करों निवास।
खालसा मेरो पिंड परान।
खालसा मेरी जान की जान। (सरब लोह ग्रंथ)

उन्हें जितनी उपमाएं दी जाएं कम पड़ जाती हैं। यही कारण है कि लाला दौलत राय ने सभी उपमाओं को एक ही शब्द में समेट दिया : 'साहिबे कमाल।' क्या कमाल की उपमा है? वाकई उन जैसा दुनिया में कोई और युगपुरुष नहीं हो सकता जिसने इतिहास को भी नई परिभाषा के साथ नई बुलंदियों पर पहुंचा दिया।

कविता

अब पता चला हमें . . .

हमारी आंखों में कुछ सपने पल रहे थे
आंखें खुलने पर वे मिट्टी में दफन हो गए
हां, हमारे लिए भी थी इन पेड़ों की छांव
पर वो कत्ल कर दी जुनूनियों की कुल्हाड़ियों ने
हमारे दिल की डाली पर खिले आशाओं के फूल
कमबख्त मतलबप्रस्त पूंजीपतियों ने
भ्रष्ट नेताओं के गले के हारों में पिरो दिये
हमसे कहा गया, 'आयेगी पतझड़ के बाद बहार भी'
लेकिन हमारी जिंदगी में आती रही
पतझड़ के बाद पतझड़ ही
न ले सके हम सांस कभी आजादी से
न पिंड छुड़ा सके गुलामी के एहसास से
हर कदम पर गुलामी से सामना हुआ
उलझनें ही उलझनें बंधी रहीं हमारी गठरियों में
और हमें मजबूर किया गया
ये गठरियां उठाने के लिए
गुलामों जैसी जिंदगी जीने के लिए
हम जिसे लोकतंत्र समझते रहे
वह झूठतंत्र-लूटतंत्र सिद्ध हुआ
हमारे अधिकारों का सरेआम कत्ल हुआ
हमारी आंखों में कुछ सपने पल रहे थे
अब पता चला हमें
कि हमारे देश में से
लोकतंत्र विदा हो चुका है।

-डॉ कशमीर सिंघ 'नूर', बी-एक्स ९२५, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर। मो ९८७२२-५४९९०

"सिक्ख रिलीजन" कृत मैकालिफ में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जीवन-वृत्तांत

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ 'साहिल'**

मैक्स आर्थर मैकालिफ की रचना "सिक्ख रिलीजन" का पूरा पांचवां भाग श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के जीवन-वृत्तांत पर आधारित है। मैकालिफ ने कुल ३१ अध्यायों में दशमेश पिता के जीवन-वृत्तांत का विस्तार से वर्णन किया है।

जन्म एवं बाल्यावस्था : मैकालिफ लिखता है कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने पौष शुक्ल पक्ष सप्तमी संवत् १७२३ वि. को पटना शहर में पिता नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब एवं माता गुजरी जी के घर जन्म लिया। नवम् पातशाह दशमेश पिता के जन्म के समय सुदूर आसाम एवं ढाका में गुरमति-प्रचार में व्यस्त थे। गुरु जी सन् १६७० ई में प्रचार-यात्रा से पटना वापस आये और लगभग साढ़े तीन साल के हो चुके श्री (गुरु) गोबिंद राय जी को पहली बार देखा।

श्री (गुरु) गोबिंद राय का व्यक्तित्व बड़ा तेजस्वी और प्रभावशाली था। वे अपने हमउम्र साथियों के साथ गंगा के तट पर वीर-रसात्मक खेल खेलते और युद्ध-कौशल का अभ्यास करते। पटना के तत्कालीन राजा फतह चंद मैणी और उनकी रानी श्री (गुरु) गोबिंद राय जी के प्रति असीम श्रद्धा की भावना रखते थे।

श्री (गुरु) गोबिंद राय जी जब छः वर्ष के हुए तो नवम् गुरु जी सपरिवार अनंदपुर साहिब आ गये। यहां दशमेश पिता की शिक्षा-दीक्षा का विशेष प्रबंध किया गया। श्री (गुरु) गोबिंद राय जी शीघ्र ही ब्रज, पंजाबी, फारसी, संस्कृत के विद्वान एवं घुड़सवारी, तीरंदाजी, शस्त्र-संचालन जैसी युद्ध-कलाओं के पारंगत योद्धा बन गये।

नवम् पातशाह की शहादत : मैकालिफ ने नवम् पातशाह के जीवन-वृत्तांत में उनकी महान शहादत का विस्तार से वर्णन किया है। औरंगजेब की कट्टर धार्मिक नीतियों से त्रस्त होकर कशमीरी पंडितों ने पंडित किरपा राम के नेतृत्व में नवम् पातशाह के दरबार में आकर अरदास की। कशमीरी पंडितों की व्यथा जानकर श्री (गुरु) गोबिंद राय जी ने गुरु-पिता से प्रार्थना की कि वे इनके दुखों का निवारण करें। नवम् पातशाह ने कहा--"आज किसी महापुरुष के आत्म-बलिदान की आवश्यकता है।" श्री (गुरु) गोबिंद राय जी ने उत्तर दिया कि "गुरु-पिता! ऐसा बलिदान तो आप ही दे सकते हैं।"

इस प्रकार बाल-रूप श्री (गुरु) गोबिंद राय जी के मशवरे के अनुरूप नवम् पातशाह ने कशमीरी पंडितों के धार्मिक अधिकारों की रक्षा हेतु दिल्ली के चांदनी चौक में आश्विन शुक्ल पक्ष पंचमी संवत् १७३२ वि. (नवंबर, सन् १६७५) को शहादत दी।

दशमेश पिता की दिनचर्या एवं सैनिक तैयारियां : दशमेश पिता को मात्र नौ वर्ष की आयु में गुरगद्दी की जिम्मेदारी संभालनी पड़ी। इतनी छोटी आयु में भी गुरु जी में दूरदर्शिता कूट-कूट कर भरी थी। मैकालिफ लिखता है कि

*१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, मो: ९४१७२-७६२७१

दशम पातशाह ने बड़े पैमाने पर सिक्खों में सैनिक गतिविधियां तेज कर दीं। अस्त्र-शस्त्र, जंगी साजो-सामान और सैनिक-प्रशिक्षण का प्रबंध किया जाने लगा।

दशम पातशाह की दिनचर्या के विषय में मैकालिफ लिखता है कि गुरु जी रात के पिछले पहर जागते, वाहिगुरु का नाम-सिमरन करते। खास तौर पर गुरु जी 'आसा की वार' का कीर्तन सुनकर अत्यंत आनंदित होते तथा प्रभात होने पर सिक्खों को रूहानी ज्ञान का उपदेश देते, फिर शस्त्र चलाने का अभ्यास कराते। बाद दोपहर सिक्खों के साथ शिकार खेलने के लिए चले जाते। घुड़सवारी का आनंद लेते। शाम को 'सो दरु रहरासि' का पाठ करके दिनचर्या को पूर्ण करते।

भीमचंद की ईर्ष्या : भीमचंद कहिलूर का राजा था। उसने जब गुरु जी की बढ़ रही सैनिक-शक्ति और वैभव के विषय में सुना तो ईर्ष्या से ग्रस्त हो गया। उन्हीं दिनों आसाम के राजा रामराय ने एक विलक्षण हाथी समेत कुछ खास सौगातें गुरु जी को भेंट की थीं। भीमचंद ने इन उपहारों को किसी न किसी तरह हड़पने की कोशिश की। अपनी मंशा में सफल न रहने पर उसने गुरु जी के विरुद्ध षड़यंत्र रचने शुरू कर दिये। मैकालिफ ने इन घटनाओं का विस्तार से वर्णन किया है। मैकालिफ यह भी लिखता है कि इन दिनों सिक्खों और भीमचंद के सैनिकों में कुछ झड़पें भी हुईं जिनमें भीमचंद को मुंह की खानी पड़ी। इसके बाद भीमचंद अन्य साजिशें रचने लगा।

पाउंटा साहिब की स्थापना : मैकालिफ के अनुसार सन् १६८४ ई में नाहन के राजा मेदिनी प्रकाश के निमंत्रण पर गुरु जी नाहन रियासत में गये और वहां यमुना नदी के किनारे 'पाउंटा' नगर की स्थापना की। सैनिक तैयारियां यहां भी जारी रहीं। सैनिक गतिविधियों के साथ-साथ यहां साहित्य-रचना का कार्य भी आरंभ हुआ। गुरु-दरबार में अनेक विद्वानों एवं कवियों ने आकर आश्रय लिया और श्रेष्ठ साहित्य-सृजन में जुट गये। गुरु जी ने स्वयं भी 'जापु साहिब', 'सवैये' और 'अकाल उसतति' जैसी बाणियों की रचना की।

पाउंटा साहिब के निकटवर्ती गांव सढौरा में रहने वाले पीर बुद्धू शाह गुरु जी के दर्शन करके बड़े प्रसन्न हुए और गुरु-घर के सेवक बन गये। पीर बुद्धू शाह ने गुरु जी के सुरक्षा-प्रबंध के लिए ५०० पठानों की एक टुकड़ी भेंट की।

भंगाणी का युद्ध : मैकालिफ ने भंगाणी के युद्ध का विस्तार से वर्णन किया है। मैकालिफ लिखता है कि गुरु जी की उन्नति से ईर्ष्याग्रस्त हुए कहिलूर के राजा भीमचंद ने कुछ पहाड़ी राजाओं को साथ मिलाकर अप्रैल १६८७ ई. में गुरु जी पर आक्रमण कर दिया। पाउंटा साहिब के निकट भंगाणी के स्थान पर घमासान युद्ध हुआ। पीर बुद्धू शाह के रखवाये पठान सैनिक दगा देकर भाग गये। ऐसे में पीर बुद्धू शाह अपने पुत्रों और ७०० मुरीदों के साथ युद्ध-भूमि में पहुंचे और गुरु जी के लिए बहादुरी से लड़े। युद्ध में अनेक सिक्खों समेत पीर बुद्धू शाह के दो पुत्र और कई मुरीद शहीद हो गये। इस युद्ध में पहाड़ी राजाओं की जबरदस्त हार हुई।

गुरु जी ने प्रसन्न होकर पीर बुद्धू शाह को एक कटार, एक सुंदर पोशाक और स्वहस्तलिखित हुकमनामा बख्शिश किया। पीर बुद्धू शाह ने गुरु जी से वह कंघा भी मांग लिया जिसे गुरु जी अभी-अभी प्रयोग करके हटे थे और उसमें गुरु जी के कुछ 'केश' भी उलझे

हुए थे। गुरु जी ने अपनी आधी दसतार भी अपने प्रिय मित्र पीर बुद्धू शाह को भेंट की।

भंगाणी के युद्ध के बाद अक्तूबर १६८७ ई में गुरु जी अनंदपुर साहिब लौट आये।

अनंदपुर साहिब में गुरु जी ने साहित्य-साधना और सैनिक-प्रशिक्षण की गतिविधियां पुनः आरंभ करवाईं। अनेक साहित्य-रचनाओं की सृजना के साथ-साथ अनंदगढ़, केसगढ़, फतहिगढ़ आदि पांच किलों का निर्माण भी करवाया गया ताकि अनंदपुर साहिब के पुख्ता सुरक्षा-प्रबंध किये जा सकें।

नादौण की जंग : मैकालिफ के अनुसार सन् १६८८ ई में जम्मू का नवाब अलफ खां मुगल लश्कर लेकर गुरु जी पर हमलावर हुआ। कांगड़ा से ३२ किलोमीटर दूर ब्यास नदी के किनारे नादौण में जबरदस्त जंग हुई। गुरु जी इस युद्ध में विजय प्राप्त करके एक महान योद्धा के रूप में प्रसिद्ध हो गये।

ईर्ष्या के मारे पहाड़ी राजाओं ने हुसैन खां को न्यौता देकर सन् १६८९ ई में गुरु जी के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया। 'हुसैनी युद्ध' के नाम से प्रसिद्ध इस युद्ध में भी गुरु जी की भारी विजय हुई और हुसैन खां तथा सभी पहाड़ी राजाओं को मुंह की खानी पड़ी।

इसके बाद लंबे समय तक कोई शत्रु गुरु जी के विरुद्ध सिर नहीं उठा सका। अनंदपुर साहिब में सैनिक-प्रशिक्षण और साहित्य-साधना अबाध गति से चलती रही।

मैकालिफ ने इन युद्धों का विस्तार से वर्णन करके गुरु जी की वीरता और रण-कौशल का सुंदर चित्रण किया है।

केशोराम पंडित का अहंकार-खंडन : मैकालिफ ने केशोराम पंडित के प्रसंग को विशेष उल्लेख के साथ प्रस्तुत किया है। केशोराम रहता तो गुरु-दरबार में था परंतु सिक्खों को विभिन्न भ्रम-भ्रांतियों में ग्रस्त करने के प्रयास करता रहता था। सिक्ख उसकी बातों को हंसी-मजाक में टाल देते थे। एक बार उसने गुरु जी को कहा कि यदि आप देवी दुर्गा को प्रसन्न करके प्रकट कर लें तो हर जंग में विजय सदा आपके कदम चूमेगी।

गुरु जी ने समझ लिया कि अब केशोराम के पाखंड को खंड-खंड करने का समय आ गया है। दशम पातशाह ने केशोराम को पूजा करने के लिए सभी प्रकार के प्रबंध कर दिये।

पूरे नौ महीने की पूजा के बाद केशोराम ने गुरु जी से कहा कि अब देवी प्रकट होने वाली है। कई दिन इंतजार करने के बाद जब देवी प्रकट न हुई तो नजर बचाकर केशोराम भाग गया।

गुरु जी ने सारी सामग्री हवन में एक साथ डाल दी। गुरु जी ने तलवार बाहर निकाल कर फरमाया कि अकाल पुरख की कृपा से मेरी यह तलवार ही सारे कारनामे करेगी।

इस संदर्भ में मैकालिफ ने 'दसम ग्रंथ' में वर्णित सुमत जैन राजा की राजकुमारी और ब्राह्मण की कथा तथा गुरु जी द्वारा रचित 'चंडी चरित्र' से उदाहरण देकर दशमेश पिता के पाखंड-विरोधी विचारों को स्पष्ट किया है।

खालसे की सिरजना : मैकालिफ ने खालसा-पंथ की सिरजना के कौतुक को भी बड़े विस्तार के साथ प्रस्तुत किया है। मैकालिफ लिखता है कि गुरु जी को लगा कि सिक्खों में नया उत्साह फूंकने के लिए अब एक नई फौज की आवश्यकता है।

दशम पातशाह ने वैसाखी के अवसर पर (सन् १६९९ ई) सारी सिक्ख संगत को श्री अनंदपुर साहिब में एकत्र होने का हुक्म दिया।

गुरु जी ने तलवार लहराते हुए पद-दलित मानवता और धर्म की रक्षा हेतु पांच शीशों की मांग की। भाई दया राम, भाई धरम दास, भाई हिंमत राय, भाई मोहकम चंद और भाई साहिब चंद ने बारी-बारी गुरु जी को 'शीश अर्पित' किये। गुरु जी ने इन पांचों को अमृत छका कर 'सिंघ' सजा दिया। इसके बाद गुरु जी ने स्वयं इन 'पंज प्यारों'--भाई दया सिंघ, भाई धरम सिंघ, भाई हिंमत सिंघ, भाई मोहकम सिंघ और भाई साहिब सिंघ से अमृत छका और 'गोबिंद राय' से 'गोबिंद सिंघ' बन गये। गुरु जी ने सिंघों को पांच ककार--कंघा, केश, कड़ा, कछहिरा और कृपाण धारण करने का हुक्म दिया।

मैकालिफ बयान करता है कि इसके बाद उसी दिन हजारों सिक्खों ने अमृत छका और 'सिंघ' सज गये। मैकालिफ ने अगले अध्यायों में 'खालसा पंथ' को लेकर उठाये गये विभिन्न ऐतराजों का वर्णन करते हुए गुरु जी के माध्यम से यह सिद्ध किया है कि 'खालसे' का जन्म दलित-शोषित मानवता के हकों की रक्षा के लिए हुआ है।

पहाड़ी राजाओं से जंग : पैंदे खान की बगावत : 'खालसे' की स्थापना से सिक्खों का सैनिक संगठन बहुत मजबूत हो गया। भयभीत पहाड़ी राजाओं ने गुरु जी के सिपहसालार पैंदे खान को अपने से मिला लिया और दीना बेग आदि से मिलकर सन् १७०० से १७०३ ई तक अनंदपुर साहिब पर चार आक्रमण किये, परंतु हर बार हार कर भाग खड़े हुए। इन युद्धों में पैंदे खान मारा गया। भाई बचित्तर सिंघ द्वारा मस्त हाथी का मुंह मोड़ना और भाई उदै सिंघ की बहादुरी जैसे कई प्रसंगों समेत मैकालिफ ने इन जंगों का विस्तार से वर्णन किया है।

अनंदपुर साहिब का युद्ध एवं सिंघों का संघर्ष : मैकालिफ ने इसके बाद की घटनाओं- अनंदपुर साहिब की घेराबंदी, गुरु जी का अनंदपुर साहिब से जाना, परिवार-विछोड़ा, चमकौर की जंग, साहिबजादों एवं माता गुजरी जी की शहादत, मुकतसर की जंग आदि का विस्तार से वर्णन किया है।

मैकालिफ ने लिखा है कि सिक्खों की अत्यधिक उन्नति से दुखी होकर बिलासपुर, कांगड़ा, कुल्लू, मंडी, जम्मू, चंबा, गुलेर आदि रियासतों के पहाड़ी राजाओं ने लाहौर और सरहिंद के मुगल सूबेदारों के साथ मिलकर एक बड़ा लश्कर बनाया और अनंदपुर साहिब को घेरा डाल दिया। आठ महीने तक घेरा जारी रखने के बावजूद मुगलों को सफलता न मिली। अंतत: सरहिंद के सूबेदार वजीर खां की खाई कसमों और रसद-पानी खत्म हो जाने के कारण गुरु जी पौष महीने की ठंडी रात को किले से बाहर निकले। मुगल सेना गुरु जी को सुरक्षित जाने देने की अपनी कसम तोड़ कर सरसा नदी पार कर रहे गुरु जी पर टूट पड़ी। भयानक युद्ध हुआ। माता गुजरी जी छोटे साहिबजादों--बाबा जोरावर सिंघ और बाबा फतहि सिंघ के साथ परिवार से बिछुड़ गये। गुरु जी चालीस सिंघों के साथ किसी तरह चमकौर में बुधीचंद की हवेली में पहुंचे। चमकौर की गढ़ी में चालीस सिंघों ने दस लाख के लश्कर का मुकाबला किया। साहिबजादा अजीत सिंघ, साहिबजादा जुझार सिंघ और अनेक सिंघ मुगल सेना से जूझते-जूझते शहीद हो गये। गुरु जी चमकौर की गढ़ी में घिरे सिंघों को छोड़कर जाना नहीं चाहते थे परंतु उन्हें गुरु-मर्यादा के अनुसार पांच सिंघों के आदेश का पालन करना ही पड़ा। गुरु जी चमकौर साहिब से माछीवाड़ा पहुंचे जहां दो मुसलमान श्रद्धालु

भाई नबी खां और भाई गनी खां उन्हें अपना 'उच्च दा पीर' बनाकर गांव हेहरां तक ले गये।

उधर गंगू रसोइये द्वारा विश्वासघात के कारण माता गुजरी जी और छोटे साहिबजादों को गिरफ्तार करके सरहिंद लाया गया। साहिबजादों को दीवार में चिनवा कर शहीद कर दिया गया और माता गुजरी जी बुर्ज से गिरकर शहीद हो गये।

मैकालिफ ने इन सभी घटनाओं का अध्याय २१ से लेकर अध्याय २४ तक विस्तृत विवरण दिया है। भाई घनैय्या जी की जल-सेवा, भाई संगत सिंघ की शहादत एवं मलेरकोटले के नवाब का 'आह का नारा', टोडरमल की गुरु-भक्ति जैसे प्रसंगों का भी वर्णन है।

मैकालिफ लिखता है कि जब गुरु जी ने यह सब सुना तो उन्होंने अपने तीर से एक झाड़ी को उखाड़ते हुए फरमाया कि मुगल साम्राज्य की भी जड़ ऐसे ही उखड़ जाएगी।

इसके बाद गुरु जी मालवे के गांव दीना पहुंचे। यहां उन्होंने औरंगजेब को फारसी में एक चिट्ठी 'जफरनामा' लिखी जिसमें औरंगजेब के अत्याचारों का कड़ा विरोध किया गया था। भाई दया सिंघ 'जफरनामा' औरंगजेब के दरबार में पहुंचाकर आये।

इसके बाद दशम पातशाह 'खिदराणे की ढाब' पर पहुंचे। माता भाग कौर, भाई महां सिंघ और उनके ४० सिंघ साथियों को, जो अनंदपुर साहिब में गुरु जी को 'बेदावा' दे आये थे, प्रायश्चित करवाने गुरु जी के पास लाईं। पीछा करते मुगल लश्कर के साथ यहां घमासान युद्ध हुआ जिसमें माता भाग कौर तथा चालीस सिंघ अद्वितीय बहादुरी एवं ऊंचे साहस सहित जूझे। चालीस के चालीस सिंघ शहीद हो गये और गुरु जी ने उन्हें 'चालीस मुकते' कह सम्मानित किया।

यहां से गुरु जी तलवंडी साबो चले गये और वहां लगभग एक वर्ष तक रहे। यहीं भाई मनी सिंघ जी से गुरु जी ने 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' की बीड़ तैयार करवाई।

इसके बाद गुरु जी दक्षिण दिशा की ओर चले गये और सावन के महीने में सन् १७०७ ई. को नांदेड़ पहुंचे। मार्ग में गुरु जी ने नये मुगल बादशाह बहादुर शाह से भी भेंट की।

बाबा बंदा सिंघ बहादर को 'सिंघ' सजाना : मैकालिफ ने दशम पातशाह और बैरागी माधोदास की भेंट का वर्णन भी किया है। गुरु जी ने माधोदास को अमृत छकाकर 'बंदा सिंघ बहादर' बना दिया और पांच तीर बख्श कर शोषित मानवता की रक्षा के लिए संघर्ष जारी रखने के लिये पंजाब भेजा।

ज्योति-जोत समाना : मैकालिफ लिखता है कि पैंदे खान के पोते गुल खान ने एक रात गुरु जी पर छुरे से घातक वार किया। बहादुर शाह के भेजे हकीमों ने जख्म को साफ कर दिया, परंतु कुछ समय बाद एक कमान का चिल्ला चढ़ाते समय जख्म फिर खुल गया।

गुरु जी ने सिक्ख संगत एकत्र करके हुक्म दिया कि अब से 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' ही हमेशा से पंथ के 'गुरु' रहेंगे। फिर गुरु जी ने सिक्खों को आध्यात्मिक उपदेश दिये और वृहस्पतिवार कार्तिक सुदी पांच, संवत् १७६५ वि. को ज्योति-जोत समा गये।

इस प्रकार मैकालिफ ने बड़े भावात्मक अंदाज में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की जीवन-कथा का वर्णन किया है।

"History of Sikhs" कृत डॉ. हरीराम गुप्ता में
श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जीवन-वृत्त

-डॉ. नवरत्न कपूर*

जन्म और शिक्षा-दीक्षा : श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी अपनी माता गुजरी जी और अपने पिता नौवें पातशाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब के एकमात्र सपुत्र थे। माता-पिता ने २२ दिसंबर, सन् १६६६ को पटना (बिहार) में पैदा हुए अपने इस बाल का नाम 'गोबिंद दास' रखा था। पिता की भ्रमणशीलता के कारण वे अपनी माता के साथ वहीं पर रहे और सन् १६७२ में पटना से पंजाब आए। उनका लालन-पालन राजकुमार की तरह हुआ। उन्हें फारसी, संस्कृत, अरबी, हिंदी, गुरमुखी (पंजाबी), गणित तथा इतिहास का ज्ञान सुयोग्य अध्यापकों ने करवाया। दादा-गुरु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब से चली आ रही पैतृक परंपरा के अनुसार श्री (गुरु) गोबिंद दास जी को घुड़सवारी, तीर-अंदाजी, बंदूक और भाला चलाने का प्रशिक्षण भी दिलाया गया। वे अनंदपुर साहिब के आस-पास के जंगलों में शिकार खेलने भी जाते थे। उनके मामा भाई किरपाल जी ने उनकी सुरक्षा के लिए कुछ अंगरक्षक भी नियुक्त किए हुए थे। इस प्रकार के निर्भीक बाल ने अपने पिता की शरण में आए कशमीरी पंडितों की सहायता करने के लिए पिता-गुरु जी से कहा।

८ जुलाई, सन् १६७५ को श्री (गुरु) गोबिंद दास को लगभग साढ़े आठ वर्ष की आयु में गुरगद्दी सौंपने की रस्म पूरी कर दी।

माता जीतो जी के साथ विवाह : पिता-गुरु की शहीदी से लगभग ढाई वर्ष पश्चात् उनका विवाह लाहौर निवासी भाई हरजस जी की सपुत्री माता जीतो जी के साथ सन् १६७७ में हुआ। गुरु साहिब के संबंधियों को डर था कि कहीं सिक्ख विरोधी मुस्लिम शासक श्री गुरु गोबिंद दास के विरुद्ध कोई गलत हरकत न करें इसलिए उनके ससुर ने अनंदपुर साहिब से १२ किलोमीटर की दूरी पर पूर्वोत्तर दिशा में एक स्थान पर अपनी बेटी का विवाह रचाया। यह स्थान अब 'गुरु का लाहौर' के नाम से प्रसिद्ध है। माता जीतो जी ने तीन साहिबजादों को जन्म दिया, जिनके नाम थे--बाबा जुझार सिंघ, बाबा जोरावर सिंघ और बाबा फतह सिंघ।

खालसा पंथ की स्थापना : धार्मिक जगत् को गुरु साहिब की सबसे बड़ी देन 'खालसा पंथ' माना जाता है। अपने समकालीन राजनैतिक आततायियों से लोहा लेने के लिए श्री गुरु गोबिंद दास जी ने अपने अनुयायियों में शौर्य-भावना का जो मंत्र फूंका था वही 'खालसा पंथ' का प्राणभूत सिद्धांत बना। ग्रामीण प्रशासनिक व्यवस्था में 'पंच परमेश्वर' का विशेष महत्व है। श्री गुरु नानक देव जी ने इस आधार पर पंच (पांच) शब्द पर बल देते हुए लिखा है :

पंच परवाण पंच परधानु ॥
पंचे पावहि दरगहि मानु ॥
पंचे सोहहि दरि राजानु ॥
पंचा का गुरु एकु धिआनु ॥ (पन्ना ३)

इसी सामाजिक व्यवस्था को धार्मिक जगत् में सफलीभूत करने के लिए श्री गुरु गोबिंद दास

*९०१, टावर डी-३, सागर दर्शन सोसाइटी, पाम बीच रोड, सेक्टर-१८, नेरूल (नवी मुंबई)-४००७०६

जी ने सन् १६९९ के दिन केवल ऐसे पांच व्यक्तियों का चयन अपने सतसंगियों में से किया था जो कि देश और धर्म के लिए अपने प्राणों की आहुति देने में संकोच न करें, ऐसा हमारा विनम्र मत है।

लेखक ने 'खंडे की पाहुल' गुरु साहिब के हस्त-कमल से छकने और पांच ककार (कछहिरा, केश, कड़ा, कृपाण व कंघा) सजाने का प्रण भरी सभा में करने वाले तथा कालांतर में 'पांच प्यारे' के नाम से विख्यात होने वाले महानुभावों के नाम भाई दया सिंघ, भाई धरम सिंघ, भाई मोहकम सिंघ, भाई साहिब सिंघ तथा भाई हिंमत सिंघ हैं।

इन महानुभावों के चयन से विश्व-भ्रातृत्व तथा भावात्मक एकता की मधुर सुगंधि आती है। कुलीन-अकुलीन की परिधि में बांधने वाली मनुष्य की स्वार्थ-प्रेरित बंदर-बांट को झकझोरने के लिए ही श्री गुरु गोबिंद दास जी ने स्वयं भी पांच प्यारों से श्री अनंदपुर साहिब में अमृत-पान करके अपने नाम के पीछे 'सिंघ' शब्द लगा लिया और मानवीय एकता का उद्घोष किया।

'खालसा' शब्द का अक्षर-विच्छेद करके प्रत्येक अक्षर की व्याख्या डॉ. हरीराम गुप्ता ने प्रतीकात्मक रूप में की है, यथा : "खालसा शब्द में फारसी अथवा उर्दू के पांच अक्षरों का समुच्चय है :

(१) खे - यह 'खुद' की ओर संकेत करता है।
(२) अलिफ - यह 'अकाल पुरख'/'अल्लाह' की ओर इंगित करता है।
(३) लाम - यह 'लब्बेक' को चिन्हित करता है, जिसका अर्थ है : तुम मुझसे क्या चाहते हो? मैं यहीं हूं। तुम क्या लेना चाहते हो?
(४) सुआद - इससे 'साहिब' व्यक्त होता है।
(५) हे इससे 'हुमा' व्यंजित होता है। जिस किसी व्यक्ति के सिर पर यह पक्षी घूमता है वह कुछ ही दिनों में राजा बन जाता है।

इस प्रकार 'खालसा' शब्द में विद्यमान ये सभी अक्षर पांच 'अंक' की पवित्रता को द्योतित करते हैं।

एक इतिहासकार की सूक्ष्म भाषा वैज्ञानिक दृष्टि की पुष्टि सिरदार कपूर सिंघ के इन शब्दों से होती है : 'खालसा' फारसी-तुर्की भाषा का प्रशासनिक पद है, जिसका अर्थ है--शाही; जो किसी के अधीन नहीं; प्रभुत्ता संपन्न और प्रत्यक्ष रूप में सर्व-सामर्थ्यवान (भगवान; अकाल पुरख) द्वारा शासित।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के युद्ध : डॉ. गुप्ता का कथन है कि गुरु साहिब ने अपनी आयु ३० वर्ष की कालावधि में बीस युद्ध किए। नौ युद्ध खालसा पंथ की स्थापना (सन् १६९९ में) तक तथा ग्यारह उसके बाद लड़े गए। इनमें से कुछेक प्रसिद्ध युद्धों का वर्णन किया जा रहा है:

१. अनंदपुर साहिब की पहली लड़ाई, सन् १६८२ : अनंदपुर साहिब, पंजाब के निकटस्थ पहाड़ी राज्य कहिलूर के अंतर्गत आता था। कहिलूर ही कालांतर में 'बिलासपुर रियासत' (आधुनिक हिमाचल प्रदेश का क्षेत्र) कहलाने लगी। वहां का तत्कालीन राजा भीमचंद (सन् १६६७-१७१२) श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की बढ़ती हुई मान्यता और सम्मान के कारण चिढ़ा हुआ था। गुरु जी पर अपना रौब जमाने के लिए राजा ने गुरु साहिब से एक हाथी और कुछ तंबू उधार मांगे ताकि वह उनका उपयोग अपने बेटे की सगाई के अवसर पर कर सके। गुरु साहिब उसकी विकृत भावना को भांप गए और उन्होंने उसे कुछ भी देने से साफ इंकार कर दिया। गुरु साहिब का दो टूक उत्तर प्राप्त होने पर भीमचंद ने अनंदपुर साहिब पर चढ़ाई

कर दी। गुरु साहिब के सैनिकों ने उसे कुछ ही घंटों में खदेड़ दिया।

२. भंगाणी का युद्ध, सन् १६८६ : कुछ वर्षों तक तो बिलासपुर का राजा भीमचंद अपनी पराजय के कारण शांत रहा, किंतु जब गुरु साहिब पाउंटा नगर में डेरा डाले हुए थे तो उसने श्रीनगर के राजा फतेह सिंह के साथ सांठगांठ करके पाउंटा साहिब पर धावा बोल दिया। पठान भी उन लोगों का साथ दे रहे थे। फिर भी गुरु साहिब के मुट्ठी भर सैनिक उनसे खूब भिड़ते रहे। शुरू में गुरु साहिब को भारी हानि उठानी पड़ी। पठानों और राजपूतों की मिलीभुगत देखकर पीर बुद्धू शाह नामक मुस्लिम पीर अपने चार पुत्रों और सात सौ शिष्यों को साथ लेकर गुरु साहिब की सहायता के लिए पहुंच गया। फलतः गुरु साहिब को सफलता प्राप्त हुई। यह युद्ध पाउंटा साहिब (हिमाचल प्रदेश, जिला नाहन) से सात किलोमीटर दूर 'भंगाणी' नामक स्थान पर हुआ था, इसलिए इसे 'भंगाणी' का युद्ध कहा जाता है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'बचित्र नाटक' के आठवें अध्याय में इसका उल्लेख किया है।

३. नादौण का युद्ध, सन् १६८६ : भंगाणी के युद्ध में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की शानदार विजय को देखकर पहाड़ी राजाओं ने गुरु साहिब से संधि कर ली और मुगलों को वार्षिक खिराज देना बंद कर दिया। फलतः मुगल बादशाह औरंगजेब ने मीयां खां नामक अपने एक फौजदार को उगराही के लिए भेजा। मीयां खां जम्मू की ओर चला गया और उसने अपने भतीजे अलफ खां को एतद्दर्थ भेज दिया। कहिलूर (बिलासपुर) का राजा भीमचंद मुगल सेना से भिड़ने के लिए गुरु साहिब की शरण में पहुंच गया। फलतः गुरु साहिब की विशाल सेना से दो दिन लड़कर ही पराजित अलफ खां भाग गया।

४. हुसैनी की चढ़ाई, सन् १६९० : पहाड़ी राजाओं की राजनैतिक सोच डांवाडोल रहती थी। वे गुरु साहिब के राजनैतिक गौरव की वृद्धि देखकर सशंकित भी हो जाते थे और औरंगजेब उसका दुरुपयोग करने लगता था। ऐसा ही एक मौका ताक कर उसने अपने मनसबदार दिलावर खां को गुरु साहिब के विरुद्ध लड़ने का आदेश दिया। दिलावर खां ने अपने पुत्र को इस कार्य-पूर्ति के लिए भेजा तो वह भयभीत होकर लौट आया। दिलवार खां ने अपने गुलाम हुसैन खां को दो हजार सैनिकों के साथ लड़ने के लिए भेजा, किंतु वह अनंदपुर साहिब पहुंचने से पहले ही डरकर भाग आया। इस युद्ध का 'हुसैनी' नाम 'हुसैन खां' के नाम से ही जुड़ा हुआ है।

५. अनंदपुर साहिब का दूसरा युद्ध, सन् १७०३-१७०४ : श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की बढ़ती हुई शक्ति से आतंकित औरंगजेब ने सरहिंद के सूबेदार वजीर खां को आदेश दिया कि वह गुप्त रूप में रातो-रात अनंदपुर साहिब के किले को घेर ले। कई दिनों तक घिरे हुए सिक्ख सैनिक मुगल फौज पर तीरों और गोलियों की बौछार करते रहे। अस्त्र-शस्त्र और गोला-बारूद समाप्त होता देखकर गुरु साहिब के चालीस सूरमाओं ने उन्हें किले से बाहर निकलने के लिए जोर डाला। गुरु साहिब अपने दृढ़ निश्चय पर अडिग रहे और वे चालीस शूरवीर बेदावा (संबंध-विच्छेद का पत्र) लिखकर चले गए। कुछ ही दिनों के बाद उनके संरक्षण की झूठी कसम खाकर तुर्क सेना ने गुरु साहिब से अनंदपुर साहिब खाली करवा लिया। जैसे ही गुरु साहिब अपने साथी योद्धाओं के साथ बाहर आए तो उन पर हमला बोल दिया गया, जिसके

कारण गुरु साहिब के बहुत-से सैनिक हताहत हो गए। फिर भी शाही फौज का मुकाबला करते हुए और शत्रु से बचकर गुरु साहिब चमकौर साहिब पहुंच गए।

६. *चमकौर का युद्ध, सन् १७०४ :* गुरु साहिब सरसा नदी पार करके चमकौर की कच्ची गढ़ी में आराम करने के लिए टिके। मुगलों की सेना उनका लगातार पीछा कर रही थी। फिर भी गुरु साहिब अपने कुछ सिक्ख योद्धाओं के साथ मिलकर मुगल सेना के छक्के छुड़ाते रहे। वहां पर बड़ी दुखद घटना घटी। उनके दो साहिबजादे बाबा अजीत सिंघ जी तथा बाबा जुझार सिंघ जी एवं सन् १६९९ की वैसाखी के दिन अमृत छकने वाले पांच प्यारों में से तीन 'प्यारे' शहीद हो गए। इतना होने पर भी गुरु साहिब ने धैर्य नहीं छोड़ा और कुछ सैनिकों के साथ वेश बदल कर कच्ची गढ़ी से निकल कर माछीवाड़े के जंगल में जा टिके। उनके दो मुसलमान सिक्खों भाई नबी खां तथा भाई गनी खां ने उनकी भरसक सहायता की और गुरु साहिब मुकतसर पहुंचने में सफल हुए।

छोटे साहिबजादों की शहीदी : अनंदपुर साहिब का किला छोड़ने के समय गुरु साहिब के दो साहिबजादे बाबा जोरावर सिंघ जी और बाबा फतेह सिंघ जी को सरहिंद के सूबेदार वजीर खां के सिपाहियों ने पकड़ लिया। जब सूबेदार ने दोनों साहिबजादों को मुसलमान बनने के लिए जोर डाला तो साहिबजादों ने उसे धिक्कार दिया, जिसके कारण उन्हें दीवार में चिनवा दिया गया। आज यह पवित्र स्थान 'गुरुद्वारा फतहगढ़ साहिब' के नाम से विख्यात है।

७. *श्री मुकतसर साहिब का युद्ध, सन् १७०५ :* इतने क्रूरता भरपूर कुकर्मों के बावजूद सरहिंद का सूबेदार वजीर खां निर्दयता से बाज न आया। जब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी पंजाब के पुआधी क्षेत्र (पटियाला, नाभा आदि, पंजाब) को लांघ कर 'खिदराणे की ढाब' (आधुनिक श्री मुकतसर साहिब) पहुंचे तो वजीर खां ने उनका पीछा किया। परस्पर युद्ध में गुरु साहिब को संपूर्ण सफलता मिली। इस युद्ध में गुरु साहिब के ४० सिक्ख शहीदी प्राप्त कर गए। गुरु साहिब से अनंदपुर साहिब का किला न छोड़ने के प्रसंग को लेकर चालीस सिक्खों का जत्थेदार भाई महां सिंघ भी यहीं पर गुरु साहिब की ओर से युद्ध में लड़ता हुआ बुरी तरह से घायल हो गया। उसे मरनासन्न और दुविधाग्रस्त देख कर गुरु साहिब ने उसका 'बेदावे वाला दस्तावेज' फाड़ डाला। तब भाई महां सिंघ ने अंतिम सांस ली। तब से यह पवित्र नगर 'श्री मुकतसर साहिब' के नाम से विख्यात हुआ।

दमदमा साहिब में ठिकाना : श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी अक्तूबर, १७०५ तक श्री मुकतसर साहिब रहे। तद्नंतर वे कुछ जगह रुकते हुए जनवरी १७०६ के आरंभ में तलवंडी साबो नामक कसबे में पहुंचे और वहां पर उन्होंने अपनी रिहायश के लिए किले जैसी ऊंची दीवारों से घिरा हुआ घर बनवाया। इस निवास-स्थान का नाम उन्होंने 'दमदमा' रखा, जो अब 'दमदमा साहिब' नगर कहलाता है।

दमदमा साहिब में दिल्ली से भाई मनी सिंघ जी के साथ माता सुंदरी जी तथा माता साहिब कौर जी पधारीं। उन्होंने आक्रोश में गुरु साहिब से चारों साहिबजादों के बारे में पूछा तो गुरु जी ने अपने खालसा वीरों की ओर संकेत करते हुए उत्तर दिया :

इन पुत्तरन के सीस पर वार दीए सुत चार।
चार मूए तो किआ हुआ जीवत कई हजार।

(शेष पृष्ठ ६६ पर)

"सिक्ख इतिहास" कृत प्रिं तेजा सिंघ-डॉ गंडा सिंघ में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जीवन इतिहास

*-बीबी रजवंत कौर**

पटना शहर में पिता श्री गुरु तेग बहादर साहिब के घर माता गुजरी जी की कोख से २३ पौष, सं १७२३ को महाबली श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जन्म हुआ। जब आपका जन्म हुआ तो आपके पिता श्री गुरु तेग बहादर साहिब आसाम में धर्म-प्रचार के लिए गए हुए थे। आपके जन्म की खबर वहां भेजी गई। श्री गुरु तेग बहादर साहिब के हुक्म से आपका नाम 'गोबिंद राय' रखा गया।

ठसका गांव के रहने वाले पीर भीखण शाह बहुत ही भजन-बंदगी करने वाले पुरुष थे। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने जिस समय जन्म लिया उस दिन बंदगी में लीन पीर भीखण शाह ने अनुभव किया कि पूरब में कोई अलाही ज्योति प्रकट हुई है और उसने निर्भयता से राज्य करके कलयुग में सतयुग और सच का राज्य कायम करना है।

पीर भीखण शाह अपने साथ मुरीदों को लेकर पटना शहर में बाल श्री गोबिंद राय जी के दर्शन करने के लिए पहुंच गया। माता गुजरी जी, माता नानकी जी और भाई किरपाल चंद जी ने बाल के छोटा होने के कारण मना कर दिया, मगर पीर भीखण शाह के मन में प्रेम-भावना देखकर उन्हें बाल गोबिंद राय जी के दर्शन कराए। उसने दो मिट्टी की कटोरियां गुरु जी के आगे रखीं तो बाल गोबिंद राय जी ने दोनों पर हाथ रखकर पीर जी की आशंका दूर कर दी।

बचपन से ही आप शस्त्रों का अभ्यास करने लगे। तीर-कमान, तलवारें आपके मनपसंद खिलौने थे। पांच साल की उम्र में ही आप अपने साथियों के दो दल बनाकर नकली युद्ध करवाते थे और जीतने वाले को इनाम दिया जाता था। माता गुजरी जी आपको गुरमुखी सिखाते और सिक्ख इतिहास की जानकारी देते थे। गुरबाणी भी आपको स्मरण करवाई जाती थी।

आसाम के प्रचार-दौरे के बाद श्री गुरु तेग बहादर साहिब पटना साहिब आ गए। पटना साहिब में कुछ समय रहने के बाद आप पंजाब को आ गए। गुरु जी ने अनंदपुर साहिब पहुंचने के थोड़े समय बाद अपने परिवार को भी अनंदपुर साहिब बुला लिया। १६६९ ई में बादशाह औरंगजेब ने यह हुक्म जारी किया कि हिंदुओं के मंदिरों, धर्मशालाओं और पाठशालाओं को गिरा दिया जाए। हिंदुओं और सिक्खों पर मुसलमान प्रजा से अलग व ज्यादा टैक्स लगाए गए और उनको सरकारी नैकरियों पर से हटा दिया गया। लोगों को अपना धर्म बदल कर मुसलमान बनने पर मजबूर किया जाने लगा। पंजाब और कशमीर में ज्यादा सख्ती की गई और लोगों का धर्म जबरदस्ती से बदलवाया जाने लगा। औरंगजेब ने कशमीर के सूबेदार शेर अफगान को हुक्म किया कि इन लोगों को तलवार के जोर पर मुसलमान बनाया जाए। यहां पर ज्यादा गरीबी के कारण कुछ लोग थोड़े-से लालच में आकर भी अपना धर्म बदलने लगे।

कशमीर के कुछ पंडित दुखी होकर अनंदपुर

452, Block-B, Sandhu Colony, Chheharta, Sri Amritsar-143005, Mob. : 81466-50449

साहिब में श्री गुरु तेग बहादर साहिब के पास आए और अपने दुख की दास्तां गुरु जी को बताई। श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने बाल श्री गोबिंद राय जी के कहने पर पंडितों को कह दिया कि "जाकर सूबेदार को कह दो कि हमारे धार्मिक नेता श्री गुरु तेग बहादर साहिब यदि अपना धर्म बदल लेंगे तो हम भी बदल लेंगे।" बादशाह पहले ही गुरु साहिब के धर्म-प्रचार और उनकी बढ़ती ताकत को अपने राज्य के लिए खतरनाक समझ रहा था। उसने गुरु जी को दिल्ली बुलाकर शहीद कर दिया। उस समय बाल श्री गोबिंद राय जी की आयु केवल नौ वर्ष की थी। गुरु जी को पता चला कि एक सिक्ख भाई लक्खी शाह गुरु जी के पार्थिक शरीर को कुछ साथी सिक्खों की मदद से अपने घर ले आया और अपने घर को आग लगाकर दाह संस्कार किया। भाई जैता नाम का एक दूसरा सिक्ख मुगलों से नजर बचाकर गुरु जी का पावन शीश अनंदपुर साहिब लेकर आया जहां श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने उसका दाह संस्कार किया।

श्री गुरु गोबिंद राय जी कुछ समय के लिए नाहन स्टेट के पहाड़ी इलाके में चले गए। वहां के राजा ने गुरु जी को कुछ जमीन दे दी और उस जगह पर 'पाउंटा' नाम का किला बनाया गया। गुरु जी ने यमुना नदी के रमणीय किनारे पर बैठकर लोगों को पाप तथा जुल्म से मुक्त कराने के बारे में सोचा और आने वाले संघर्ष के योग्य बनाने के लिए अपने आप को तैयार करने लगे। गुरु जी ने घुड़सवारी, शिकार खेलना, तैरना, तीरंदाजी तथा तलवार चलाने में निपुंनता हासिल की और एक मुस्लिम अध्यापक से फारसी की शिक्षा ली। गुरु जी ने हिंदी में बहुत-सी बाणी की रचना की तथा कुछ रचना पंजाबी में भी की। गुरु जी ने अपने दरबार में ५२ कवियों को संरक्षण प्रदान किया। गुरु जी ने कुछ सिक्खों को बनारस में संस्कृति की शिक्षा लेने के लिए भेजा। जो सिक्ख बनारस से संस्कृति की शिक्षा लेकर आए उन्होंने साहित्य-रचना के काम में गुरु जी की मदद की और उनको 'निरमले' कहा जाने लगा।

गुरु जी के बढ़ते प्रभाव को देखकर पहाड़ी राजा गुरु जी से ईर्ष्या करने लगे। कहिलूर के राजा भीमचंद के साथ मिलकर अन्य पहाड़ी राजाओं ने गुरु जी पर हमला कर दिया। गुरु जी ने बड़े साहस से उनका मुकाबला किया। इस लड़ाई में पीर बुद्धू शाह ने अपने चार पुत्रों और ७०० मुरीदों के साथ गुरु जी की मदद की। भाई किरपाल दास ने भी गुरु जी का साथ दिया। यह लड़ाई पाउंटा साहिब से छः मील की दूरी पर भंगाणी के स्थान पर हुई जिसमें गुरु जी ने बहुत बहादुरी से मुकाबला किया। पहाड़ी राजाओं की हार हुई। गुरु जी ने इस जीत से कोई लाभ नहीं उठाया और अनंदपुर साहिब को वापिस आ गए। यहां आकर चार किले बनवाए--"अनंदगढ़, लोहगढ़, केसगढ़, फतहगढ़।" अपनी और सिक्खों की सुरक्षा के योग्य प्रबंध किये।

सरकार ने पहाड़ी राजाओं से कर की मांग की। कुछ ने तो कर देकर अपनी जान छुड़ा ली परंतु कुछ राजा कर न देने से गुरु जी के पास मदद के लिए आए। मुगलों के साथ हो रही लड़ाई में गुरु जी ने पहाड़ी राजाओं की मदद करने के लिए हां कर दी। यह लड़ाई नादौण की जगह पर हुई। इसमें पहाड़ी राजाओं और गुरु जी की जीत हुई। पहाड़ी राजाओं को गुरु जी की मदद से ही सफलता मिली। इससे बादशाह को चिंता होने लगी। उसने अपने पुत्र शहजादा मुअज्जम को पंजाब में भेजा इसलिए

कि गुरु जी और पंजाब के पहाड़ी राजाओं के विरुद्ध कारवाई की जाए।

पहाड़ी राजाओं को सजा दी गई लेकिन गुरु जी के सिक्ख भाई नंद लाल जी के समझाने पर मुगलों द्वारा गुरु जी को कुछ भी न कहा गया। पहाड़ी राजा अब भी गुरु जी की बढ़ती ताकत से खुश नहीं थे। वे अपना मतलब निकाल कर फिर गुरु जी के खिलाफ इकट्ठे हो गए। गुरु जी एक संपूर्ण भाईचारा कायम करना चाहते थे जो पुजारियों और समय के हाकिमों के अत्याचारों से स्वतंत्र हो। गुरु जी ने अपने पूर्व गुरु साहिबान की रखी नींव पर निर्माण करना शुरू किया। जो फसल श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के समय में पक कर तैयार हुई वो गुरु नानक साहिब के समय बोई गई थी। उस फसल को शेष नौ गुरु साहिबान ने पानी दिया। वो तलवार जिसने खालसे का रास्ता साफ किया वो श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने बनाई थी, लेकिन उसका फौलाद श्री गुरु नानक देव जी ने तैयार किया था।

१६९९ ई की वैसाखी के दिन गुरु साहिब ने अनंदपुर साहिब में खालसा पंथ की साजना की। बहुत दूर-दूर से सिक्ख संगत अनंदपुर साहिब में इकट्ठी हुई। गुरु साहिब ने अपनी तलवार निकाली और कहा कि "कोई ऐसा आदमी है जो धर्म की खातिर अपनी जान देने के लिए तैयार हो?" आपने अपनी मांग दोहराई तो लाहौर के भाई दयाराम जी ने अपने आप को कुर्बानी के लिए पेश किया। इसी तरह गुरु जी ने दूसरी, तीसरी, चौथी और पांचवीं बार सिक्खों को कुर्बानी देने के लिए कहा। क्रमश: भाई धरम दास, भाई मोहकम चंद, भाई साहिब चंद, भाई हिम्मत राय ने अपना-अपना शीश गुरु जी को भेंट किया। गुरु जी ने उनको नई पोशाक पहनाई, अमृत तैयार करके छकाया और 'पांच प्यारों' का नाम दिया। 'पांच प्यारों' को अमृत छका कर फिर खुद उनसे अमृत छका। इस तरह गुरु जी और उनके अमृतधारी सिक्खों में कोई अंतर नहीं रहा। इसके बाद पांच प्यारे लोगों को 'खालसा' बनाने के लिए अमृत-पान करवाते थे। कुछ ही दिनों में लगभग ८०,००० सिक्खों ने अमृत-पान किया। गुरु जी ने अपने सिक्खों को उपदेश दिया कि वे शुद्ध जीवन बिताएं; उन्हें कोई भी नशा करने से मना किया। गुरु जी ने तंबाकू के सेवन को मना किया और कहा कि यह शारीरिक तौर पर हानिकारक है। गुरु जी ने पांच ककार धारण करने को कहा, जैसे--केश, कंघा, कछहरा, कड़ा, कृपाण। सभी सिक्खों को अपने नाम के साथ 'सिंघ' शब्द लगाने का हुक्म किया। एक-दूसरे को मिलते समय 'वाहिगुरु जी का खालसा, वाहिगुरु जी की फतह' बुलाने का आदेश दिया। गुरु साहिब ने जुल्म का मुकाबला हिम्मत से करने को कहा और इज्जत से जीना सिखाया। सिक्खों को मसंदों के प्रभाव से मुक्त कराया और मसंद-प्रथा को खत्म कर दिया। होली के त्योहार को अलग ढंग से मनाना शुरू किया और इसको 'होला मोहल्ला' का नाम दिया। सिक्ख सैनिक परेड करते और आपस में फ़रज़ी युद्ध करते तथा जीतने वालों को इनाम दिया जाता।

पाप को खत्म कर धर्म की स्थापना और परमात्मा की भक्ति के लिए गुरु जी ने एक नई प्रणाली शुरू की। दुनिया के लोग इस नए धर्म को देखकर दंग रह गए। मुगलों को यह डर पैदा हो गया कि यह नया धर्म उनकी राज-सत्ता को समाप्त कर देगा। उन्होंने समझा कि गुरु जी उनके ऊपर हमला करके उनको नष्ट करने के लिए फौज तैयार कर रहे हैं। अनंदपुर साहिब कहिलूर रियासत के इलाके में था और

पहाड़ी राजाओं से घिरा हुआ था। कहिलूर के राजा ने गुरु जी को एक पत्र लिखा कि वे उसके इलाके को छोड़कर चले जाएं या उनके अधीन रहने के लिए कर भरें। गुरु जी ने इन दोनों बातों को मानने से मना कर दिया, जिससे उसने गुरु जी पर हमला करने के लिए दिल्ली के मुगल बादशाह से मदद मांगी। उसने लाहौर और सरहिंद के गवर्नर की मदद से गुरु जी पर सन् १७०१ ई में अनंदपुर साहिब में हमला कर दिया। सिंघों ने बहुत बहादुरी से मुकाबला किया और यह लड़ाई तीन वर्ष तक चलती रही। दुश्मनों ने अनंदपुर साहिब के किले के अंदर राशन-पानी जाना रोक दिया। सिंघ भूख और प्यास से निर्बल होने लगे। कुछ सिंघों ने अनुभव किया कि वे भूखे-प्यासे मुकाबला नहीं कर सकते, अत: वे अनंदपुर साहिब का किला छोड़कर आ गए। गुरु जी और बाकी सिंघ अपने इरादे में दृढ़ रहे। गुरु जी से सिंघों की भूख-प्यास देखी नहीं जाती थी। मुगलों तथा पहाड़ी राजाओं ने भी कहा कि आप अनंदपुर साहिब का किला छोड़ कर चले जाओ, आपको यहां से जाते वक्त कोई मुश्किल नहीं आने दी जाएगी। न चाहते हुए भी गुरु जी ने अनंदपुर साहिब का किला छोड़ने का फैसला कर लिया। आप सर्दी के मौसम में अनंदपुर साहिब छोड़कर निकले तो सरसा नदी के पास दुश्मन अपना किया इकरार भुलाकर भारी फौज लेकर हमला करने को आ गए। रात के अंधेरे और बारिश में बहुत कठिन लड़ाई हुई।

सारी रात लड़ते-लड़ते सुबह हो गई। गुरु साहिब ने रोजाना की तरह नित्तनेम किया और परमात्मा की स्तुति में अपना पाठ पूरा किया। गुरु जी का बहुत-सा सामान, अनमोल साहित्य, जो हस्तलिखित था, सरसा नदी में बह गया। आपके परिवार के लोग एक दूसरे से अलग हो गए। गुरु जी और उनके बड़े साहिबजादे चमकौर साहिब के स्थान पर पहुंच गए। माता गुजरी जी और छोटे साहिबजादे-बाबा जोरावर सिंघ और बाबा फतह सिंघ अपने पुराने सेवादार गंगू के घर जा ठहरे। इस सेवादार ने लालच में आकर धोखे से इनको मोरिंडा थाने के कोतवाल को पकड़वा दिया और उसने सरहिंद के सूबेदार वजीर खां के हवाले कर दिया, जिसने दोनों साहिबजादों को नींव में जिंदा चिनवा कर शहीद कर दिया और माता गुजरी जी भी परलोक सिधार गए।

दुश्मन की फौज ने गुरु जी का पीछा किया और चमकौर साहिब में जाकर हमला कर दिया। चमकौर की कच्ची हवेली में ४० सिक्खों ने दुश्मन की भारी फौज का बहुत बहादुरी से मुकाबला किया। गुरु जी के दोनों साहिबजादे इस युद्ध में शहीद हो गए। जब हवेली में केवल पांच सिक्ख रह गए तो उन्होंने गुरु जी को विनती की कि आप यह जगह छोड़कर चले जाओ! गुरु जी सिक्खों की विनती मान कर वहां से चले गए और कई दिन माछीवाड़े के जंगलों में नंगे पैर, भूखे-प्यासे रहे, धरती पर अपना बिस्तर बना कर सोते रहे। दो मुसलमान भाई गनी खां और भाई नबी खां ने देखा कि शाही फौजें आपके पीछे लगी हैं। उन दोनों ने अपनी जान को खतरे में डालकर गरु जी की मदद की। वे गुरु जी को मुस्लिम पीर की भांति कपड़े पहनाकर पालकी में बैठाकर चल पड़े। रास्ते में पीछा करती गश्ती टुकड़ी ने जब पूछा तो उन्हें शंका हुई। पीर मुहम्मद नाम के काजी को बुलाया गया। वो गुरु को फारसी की शिक्षा दिया करता था। उस काजी ने स्थिति को संभाल लिया और गुरु जी को आगे जाने दिया।

गुरु जी जट्टपुरा गांव पहुंच गए। वहां आपको एक और मुसलमान भाई राय कल्ला मिला। उसने गुरु जी की सेवा की और सरहिंद से अपना आदमी नूरा माही भेज कर छोटे साहिबजादों की खबर मंगवा कर दी। जब भाई नूरे माही ने आकर गुरु जी के छोटे साहिबजादों के शहीद होने की खबर दी तो गुरु जी बड़े सहज से बोले कि "मेरे पुत्र तो हमेशा के लिए जिंदा हो गए, लेकिन इस सरहिंद को मरना पड़ेगा।" यह कह कर गुरु जी ने अपने तीर से एक झाड़ी को उखेड़ दिया और कहा कि "मुगलों की जड़ें इस झाड़ी की तरह उखाड़ दी जाएंगी।"

गुरु जी वहां से आगे को चल पड़े। गुरु जी फरीदकोट के पास पहुंच गए। पीछे-पीछे शाही फौजें आपका पीछा कर रही थीं।

गुरु जी 'खिदराणे की ढाब' पर पहुंच गए। बहुत-से सिक्ख भी आपके पास आ गए थे। माझे के सिक्ख, जो अनंदपुर साहिब के किले में गुरु जी को छोड़कर आ गए थे, वे भी वहां पहुंच गए। शाही फौज और गुरु जी के बीच बहुत भयानक युद्ध हुआ। इस युद्ध में गुरु जी की जीत हुई। जिस जगह पर यह युद्ध हुआ उसको आजकल 'श्री मुकतसर साहिब' कहा जाता है। गुरु जी को पता चला कि जो सिंघ अनंदपुर साहिब के किले से चले गए थे वो भी इस युद्ध में शामिल हुए है और उन्होंने अपनी जानें तक कुर्बान कर दी हैं। गुरु जी ने उन सिंघों को माफ कर दिया और हर एक को गले लगाया तथा उन्हें 'मुकतों' की उपाधि दी। इन ४० मुकतों के नाम पर ही उस जगह का नाम 'श्री मुकतसर साहिब' रखा गया। इन मुकतों का जिक्र हर रोज अरदास में किया जाता है।

इसके बाद गुरु साहिब तलवंडी साबो में पहुंचे और एक भाई डल्ला के पास ठहरे। आप नौ महीने वहां रहे और उस स्थान को शिक्षा का केंद्र बना दिया। इस स्थान को 'गुरु की काशी' कहा जाता है। आप जी ने यहां रहकर श्री गुरु ग्रंथ साहिब की पुनर्संपादना कर सम्पूर्णता प्रदान की । गुरु साहिब नौ महीने यहां पर ठहरे। रास्ते में दीना नामक नगर में फारसी में औरंगजेब को एक पत्र लिखा। जिक्र था कि "बादशाह की ओर से गुरु जी के साथ बुरा व्यवहार किया गया। उनके साहिबजादे और बहुत-से सिक्ख शहीद हो गए, लेकिन फिर भी जीत गुरु जी की ही हुई। जो काम गुरु जी ने शुरू किया वो एक विशाल लहर बन गयी। कुछ सिक्खों को शहीद कर इस लहर को कुचला नहीं जा सकता।" इस पत्र को पढ़कर बादशाह औरंगजेब का दिल नरम हो गया और उसने गुरु जी को मिलने के लिए बुलाया। गुरु जी अभी उसके पास पहुंचे नहीं थे कि उसकी पहले ही (१७०७ ई में) मौत हो गई। गुरु जी ने जो पत्र बादशाह को लिखा था उसको 'जफरनामा' (जीत की चिट्ठी) कहा जाता है।

गुरु साहिब दक्षिण की ओर जा रहे थे। सफर के दौरान सरहिंद के दो पठान गुप्त रूप में आपका पीछा कर रहे थे। वे आदमी सरहिंद के वजीर खां ने गुरु जी को खत्म करने के लिए भेजे थे। वो जानता था कि मैंने गुरु जी के साहिबजादों को शहीद किया है और गुरु जी की सख्त विरोधता की है। उसको अपनी जान का खतरा था कि गुरु जी औरंगजेब के पुत्र बहादुर शाह से मुझे सख्त सजा दिलवा सकते हैं।

गुरु जी नांदेड़ पहुंच गए। ये दोनों पठान भी गुरु जी के पास आने-जाने लगे और गुरु जी से जान-पहचान करने लगे। एक शाम को जब गुरु जी नित्तनेम के पश्चात आराम कर रहे थे और वहां खड़ा पहरेदार भी नींद के

सामने बेबस हो गया तो उन दोनों को अपनी चाल चलने का मौका मिल गया। एक पठान ने गुरु जी के पेट में छुरा घोंप दिया। दूसरा वार करने ही लगा था कि गुरु जी ने तलवार निकाली और उसको वहीं मौत के घाट उतार दिया। दूसरा पठान जो बचकर निकल रहा था, गुरु जी के सिंघों ने उसका भी काम तमाम कर दिया। सिंघों ने गुरु जी का जख्म सिल दिया। थोड़े दिन में ही यह जख्म ठीक होने लगा।

एक दिन गुरु जी कमान का चिल्ला चढ़ाने लगे तो उस घाव में से पुनः खून बहने लगा और लगाए हुए टांके भी टूट गए। गुरु जी ने सिक्खों को किसी तकलीफ का अहसास तक न होने दिया। गुरु जी अंतिम समय तक खुश थे। किसी को भी पता नहीं चला कि गुरु जी का अंतिम समय आ रहा है। गुरु जी ने ७ अक्तूबर, १७०८ की आधी रात के दो घंटे पश्चात अपने सिक्खों को जगाया और उनको आखिरी फतह बुलाकर विदायगी ली तथा ज्योति-जोत समा गए।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने एक महान कौम की सृजना की और सिक्ख कौम को जत्थेबंद करके खालसा पंथ चलाया। आगे से शारीरिक तौर पर देहधारी गुरु-पदवी को खत्म किया तथा श्री गुरु ग्रंथ साहिब को गुरु-पदवी दी। सिक्खों को आदेश किया कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब सबके 'गुरु' हैं, इसमें ही विश्वास रखना और बाणी अनुसार अपना जीवन व्यतीत करना। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जो शिक्षा है उसके अनुसार ही कौम की और अपनी अगुआई करनी है।

"History of Sikhs" कृत डॉ. हरीराम गुप्ता में *(पृष्ठ ६० का शेष)*

श्री आदि ग्रंथ साहिब का पुनर्लेखन : श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने दमदमा साहिब के स्थान पर विराजमान होकर श्री आदि ग्रंथ साहिब में नवम पातशाह की बाणी शामिल करवा प्रतिष्ठित सिक्ख विद्वान भाई मनी सिंघ जी की कलम से पुनः बीड़ लिखवाई। राग तथा छंद-योजना पूर्ववत् रखी गई। इसकी चार हस्तलिखित प्रतियां तैयार करवाई गईं। उनमें से एक श्री अमृतसर के 'अकाल बुंगा' में, दूसरी पटना साहिब (बिहार) में, तीसरी अनंदपुर साहिब में और चौथी दमदमा साहिब में सुरक्षित है। लेखक का मत ज्ञानी गिआन सिंघ के "पंथ प्रकाश", पर आधारित है।

नांदेड़ (महाराष्ट्र) की ओर प्रस्थान : श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी लगभग दस महीने दमदमा साहिब में टिके और वहां पर उनके अनुयायी गुरमुख सिक्खों की गिनती खूब बढ़ी। वे जानते थे कि मुगल बादशाह औरंगजेब के सामने सरहिंद के सूबेदार वजीर खां की क्रूरताओं का कच्चा चिट्ठा खोलने के बाद भी कुछ हाथ न लगेगा। अतः वे नरैणा (राजस्थान) के रास्ते नांदेड़ पहुंचे, जो कि गोदावरी नदी के तट पर स्थित है। वहीं पर जब वे ध्यान-मग्न थे तो किसी पठान ने मौका ताक कर उन पर छुरे से वार कर दिया। अपना अंतिम समय समीप जानकर उन्होंने ८ अक्तूबर, सन् १७०८ को सिक्ख पंथ के लिए श्री आदि ग्रंथ साहिब को 'गुरु' की पदवी प्रदान करके सांसारिक चोला छोड़ दिया। तभी से सिक्ख धर्म में "श्री आदि ग्रंथ साहिब" को "श्री गुरु ग्रंथ साहिब" के नाम से स्मरण किया जाता है तथा किसी भी देहधारी 'गुरु' को मान्यता नहीं दी जाती।

"पंजाब का इतिहास" कृत डॉ. ए. सी. अरोड़ा में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी और औरंगजेब के संबंध

*-बीबी मनिंदर कौर**

नौवें गुरु श्री गुरु तेग बहादर साहिब द्वारा सिक्ख धर्म के प्रचार एवं प्रसार के कार्यों के कारण समकालीन मुगल बादशाह औरंगजेब काफी आक्रोश में था। वह नहीं चाहता था कि हिंदोस्तान में मुस्लिम धर्म के अलावा कोई अन्य धर्म भी हो। "वह भारत को 'दार-उल-इसलाम' अर्थात् 'इसलाम की धरती' बनाना चाहता था। उसने हिंदुओं को उच्च सरकारी पदवियों से हटा दिया। गैर-मुस्लिमों पर विशेष तरह के टैक्स लगा दिए। हिंदुओं को जोर-जब्र के साथ मुसलमान बनाने के प्रयत्न भी किए। दूसरी तरफ इसी कड़ी में कशमीर के सूबेदार इफ्तिखार खां ने औरंगजेब की धार्मिक नीति को कठोरता से लागू करना शुरू कर दिया। इन परिस्थितियों में कशमीरी पंडितों ने माखोवाल (अनंदपुर साहिब) में श्री गुरु तेग बहादर साहिब के पास आकर रक्षा हेतु प्रार्थना की। इसलिए गुरु साहिब ने तिलक-जनेव (धारण करने वालों) की रक्षा के लिए अपना बलिदान देने का निश्चय किया।" (पृष्ठ १५६)

गुरु जी भाई मतीदास जी, भाई सतीदास जी और भाई दिआला जी को साथ लेकर दिल्ली के लिए रवाना हो गए। मुगल हकूमत द्वारा उनको रास्ते में ही गिरफ्तार कर लिया गया और सरहिंद के रास्ते दिल्ली ले जाया गया। ११ नवंबर, १६७५ को गुरु साहिब और उनके तीनों परम सेवक सिक्खों को इसलाम धर्म कबूल न किये जाने के कारण कठिन यातनाएं देते हुए शहीद कर दिया गया। श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहीदी के पश्चात् सिक्ख मुगल हकूमत के खिलाफ भड़क उठे।

इस समूचे घटनाक्रम के बाद मुगलों और सिक्खों के बीच जो घटनाएं घटीं उसका वर्णन प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. ए. सी. अरोड़ा की पुस्तक "पंजाब का इतिहास" में मिलता है, जिसमें श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहीदी के बाद श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी और मुगल बादशाह औरंगजेब के आपसी संबंधों की भी जानकारी मिलती है।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी तथा औरंगजेब के आपसी संबंध : इतिहासकार के मुताबिक गुरगद्दी पर बैठने के बाद श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी कई वर्षों तक माखोवाल और उसके बाद पाउंटा साहिब में सैनिक तैयारियों तथा साहित्यिक कार्यवाहियों में लगे रहे। १६८८ ई. में उन्होंने भंगाणी के स्थान पर कई पहाड़ी राजाओं को हरा दिया। इस युद्ध के पश्चात कई पहाड़ी राजे गुरु साहिब के साथ मिल गए और १६९० ई. में उन्होंने अलफ खां के अधीन मुगल सेना को नादौण में हरा दिया। जब गुरु साहिब की बढ़ती हुई शक्ति की सूचना औरंगजेब को दक्षिण में मिली तो उसने १६९३ ई. में कांगड़ा के मुगल फौजदार दिलावर खां को गुरु साहिब के विरुद्ध कार्यवाही करने का हुक्म भेजा। दिलावर खां ने गुरु साहिब और विपक्षी पहाड़ी राजाओं के विरुद्ध एक के बाद एक कई मुहिमें भेजीं, जो असफल रहीं। इन असफलताओं का समाचार

***२९४६/७, बाजार लोहारां, चौंक लछमणसर, श्री अमृतसर-१४३००६, मो. : ९०२३७२०५२३*

मिलने पर औरंगजेब ने शहजादा मुअज्जम को कार्यवाही करने के लिए पंजाब भेजा। मुअज्जम ने विपक्षी पहाड़ी राजाओं के विरुद्ध सेनाएं भेजीं और उन्हें अपने अधीन कर लिया। अपने मीर मुंशी भाई नंद लाल जी के प्रभाव के कारण उसे (औरंगजेब को) विश्वास हो गया कि गुरु साहिब निर्दोष हैं और किसी भी इलाके पर हमला करना अथवा अपना राज्य स्थापित करना उनका उद्देश्य नहीं। इतिहासकार के इस कथन पर यह भी बात विचारयोग्य है कि दुनिया के इतिहास में आज तक हुए सभी युद्ध केवल जर, जोरू और जमीन के लिए हुए हैं लेकिन दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इतिहास में जितने भी युद्ध किए वे समूची मानवता की धार्मिक आजादी और भलाई के लिए ही किये हैं। उन्होंने मुगल हकूमत द्वारा लोगों पर किए जा रहे अत्याचारों और अन्याय का डट कर सामना किया। उन्होंने कभी भी अपने आप को राजाओं-महाराजाओं की भांति आम लोगों से बड़ा नहीं समझा। उन्होंने अपने आप को केवल अकाल पुरख का 'दास' ही माना।

डॉ. ए. सी. अरोड़ा अपनी अगली पंक्तियों में लिखते हैं कि "१६९९ ई. में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'खालसा' की सृजना की, जिसके फलस्वरूप उन्होंने अपने सिक्खों में दलेरी, बहादुरी, कुर्बानी और एकता की भावनाएं पैदा कर दीं। बिलासपुर का राजा भीमचंद और आस-पास के अन्य पहाड़ी राजा घबरा गए। उन्होंने १७०१ ई. में इकट्ठे मिलकर अनंदपुर साहिब पर हमला कर दिया, परंतु वे गुरु साहिब को हराने में असफल रहे। पहाड़ी राजाओं की प्रार्थनाओं पर लाहौर के सूबेदार और सरहिंद के फौजदार ने पहाड़ी राजाओं की सहायता हेतु विशाल मुगल सेना भेजी। अनंदपुर साहिब को दूसरी बार घेर लिया गया। गुरु साहिब और उनके सिक्खों ने दुश्मनों का डट कर मुकाबला किया। अंत में रसद के खत्म हो जाने के कारण गुरु साहिब को १७०४ ई में किला छोड़ना पड़ा। दुश्मनों ने गुरु साहिब का तेजी से पीछा किया। १७०६ ई में गुरु साहिब के तलवंडी साबो पहुंचने से पहले सिक्खों और मुगलों के बीच भी युद्ध हुए। पहला युद्ध 'शाही टिब्बी' के स्थान पर हुआ, जहां भाई उदै सिंघ ५० सिक्खों सहित शहीद हो गए। दूसरा युद्ध 'सरसा नदी' के किनारे हुआ जिसमें भाई जीवन सिंघ की अगुआई में १०० सिक्खों ने दुश्मनों को बहुत नुकसान पहुंचाया और अंत में सभी शहीद हो गए। तीसरा युद्ध 'चमकौर साहिब' में हुआ, जिसमें गुरु साहिब ने केवल ४० सिक्खों के साथ अनेकों मुगलों का बहुत बहादुरी से मुकाबला किया। अंत में ३५ सिक्ख, जिनमें गुरु साहिब के दो बड़े साहिबजादे भी शामिल थे, शहीद हो गए। चौथा युद्ध 'खिदराणा' (मुकतसर) में हुआ। इस युद्ध में गुरु साहिब ने मुगल सैनिकों की विशाल सेना को अपने बहुत कम सिक्खों की सहायता से हरा दिया। इस लड़ाई में उनके ४० सिक्ख भी शहीद हो गए जिन्होंने अनंदपुर साहिब में संकट के समय गुरु जी को बेदावा देकर उनका साथ छोड़ दिया था।

उपरोक्त सभी घटनाओं-युद्धों के बाद गुरु साहिब ने हुई सभी जंगों, कार्यवाहियों के अलावा मुगल हकूमत तथा औरंगजेब के अत्याचारों की समीक्षा की एवं औरंगजेब द्वारा सिक्खों और अन्य जनसाधारण पर किए जुल्म की दासतां को बयान करता हुआ एक विजय-पत्र (जफरनामा) लिखा, जिसमें मुगलों द्वारा 'कुरान शरीफ' की कसमें खाने के बाद उन्हें तोड़ने की कुटिल मुगल नीति का स्पष्ट खिंडन कया गया।

(शेष पृष्ठ ८० पर)

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी और उनका खालसा पंथ

*–डॉ. सत्येंद्रपाल सिंघ**

अद्वितीय कार्यों के कर्त्ता, महानायक, कृपा और दया के परम स्रोत, सामाजिक हितों के बेमिसाल पोषक, अद्वितीय शक्तियों के स्वामी श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी एक सम्पूर्ण ऊर्जा थे। उनकी सम्पूर्णता दैवीय थी जो साधारण मनुष्य की दृष्टि में समा सके ऐसा कहां संभव है? जितना जिसने समझ लिया, उतना वर्णन कर दिया। पटना साहिब से शुरू होकर श्री हजूर साहिब तक उनके महान व्यक्तित्व से न जाने कितने रंग प्रकट हुए जो संसार का इतिहास बदलते चले गये और इंसानियत का खूबसूरत भविष्य सुनिश्चित करते चले गये, जिसमें सत्य के मार्ग पर चलने वाले अकेले व्यक्ति में सवा लाख आतताइयों से लड़ने के लायक पर्याप्त बल हो और मदांध बाज की ताकत एक निरीह चिड़िया का भी बाल बांका न कर सके। तुच्छ मानवीय बुद्धि कहां उनकी महिमा की बात कर सकती है?

कहा बुद्धि प्रभ तुच्छ हमारी ॥
बरन सकै महिमा जु तिहारी ॥
हम न सकत कर सिफत तुमारी ॥
आप लेहु तुम कथा सुधारी ॥३॥२॥ (बचित्र नाटक)

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी में हमें "कामल करीम" के दर्शन होते हैं। परमात्मा के जितने भी गुण आज तक सुने गये हैं वे सारे ही तो उनके जीवन में अलग-अलग समय पर सामने आते रहे। ऐसा लगता है कि समस्त सद्गुणों की परिभाषाएं ही गुरु साहिब से आरंभ हुईं। सारे गुण सर्वोत्कृष्ट और सारे सर्वोत्कृष्ट गुणों की कृपा संसार पर। गुरु जी ने जो कुछ किया वह वही कर सकते थे। इतना होने के बावजूद उन्होंने खुद को 'परम पुरख का दास' कहा और निम्न चेतावनी भी दी :

जो हम को परमेसर उचरिहैं ॥
ते सभ नरक कुंड महि परिहैं ॥
मो कौ दास तवन का जानो ॥
या मै भेद न रंच पछानो ॥३२॥६॥
(बचित्र नाटक)

गुरु साहिब ने ऐसा क्यों लिखा? मुख्य बात जो समझ में आती है वो यह कि आदि काल से ही कितने ही महापुरुषों को अवतार मान कर उनकी पूजा होती आयी है जिससे तमाम तरह की भ्रांतियों और कई विरोधों ने भी जन्म लिया। सामान्य मनुष्य ऐसी स्थितियों में परमात्मा के मार्ग पर चलने के बजाय भटकता अधिक रहा है। गुरु साहिब ने "बचित्र नाटक" में विस्तार से इस परिप्रेक्ष्य में परमेश्वर से हुए जन्म पूर्व संवाद का वर्णन किया है। अकाल पुरख ने उन्हें पृथ्वी पर जाने का आदेश देने के पूर्व कहा कि उन्होंने जब सृष्टि की रचना की तो सबसे पहले दैत्य बनाये जो अपने बाहुबल में इतने मत्त हो गये कि अकाल पुरख के मंतव्य को ही भूल गये। परमेश्वर ने उनका नाश करने देवताओं को भेजा। देवताओं ने अपनी ही पूजा करानी आरंभ कर दी और स्वयं ही परमेश्वर बन बैठे। इसके बाद परमेश्वर ने पृथ्वी, सूर्य, चंद्रमा, अग्नि, पवन, जल, पाषाण आदि को मनुष्य के कर्मों का साक्षी बनाया किंतु

**E-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७, मो. : ९४१५९६०५३३*

मनुष्य इन्हें भी ईश्वर मान कर इनकी पूजा करने लगा। सिद्ध, साधु पुरुष भी अपनी-अपनी राह पर लोगों को चलाने लगे। जिसको तनिक भी ज्ञान हो गया वो स्वयं को सर्वोच्च समझने लगा और परमात्मा को भूल कर अपनी पूजा कराने लगा। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी क्रमवार इसकी चर्चा करने के बाद लिखते हैं कि परमात्मा और लोगों को परमात्मा से जोड़ने का उपक्रम नहीं हुआ। गुरु साहिब ने स्पष्ट किया कि वे तो तप में लीन थे। उन्हें परमात्मा के आदेश पर और परमात्मा की राह को लोगों के सामने रखने के लिये ही धरती पर आना पड़ा। उन्होंने कहा कि वे तो परमेश्वर के दास हैं। इससे निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं :

१. उन्हें तत्कालीन स्थितियों का पूरा ज्ञान था तभी उन्होंने कहा कि :

सभ अपनी अपनी उरझाना ॥
पारब्रहम काहू न पछाना ॥२८॥२॥ (बचित्र नाटक)

२. उन्हें ज्ञात था कि परमात्मा की कृपा के बिना वे कुछ नहीं कर सकते :

पंथ चलै तब जगत मै जब तुम करहु सहाइ ॥३०॥६॥
(बचित्र नाटक)

३. गुरु साहिब को अपना कार्य पूर्ण विनम्रता और दास-भाव से करना था :

मो कौ दास तवन का जानो ॥
या मै भेद न रंच पछानो ॥३२॥६॥ (बचित्र नाटक)

४. उन्हें भली प्रकार पता था कि संसार में क्या करने के लिये उनका जन्म हुआ है। वे चुपचाप बैठ कर अधर्म को देखने नहीं आये थे:

जो प्रभ जगति कहा सो कहिहों ॥
म्रित लोक ते मोन न रहिहों ॥३३॥६॥ (बचित्र नाटक)

५. गुरु साहिब की राह परमात्मा की राह थी, जिसके अतिरिक्त उनकी कोई सोच नहीं थी, कोई कर्म नहीं था :

कहिओ प्रभू सु भाखि हों ॥
किसू न कान राखि हों ॥
किसू न भेख भीज हों ॥
अलेख बीज बीज हों ॥३४॥६॥ (बचित्र नाटक)

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का मिशन था परमात्मा के नाम का बीज इस अधर्मी धरती पर बोना और उसे प्रफुल्लित करके उस परमात्मा के यश को प्रतिष्ठित करना, जिससे लोग दूर हो गये थे और पारस्परिक मतभेदों एवं संघर्षों में उलझे हुए थे। इस कार्य को वे पूरी सक्रियता से जीवन-पर्यंत करते रहे और अंत तक उसी पर अडिग रहे जो प्रभु ने उनसे कहा था। उन्होंने जीवन भर धर्म की रक्षा की, लोगों को परमात्मा से जोड़ा, उस बर्बर मुगल शासक औरंगजेब से भी दुराग्रह, दुर्भावना नहीं रखी, जिसने उनके समस्त परिवार को अपनी क्रूरता का शिकार बनाया था, किंतु अधर्म को सहन नहीं किया। गुरु साहिब ने परमात्मा की महिमा का वर्णन अपनी विभिन्न बाणियों में किया है और ध्यान से देखने पर वे सारी विशिष्टताएं उनमें दिखती हैं। गुरु साहिब ने "अकाल उसतति" के आरंभ में ही परमात्मा की समदृष्टि का बड़ा सुंदर चित्रण किया है :

हसत कीट के बीच समाना ॥
राव रंक जिह इक सर जाना ॥
अद्वै अलख पुरख अबिगामी ॥
सभ घट घट के अंतरजामी ॥२॥
अलख रूप अछै अनभेखा ॥
राग रंग जिह रूप न रेखा ॥
बरन चिहन सभहूं ते निआरा ॥
आद पुरख अद्वै अबिकारा ॥३॥
बरन चिहन जिह जात न पाता ॥
सत्र मित्र जिह तात न माता ॥
सभ ते दूरि सभन ते नेरा ॥
जल थल महीअल जाहि बसेरा ॥४॥
(अकाल उसतति)

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के सारे निर्णय, सारे कदम उन्हीं आदर्शों को प्रतिफल बनकर सामने आये। उन्होंने मनुष्य को परमात्मा का अंश माना और प्रत्येक मनुष्य को उसी दृष्टि से सम्मान दिया। उन्होंने खालसा की सृजना करके राजा व रंक को एक धरातल पर ला खड़ा किया और ऊंच-नीच के सारे भेद मिटा दिये। तत्कालीन समाज में अपने नाम के आगे या पीछे पदवी, विशेषण, जाति लगाकर स्वयं को दूसरों से भिन्न और उच्च दिखाने का प्रयास किया जाता था। इससे कुछ लोगों के मन में गर्व और कुछ के मन में हीनता की भावना उत्पन्न होती थी जो सामाजिक समरसता की जड़ों को खोखला करती थी। व्यक्ति की पहली पहचान उसके नाम से होती है जिसके महत्व को पहचान कर गुरु साहिब ने इस अभिमान पर करारा प्रहार करते हुए खालसा पंथ को अपने नाम के आगे समान रूप से "सिंघ" शब्द लगाने का आदेश दिया। इससे जहां उन्होंने अभिमान का शमन किया वहीं आत्म-सम्मान को भी ऊपर उठाया। गुरु साहिब ने खेत में काम करने वालों, लकड़ी और चमड़े का काम करने वालों तथा बेसहारों, सभी को उन सबके साथ समान रूप से "सिंघ" बना दिया। उन्होंने सिद्ध किया कि सभी मनुष्य बराबर सम्मान के अधिकारी हैं क्योंकि सभी परमात्मा की ही संतान हैं।

गुरु साहिब ने नाम की समानता के साथ ही वेश की समानता को भी सुनिश्चित कर दिया। उन्होंने जो पांच 'ककार' खालसा को पहचान स्थापित करने के लिये प्रदान किये उनका अलग-अलग महत्व अनेक तरह से बताया, किंतु उनके मूल में भी समानता की ही भावना काम करती थी, यह बात तय है। पांचों ही ककारों का नाम 'क' से आरंभ होता है और ये 'ककार' मनुष्य को एक विशिष्टता प्रदान करने वाले थे, सादगी से जोड़ने वाले थे। वेश-भूषा हर काल में गर्व और आडंबर को बढ़ाने वाली रही है। गुरु साहिब ने तय किया कि जो पांच 'ककार' धारण करेगा वही 'खालसा' कहलायेगा।

नाम में समानता ला देना और वेशभूषा का एक मापदंड निर्धारित कर देना एक सुविचारित और सम्पूर्ण बदलाव था जो मानव सभ्यता के इतिहास में न कभी इसके पहले हुआ था, न अब तक हुआ है और न कभी होने वाला है। इस सम्पूर्ण बदलाव में अंतर की शुद्धता का समान स्तर भी शामिल था जिसे गुरु साहिब ने खंडे-बाटे का अमृत छकाकर अंजाम दिया। अमृत छकना एक तरह से लोगों को मन के धरातल पर एक-दूसरे से जोड़ देना था। जिस तरह से पांच 'ककार' सभी की आर्थिक सामर्थ्य के अंदर थे उसी तरह अमृत-पान एक नितांत सरल और सहज क्रिया थी। इस तरह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने तन और मन को इस तरह परमात्मा से जोड़ा जिसके दूरगामी सामाजिक और आर्थिक प्रभाव भी पड़े। धर्म जो कर्मकांडों और पुजारियों के अधिकार-क्षेत्र का विषय बनकर रह गया था उसे गुरु साहिब ने आम लोगों से सीधे-सीधे जोड़ दिया और जन-जन के मन-वचन-कर्म का विषय बना दिया।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का यह अतुलनीय कार्य था कि उन्होंने धर्म के सम्पूर्ण और सत्य स्वरूप को सामने रखा तथा मनुष्यों की सम्पूर्ण तैयारी का संकल्प सिद्ध किया।

इस तरह गुरु साहिब सम्पूर्णता का पर्याय बनकर इस संसार में आये और अपने प्रत्येक कार्य को उन्होंने सम्पूर्णता में किया। ऐसा महानायक और भी वंदनीय हो जाता है जिसने अपने लक्ष्य की ओर कदम उस समय से आगे

बढ़ाने शुरू कर दिये हों जब वह नौ वर्ष से भी कम आयु का रहा हो। गुरु साहिब ने अपने पिता श्री गुरु तेग बहादर साहिब को बलिदान देने के लिये इसी लिए कहा क्योंकि उन्हें ज्ञात था कि समय कैसी करवट लेने जा रहा है और किस काम का कौन-सा उचित समय है। जब श्री गुरु तेग बहादर साहिब दिल्ली में औरंगजेब की कैद में थे तो नौ वर्षीय श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने एक सिक्ख को गुरु जी का समाचार जानने के उद्देश्य से भेजा।

'खालसा' के रूप में उन्होंने एक ऐसी ऊर्जा को मूर्तिमान किया जो शारीरिक-आत्मिक सभी रूप से परिपूर्ण तथा विकारों के बंधनों से मुक्त ऊर्जा थी और उस ऊर्जा का कोई सानी नहीं था। खालसा रूपी इस ऊर्जा के बारे में उन्होंने यह भविष्य भी लिख दिया कि यह ताकत अपने आप में स्वत: समर्थ होगी और उसे अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिये किसी का मुंह नहीं देखना पड़ेगा।

गुरु साहिब ने बाल रूप में जिस बल का संकल्प लिया था और जिस संकल्प के साथ वे गुरगद्दी पर आसीन हुए थे उसे बड़े ही योजनाबद्ध तरीके से आगे बढ़ाया। जिस शक्ति का स्वरूप उनके मन में था उसका वर्णन उन्होंने "चंडी चरित्र" नामक अपनी बाणी में भी किया :

तारन लोक उधारन भूमहि दैत संघारन चंड तुही है ॥
कारन ईस कला कमला हरि अद्रसुता जह देखे उही है ॥
तामसता ममता नमता कविता कवि के मन मद्धि गुही है ॥
कीनो है कंचन लोह जगत्र मै पारस मूरत जाइ छुही है ॥४॥१॥

श्री गुरु तेग बहादर साहिब की दिल्ली में शहादत श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के लिये एक बहुत बड़ी परीक्षा थी, जिसमें वे पूरी तरह खरे उतरे। वे तनिक भी भयभीत नहीं हुए और रंच-मात्र भी आक्रोशित नहीं हुए। उन्होंने सिक्खों को जोड़ना और उनके मनोबल को मजबूत करना आरंभ किया :

राज साज हम पर जब आयो ॥
जथा सकत तब धरम चलायो ॥१॥८॥ (बचित्र नाटक)

जो सबसे विलक्षण बात श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के महान व्यक्तित्व में हम देख पाते हैं वो है उनकी विनम्रता। उन्होंने सम्पूर्ण शक्ति की बात की, बल की बात की, लेकिन परमात्मा के प्रति अपने दासत्व-भाव को कभी भी कम नहीं होने दिया। उन्होंने सदैव सद्गुणों को आगे रखा और अपने पूर्ववर्ती गुरु साहिबान की ही तरह विकारों से दूर रहने की राह दिखायी। उन्होंने मन को इस प्रकार से परमात्मा की ओर चलने का संदेश दिया :

रे मन ऐसो करि संनिआसा ॥
बन से सदन सबै करि समझहु मन ही माहि उदासा ॥१॥रहाउ॥
जत की जटा जोग को मज्जनु नेम के नखुन बढाओ ॥
गिआन गुरू आतम उपदेसहु नाम बिभूत लगाओ ॥१॥
अलप अहार सुलप सी निद्रा दया छिमा तन प्रीति ॥
सील संतोख सदा निरबाहिबो ह्वैबो त्रिगुण अतीत ॥२॥
काम क्रोध हंकार लोभ हठ मोह न मन सो लयावै ॥
तब ही आतम तत को दरसै परम पुरख कह पावै ॥३॥ (शबद रामकली)

उपरोक्त शबद में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने एक तरह से खालसा के आचार-शास्त्र की रूप-रेखा लिख दी। उन्होंने कहा कि शील और संतोष ही मूल रूप से मनुष्य के सहायक हैं।

भोग-विलास-विकारों से दूर रहकर दूसरों के प्रति मन में दया एवं क्षमा की भावना धारण करना ही धर्म है।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी परमात्मा के आदेश पर, परमात्मा की कृपा से इस धरती पर धर्म को स्थापित करने के लिये आये थे और अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिये उन्होंने जिस सम्पूर्ण शक्ति 'खालसा' का सृजन किया वह सामान्य शस्त्रधारी फौजों से एकदम अलग थी। युद्धों की शृंखला और चारों साहिबजादों के बलिदान के बाद जब गुरु साहिब चलते हुए तलवंडी पहुंचे तो वहां क्षेत्र का मानिंद व्यक्ति भाई डल्ला उनसे मिलने आया। भाई डल्ला ने गुरु साहिब का पूरा स्वागत, सत्कार किया। भाई डल्ला के पास तगड़े जवानों की एक फौज थी। उस समय इस तरह की छोटी-मोटी फौजें रखने का रिवाज था। गुरु साहिब भाई डल्ला के सत्कार-भाव के कारण वहीं कुछ समय के लिये रुक गये। एक दिन भाई डल्ला ने गुरु साहिब से कहा कि यदि वे उसे याद करते तो युद्धों में वह गुरु जी की अच्छी मदद कर पाता। गुरु साहिब ने उसे समझाया कि उसके जवान शारीरिक रूप से भले ही बलवान हों किंतु अमृत छके 'खालसा' से कोई मुकाबला नहीं कर सकता। भाई डल्ला गुरु साहिब की बात की गंभीरता को समझ नहीं पा रहा था। इस बीच लाहौर से कुछ सिक्ख गुरु साहिब के दर्शन के लिये आ पहुंचे और उन्हें एक नये ढंग की बंदूक भेंट की। गुरु साहिब ने उचित अवसर जानकर कहा कि वे इस बंदूक का परीक्षण करना चाहते हैं। उन्होंने भाई डल्ला से अपने दो जवानों को सामने खड़ा होने को कहा। भाई डल्ला ने बहुत प्रयास किया किंतु उसका कोई भी जवान आगे आने को तैयार नहीं हुआ। जब गुरु साहिब ने अपने सिक्खों की ओर इशारा किया तो उनमें आगे आने की होड़ मच गयी। जब गुरु साहिब ने बंदूक चलाई तो गोली सिक्खों के सिर के ठीक ऊपर से सनसनाती हुई निकल गई। जिस फौज के उपयोग से गुरु साहिब ने युद्ध किये उसे 'अकाल पुरख की फौज' कहा गया। गुरु साहिब ने किसी भी बात का श्रेय स्वयं नहीं लिया। वे या तो परमात्मा की कृपा कहकर उसका आभार मानते रहे या अपने सिक्खों को महिमा दी। वे ऐसे 'गुरु' हुए जिन्होंने सिक्खों (शिष्यों) को अपना 'गुरु' माना। वे सम्पूर्ण इतिहास के अकेले ऐसे सेनापति हुए जिन्होंने सारे युद्ध-पराक्रमों का श्रेय खालसा को दिया :

जुद्ध जिते इनही के प्रसादि,
इनही के प्रसादि सु दान करे ॥
अघ अउघ टरे इनही के प्रसादि,
इनही की क्रिपा फुन धाम भरे ॥
इनहीं के प्रसादि सु बिदिआ लई,
इनही की क्रिपा सभ सत्र मरे ॥
इनहीं की क्रिपा के सजे हम हैं,
नही मो सो गरीब करोर परे ॥

इतनी विनम्रता किसमें हो सकती है जो काल की धारा को बदलने आया हो, जिसने अन्याय की आंधियों के मुख मोड़ दिये हों, जिसने सामाजिक समानता और समरसता की परिभाषा लिख दी हो और स्वयं को करोड़ों साधारण लोगों में से एक मानता हो। गुरु साहिब ने तो विकट, विपरीत परिस्थितियों में भी अपने मन में प्यार और सत् की ज्योति को जलाये रखा :

मित्र पिआरे नूं हालु मुरीदां दा कहणा ॥
तुधु बिनु रोगु रजाईआं दा ओढण, नाग निवासां दा रहणा ॥
सूल सुराही खंजर पिआला, बिंगु कसाईआं दा सहणा ॥
यारड़े दा सानूं सत्थर चंगा, भठट खेड़िआं दा लहणा ॥४३॥

हर हाल में परमात्मा को उन्होंने अपना मित्र और सहायक माना तथा उसने जिस हाल में भी रखा उन्होंने हर्ष सहित स्वीकार किया। परमात्मा को उन्होंने अपना सबसे बड़ा एक मात्र संबल माना और कहा कि परमात्मा उनके साथ है तो इससे बड़ी बात और क्या हो सकती है? परमात्मा लाख विपत्तियों एवं दुखों को परे कर देता है और अकेले मनुष्य की बहुत बड़ी ताकत बन जाता है :

चु हक्क यार बाशद चिह दुशमन कुनद ॥
अगर दुशमनी रा बसद तन कुनद ॥११०॥
ख़सम दुशमनी गर हज़ार आवुरद ॥
न यक मूइ ऊ रा आज़ार आवुरद ॥१११॥

(ज़फरनामह)

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने परमेश्वर की इस कृपा पर अपने आप को टिकाया किंतु गर्व नहीं किया। उन्होंने सदैव परमात्मा का आभार ही माना और इस आभार को उन्होंने राजसी सत्ता के समतुल्य कर दिया। उनकी विनम्रता इतनी महान हो गयी कि संसार की सारी शानो-शौकत उसके सामने फीकी पड़ गयी। उन्होंने औरंगजेब को कहा कि यदि तुम्हें अपनी ताकत और दौलत पर नाज है तो हमें परमात्मा का शुक्राना सहारा देता है :

तुरा गर नज़र हसत बर फ़उजो ज़र ॥
कि मा रा निगाह असत यज़दां शुकर ॥१०५॥
कि ऊ रा गरूर असत बर मुलकु माल ॥
व मा रा पनाह असत यज़दां अकाल ॥१०६॥

(ज़फरनामह)

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अपने जीवन का महत्वपूर्ण अंतराल साहित्य-प्रेम और बाणी-रचना में लगाया। उनके दरबार को जगह-जगह से आये बावन श्रेष्ठ कवियों ने सुशोभित किया जिनमें एक भाई नंद लाल जी थे जो मुगल राज्य की सेवा छोड़ कर गुरु साहिब की शरण में चले आये और गुरु साहिब की प्रशंसा में एक ग्रंथ लिखा जिसका नाम "बंदगीनामा" रखा। नाम से ही स्पष्ट है कि इसमें श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की वंदना-स्तुति की गयी थी। जब गुरु साहिब ने इस बाणी को सुना तो भाई नंद लाल जी की काव्य-शैली और भावना से बड़े अभिभूत हुए। उन्होंने इसका नाम बदल कर "ज़िंदगीनामा" रखने की सलाह दी। तब से भाई नंद लाल जी की उस कृत को "ज़िंदगीनामा" कहा जाने लगा। "बंदगीनामा" को "ज़िंदगीनामा" में बदलकर उन्होंने जहां मात्र परमेश्वर से जुड़ने और जिंदगी का तत्व समझने के गूढ़ संदेश दिये वहीं उन्होंने अपनी विनयशीलता को भी शालीन ढंग से सिद्ध किया। इससे भाई नंद लाल जी का मान भी बढ़ा। गुरु साहिब स्वयं विभिन्न भाषाओं के विद्वान थे जिनमें संस्कृत से लेकर फारसी तक शामिल थीं। सभी भाषाओं में उन्होंने उत्कृष्ट रचनात्मक कार्य किया। इस उत्कृष्टता के साथ भाई नंद लाल जी और अन्य कवियों का सम्मान, प्रोत्साहन एवं सहयोग करना उनकी ही विलक्षणता हो सकती थी। सबसे अनूठा विनम्रता का मानदंड था श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अपने पिता श्री गुरु तेग बहादर साहिब की बाणी को सम्मिलित करके पूर्णता प्रदान करना और अपनी बाणी को शामिल न करना। यह बात और है कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की बाणी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल न होते हुए भी नित्तनेम का हिस्सा है जिसे एक गुरसिक्ख नित्यप्रति पढ़ता है। उन्हें तो बस, परमात्मा की कृपा चाहिये थी, जिसके बिना कुछ भी नहीं हो सकता।

गुरु साहिब ने जिस ईश्वरीय प्रेरणा के तहत ईश्वरीय मनोरथों को पूरा करने के लिये खालसा को सुशोभित किया उसी भावना से उन्होंने युद्ध भी लड़े। पहाड़ी हिंदू राजाओं और

मुगल शासन दोनों को उन्होंने चुनौती दी कि धर्म हर हाल में बाकी सभी ताकतों से बड़ा और सबल है। धर्म का सिपाही कम संख्या में भी बड़ी सेना से लड़ सकता है। वो भूखे पेट रहकर भी पीठ दिखाना नहीं जानता। उन्होंने कोई साम्राज्य नहीं स्थापित किया, किसी भूमि पर कब्जा नहीं किया और बताया कि धर्म धरती पर नहीं दिलों में होता है और इसी लिये अक्षय, अभय और अजय होता है। 'खालसा' को उन्होंने परमात्मा के पूर्ण प्रेम से ओत-प्रोत ताकत बनाया :

जागति जोति जपै निसि बासुर, एकु बिना मनि नैक न आनै ॥
पूरन प्रेम प्रतीति सजै, ब्रत गोर मढ़ी मठ भूल न मानै ॥
तीरथ दान दया तप संजम, एकु बिना नहि एक पछानै ॥
पूरन जोति जगै घट मै, तब खालिस ताहिं न खालिस जानै ॥५७॥

अपने पूरे परिवार का बलिदान करते हुए उन्होंने मुगल शासन के अन्याय का अंत करने में सफलता प्राप्त की। औरंगजेब की मृत्यु के बाद दिल्ली का सिंहासन चरमरा गया। अभी श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को अपने जीवन का एक अन्य महत्वपूर्ण कार्य करना था जिसके लिये उन्होंने धुर दक्षिण के नांदेड़ नामक स्थान को चुना। नांदेड़ साहिब में गोदावरी नदी के किनारे निवास करते हुए उन्होंने जहां माधोदास नामक वैरागी को अपनी शरण में लेकर 'बंदा सिंघ' नाम देकर पंजाब में अधूरे कार्यों को पूरा करने के लिये भेजा वहीं श्री गुरु ग्रंथ साहिब को ग्यारहवें और अंतिम गुरु के रूप में स्थापित करके संसार के 'शबद-गुरु' की एकदम अनूठी सोच से रूबरू कराया, एक ऐसा गुरु जो सदजीवित है, अजर है, अमर है और सबके निकट है।

गुरु जी के महान यत्नों के प्रभाव से जाति-व्यवस्था पूरी तरह ध्वस्त हो गयी और झूठे मान-अभिमान जमीन पर आ गिरे। पहली बार देखा गया कि अन्याय किस तरह त्याग और बलिदान के आगे छोटा पड़ जाता है तथा सत्य की शक्तियों की सबलता का कारण बनता है। गुरु जी द्वारा सृजित खालसा पंथ कमजोरों, अनाथों, दुखियों, अन्याइयों के दमन-चक्र में पिसे जा रहे बेसहारों का सहारा बनने के लिये सजा था। 'खालसा' न अन्याय करने और न अन्याय सहने तथा न चुप होकर दूसरों पर अन्याय होते देखने के लिये बनाया। 'खालसा' धर्म पर अडिग रहने, हक-हलाल की कमाई खाने, मिल-बांट कर सहभागिता से रहने, शबद-गुरु के विचार को मन में धारण करने व आचरण में उतारने के लिये तथा आदर्श मनुष्य बन कर जीवन जीने के लिये बना था। निर्धनों, दुखियों, अनाथों की रक्षा व सेवा-सहायता करना 'खालसा' का दैनिक कार्य था। 'खालसा' धार्मिक आडंबरों से दूर रहकर शुभ कार्य करने और दुराचरण से दूर रहने का नाम था। इस तरह के उन सारे सिद्धांतों की घोषणा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'पंज प्यारे' बनाने और उन्हें अमृत-पान कराने के बाद उस मंच पर की थी जहां उन्होंने 'खालसा' को जन्म दिया था। वास्तव में परमात्मा ने जिस धर्म की स्थापना की अवधारणा के साथ श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को धरती पर भेजा उस धर्म को उन्होंने 'खालसा' के रूप में साकार किया। 'खालसा' के रूप में सीधे तौर पर परमात्मा की सत्ता स्थापित हुई।

सच तो यह है कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की महानता को हम तभी अनुभव कर सकते हैं यदि 'खालसा' रूप में अपना आचरण खालिस करके अपने जीवन को धन्य कर लें।

संस्कृति संरक्षक : श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी

*-डॉ निर्मल कौशिक**

'पांच प्यारों' के रूप में खालसा की सृजना कर स्वयं को उनके समक्ष समर्पित करने वाले महान बलिदानी, अनन्य देशभक्त, दृढ़-प्रतिज्ञ, महापराक्रमी एवं महाकवि दशम पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। शैशव काल से ही वे भक्ति और शक्ति अर्जित करने में लीन रहते थे। इन्हीं गुणों के कारण वे 'संत सिपाही' की संज्ञा से अलंकृत हुए। आपका स्वर्ण रूपी व्यक्तित्व तत्कालीन विषम परिस्थितियों रूपी आंच में तप कर कुंदन बनकर निखरा। उस समय समूचे भारत में अन्याय, अधर्म, भय, आडंबर, भ्रष्टाचार और अत्याचार का बोलबाला था। लोग अपनी अमूल्य विरासत एवं भारत के सांस्कृतिक गौरव को भूलते जा रहे थे। भारतीय संस्कृति के गौरव की गाथाएं आपको पारिवारिक परिवेश एवं संस्कार-स्वरूप प्राप्त हुई थीं। फलतः आपके मन में राष्ट्र को सुदृढ़ बनाने और अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने की प्रबल भावना बचपन से ही पनप चुकी थी। यही कारण था कि आप अपने पिता श्री गुरु तेग बहादर साहिब द्वारा राष्ट्र की सुरक्षा हेतु किए गए बलिदान के प्रेरणास्रोत बने।

इतिहासकार कनिंघम ने (ए हिस्ट्री ऑफ दी सिक्खस) में लिखा है कि "(श्री गुरु) गोबिंद (सिंघ जी) के हृदय पर अपने पूज्य पिता के बलिदान का अत्यंत गहन प्रभाव पड़ा। देश की विच्छिन्न दशा को सुधारने के लिए (श्री गुरु) गोबिंद (सिंघ जी) ने अपने आप को दांव पर लगा दिया। इस संघर्ष में उन्होंने अपना सारा परिवार कुर्बान कर दिया। उन्होंने प्रजातंत्रात्मक भावना और एकता के बल पर राष्ट्र की सेवा की। उनकी वीरता और बलिदान की भावना के साथ-साथ उनकी साहित्यिक अभिरुचि भी उनके व्यक्तित्व का महत्वपूर्ण पक्ष है। उन्होंने स्वयं संस्कृत, अरबी, फारसी, ब्रज और पंजाबी आदि में रचित साहित्य का अध्ययन किया था। वे स्वयं कवि भी थे और अनेक कवियों के आश्रयदाता भी थे। इनके ५२ दरबारी कवियों की अनेक रचनाएं आज भी उपलब्ध होती हैं। आपकी बाणियां संस्कृत, हिंदी, पंजाबी, फारसी आदि भाषाओं में उपलब्ध हैं। आपने युग और परिस्थितियों के दृष्टिगत शांत और वीर-रस प्रधान बाणियां ही रचीं। गुरु जी के अनुसार जिस देश की जनता में भक्ति और शक्ति की समन्वित भावनाएं होंगी, वही देश सुदृढ़ और सुरक्षित होगा। जहां वीरता के प्रतीक खालसा के रूप में पांच प्यारों का सृजन करके उन्होंने एक तरह की निर्जीव जनता में बल का संचार किया वहीं दूसरी ओर गुरबाणी को गुरु-स्वरूप प्रदान कर इसके प्रचार-प्रसार हेतु अपने शिष्यों को पठन-पाठन की विधिवत् शिक्षा भी दिलाई।

वैसाखी के दिन सन् १६९९ में गुरु जी ने एक सभा बुलाई। गुरु साहिब सुबह उठे और नित्य नियम के अनुसार बंदगी में लीन हो गए। फिर आपने वस्त्र और शस्त्र सजाए तथा संगत को दर्शन दिए। दर्शन करते ही संगत ने

**अध्यक्ष, हिंदी विभाग, सरकारी बृजेंद्र कालेज, फरीदकोट-१५१२०३, फोन : ०१६३९-२६३०१७*

जयकारों से धरती और पाताल गुंजा दिया। नित्यप्रति की गुरबाणी-कथा के बाद कृपाण म्यान में से बाहर निकाल ली और विशाल दीवान को संबोधन करके कहा, "मुझे एक शीश चाहिए। मेरे सच्चे सिक्खों में से मुझे किसी एक सिक्ख की प्रतीक्षा है, जो धर्म की खातिर अपना शीश भेंट चढ़ाए।" इतना सुनते ही सभा में सन्नाटा छा गया। लोग दहल गए। कोई भी गुरु जी में आए इस रहस्यपूर्ण परिवर्तन को समझ नहीं सका। सभी सिक्ख सिर झुकाए बैठे थे। गुरु जी ने तीन बार यह मांग दोहराई। कोई साहस न करता था। अंतत: लाहौर का खत्री भाई दयाराम उठा और कहने लगा, "मेरा शीश आपकी भेंट है। मेरे सच्चे पातशाह! आपकी कृपाण से मरने से बढ़ कर और बड़ी खुशी मेरे लिए क्या हो सकती है?" गुरु जी उसे अपने साथ एक तंबू में ले गए और खून से भरी तलवार लेकर बाहर आ गए। सिक्ख कुछ भी समझ पाने में असमर्थ थे। गुरु जी ने पुन: ललकारा। इस बार दिल्ली का जाट भाई धर्मदास खड़ा हो गया और हाथ जोड़कर कहने लगा कि "आपका सेवक उपस्थित है। हे सच्चे पातशाह! मैंने तो अपना शीश उसी दिन भेंट कर दिया था जिस दिन आपका सिक्ख बना था।" गुरु साहिब ने तीन बार और शीश मांगे। द्वारिका के भाई मोहकम चंद, बिदर के भाई साहिब चंद तथा द्वारिका के भाई हिम्मत राय खुशी-खुशी एक-दूसरे के बाद अपने शीश भेंट करने के लिए आगे बढ़े। सारी सभा आश्चर्यचकित रह गई। गुरु जी थोड़ी देर बाद पांचों सिक्खों सहित तंबू से बाहर आए। पांचों नए वेश में कृपाण धारण किए हुए थे। गुरु जी ने पांचों सिक्खों को सभा के सामने प्रस्तुत किया। तत्पश्चात् उन्होंने थोड़ा-सा जल लोहे के एक बर्तन में डाल कर दो धार वाले खंडे से हिलाया, थोड़े से बताशे उसमें डाले, बाणी का पाठ किया। बाद में वह 'अमृत' उन पांचों को पिलाया और उनसे स्वयं ग्रहण किया। इस प्रकार श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने जिस खालसा पंथ का गठन किया उसे 'सिंघ' की उपाधि से विभूषित किया। गुरु जी ने आदेश दिया कि सभी सिक्ख अमृत-पान करें। उन्हें पांच ककार--केश, कड़ा, कछहिरा, कंघा तथा कृपाण रखने के लिए कहा गया। उन्हें 'सिंघ' कहा जाने लगा। परिस्थितियों के अनुरूप ऐसा आवश्यक भी था, क्योंकि भारतवासी विदेशी आक्रमणकारियों की शक्ति के आगे दुबक गए थे। उनमें साहस और पौरुष का अभाव हो गया था। उन्हें एक नई चेतना की आवश्यकता थी, निडरता, भुजबल और प्रेरणा की आवश्यकता थी, जो गुरु जी ने इस सभा में प्रदान की।

तद्नंतर एक विशाल सेना एकत्रित करके पहाड़ी राजाओं को पराजित कर गुरु जी ने सिक्ख धर्म के प्रचार के लिए तथा राष्ट्रीय एकता के लिए भ्रमण आरंभ किया, स्थान-स्थान पर जाकर लोगों का मार्गदर्शन किया। भारतीय सभ्यता और संस्कृति के पुजारी ने एक ऐसा विद्वान वर्ग तैयार किया जो गुरबाणी का संदेश घर-घर पहुंचा सके। उन्होंने सगुण, निर्गुण, ज्ञान, भक्ति सांसारिकता विरक्तता का समन्वित रूप प्रस्तुत किया। उन्होंने बताया कि वाह्याडंबरों एवं पाखंडों से ईश्वर-प्राप्ति असंभव है, केवल प्रेम द्वारा ही उसे प्राप्त किया जा सकता है। अमृत और खड़ग-दीक्षा से भारतीय सुधारवादी लहर में एक नए युग का सूत्रपात हुआ। एक ही झटके में तेजस्वी गुरु जी ने उन सभी भेदभावों को समाप्त कर दिया जिनके कारण भारतीय लोग राजनैतिक और आध्यात्मिक दासता

में फंस चुके थे। यह नया पंथ, नये विश्वासों और नई प्रेरणाओं के साथ, बलशाली व्यक्ति के नेतृत्व में नए जीवन-पथ पर अग्रसर होने लगा।

इस कार्य के पीछे गुरु जी की मौलिक विचारधारा के साथ-साथ भारतीय संस्कृति की पृष्ठभूमि की पुनर्स्थापना भी एक उद्देश्य था। सभी जातियों के लोग गुरु जी के सिक्ख बन गए। भले ही सारा आदर्श नया था, ढांचा अभी तैयार ही हुआ था, मगर उसका आधार पुराना था। खालसा के सभी सिद्धांत सिक्ख धर्म के रूप में विकसित हुए। गुरु जी ने अपने पांच सिक्खों को खालसा के रूप में प्रतिनिधित्व प्रदान किया। गुरु साहिब ने एक वीर योद्धा के रूप में तत्कालीन निर्जीव समाज में नए प्राण फूंक दिए।

इस प्रकार श्री गुरु ग्रंथ साहिब को 'गुरु' का रूप प्रदान कर गुरु जी ने गुरगद्दी के लिए होने वाले झगड़े को सदा के लिए समाप्त कर दिया। उन्होंने अपने आप को खालसा के समक्ष प्रस्तुत कर अपने अस्तित्व का विलय कर दिया। अगर वे चाहते तो अपने चारों साहिबजादों में से किसी एक को गुरगद्दी का अधिकारी बना सकते थे, मगर उन्होंने समय को पहचाना और परिस्थितियों के अनुरूप कायर एवं दुर्बल जनता को बल प्रदान करने के लिए चेतना लाने का दुरूह कार्य किया।

जिस समय पंजाबेतर हिंदी कवि अपने आश्रयदाताओं के प्रशस्ति-गान एवं उनके मनोरंजन के लिए वासनावर्धक कृतियों का निर्माण कर रहे थे, लगभग उसी समय गुरु जी के आश्रित कवि इष्ट-आराधना, गुरु-महिमा, नवोदित खालसा पंथ विषयक सिद्धांतों, भारतीय संस्कृति एवं दर्शन के प्रमुख ग्रंथों के भाषानुवाद तथा वीर-रस पूर्ण कर रहे थे। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के साथ-साथ अन्य कवियों, गुरुओं, सेवकों और प्रचारकों ने भी इस परंपरा को विकसित किया। इससे सिक्ख धर्म एवं गुरबाणी-साहित्य भी पुष्ट होता गया। अल्प समय में ही इस साहित्य ने अपनी अलग पहचान द्वारा अपना महत्व स्थापित कर लिया। गुरमुखी लिपि में विरचित होने पर भी ब्रज भाषा के अस्तित्व को आंच न आने दी। इस साहित्य की यह अनन्य विशेषता है कि इससे दो भाषाएं समृद्ध हुई हैं। इससे एक भ्रामक स्थिति भी पैदा हो गई थी। कुछ लोग इसे केवल गुरमुखी लिपि में होने के कारण पंजाबी साहित्य का ही अंग समझते रहे और भाषा की दुरूहता के कारण दूसरे लोग इसे पंजाबेतर भाषा का अंग मानते रहे। मगर अब स्थिति कुछ स्पष्ट हो गई प्रतीत होती है। हिंदी, उर्दू, फारसी आदि से भी इसका प्राचीन काल से विशिष्ट सम्बंध रहा है। पंजाब में गुरु नानक साहिब से लेकर रीति काल के अंतिम चरण तक विशाल साहित्य का प्रतिपादन ब्रज भाषा में हुआ। केवल इतना ही नहीं, पंजाब में रचित इस समूचे साहित्य में अनेक विषयों से सम्बंधित साहित्य उपलब्ध होता है। गुरबाणी की रचना के साथ-साथ गुरबाणी से सम्बंधित अनेक विषयों पर अनेक विद्वानों द्वारा रचित टीकाएं, भाष्य-अनुवाद आदि का कार्य उस समय में ही शुरू हो गया था। इस साहित्य ने उस समय के समूचे साहित्य को इस प्रकार प्रभावित किया कि पूरे पंजाब में उस समय गद्य और पद्य दोनों रूपों में ब्रज भाषा की लिपि गुरमुखी हो गई। गुरबाणी को उस समय सर्वाधिक सम्मान प्राप्त था क्योंकि गुरबाणी पंजाब के इतिहास को ही रेखांकित नहीं करती बल्कि पंजाब की सांस्कृतिक परंपरा को भी

रेखांकित करती है।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने जब खालसा पंथ की स्थापना की तो उसका एक मात्र उद्देश्य था--भारतीय संस्कृति की सुरक्षा। इसके लिए निर्बल भारतीयों में एक शक्ति का अभाव था, जिसके परिणामस्वरूप वे शत्रु से लोहा लेने में असमर्थ सिद्ध हो रहे थे। गुरु जी ने लोगों को संगठित करने का बीड़ा उठाया। उन्होंने सामान्य जनता को अपनी शक्ति का एहसास दिलाया तथा उनमें विद्यमान साहस और बल को सही दिशा की ओर उन्मुख किया। उनका कहना था कि बलिदान के बिना या त्याग के बिना कुछ भी प्राप्त नहीं होता। उन्होंने अपने कुछ शिष्यों को बलिदान के लिए प्रेरित किया। १६९९ को वैसाखी के दिन उन्होंने 'खालसा पंथ' की साजना करके भारतीयों को नवजीवन प्रदान किया।

सोया हुआ पंजाब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के नेतृत्व में जाग उठा और वे अपनी संस्कृति की रक्षार्थ कटिबद्ध होकर खड़े हो गए। दशमेश पिता तथा अन्य सिक्ख गुरु साहिबान के इस सांस्कृतिक आंदोलन ने पंजाब के जनसाधारण में एक प्राणवान् चेतना-शक्ति और साहस का संचार किया।

गुरु जी के इस आंदोलन को घर-घर तक पहुंचाने में निरमले विद्वानों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। ये विद्वान जब काशी से पढ़ कर लौटे थे तो अपने साथ अनेक अन्य विद्वानों को पंजाब लाए थे। गुणों के पारखी श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने उन विद्वानों को आदर सहित अपने संरक्षण में रखा और उन्हें अनेक प्रकार के ग्रंथों का सरल भाषा में अनुवाद-कार्य सौंपा। गुरु जी ने इन विद्वानों के माध्यम से एक ऐसे संस्थान की स्थापना करनी चाही थी जिसका एक छोर अतीत से और दूसरा छोर वर्तमान से जुड़ा हो। इसके पीछे उनकी दूरदृष्टि काम कर रही थी। वे अपनी पुरातन संस्कृति से जुड़े रहना चाहते थे चूंकि उसके बिना धर्म की पुनर्स्थापना संभव न थी। इसका मूलाधार था संस्कृत साहित्य, जिसके महत्व को उन्होंने जाना और उसके लिए येन-केन-प्रकारेण अपने शिष्यों को शिक्षित किया। उसी के फलस्वरूप अनेक संस्कृत के गूढ़ ग्रंथों का रहस्य आज लोक-भाषा में जनता के समक्ष है। गुरु जी ने जान लिया था कि अगर उन्होंने ऐसा न किया तो उनके शिष्यों का सर्वोन्मुखी विकास असंभव है। वे कुटिल राजनीति से टक्कर लेने के साथ-साथ अपने शिष्यों में प्रतिभा का पूर्ण विकास देखने के लिए भी उत्सुक थे।

गुरबाणी साहित्य का अन्य साहित्यों पर प्रभाव बहुमुखी है। पंजाब में गुरु साहिबान की बाणी की व्याख्या के लिए कई ग्रंथों की रचना हुई। इन रचनाओं में बाणी की टीकाएं, गुरमति दर्शन की व्याख्या तथा गुरु साहिबान की बाणी सम्बंधी साहित्य आता है। गुरबाणी साहित्य के अतिरिक्त उस समय का पारंपरिक रीतिकालीन साहित्य भी गुरमुखी लिपि में उपलब्ध होता है। विशेष तौर पर उस समय के रियासती राजाओं ने इस क्षेत्र में अधिक रुचि दिखाई। उस समय रियासती राज-दरबारों में अनेक ऐसे महान व्यक्ति कवि हुए हैं जिन्होंने अमर साहित्य की रचना की। रियासत पटियाला, नाभा, जींद, कपूरथला, फरीदकोट आदि में इतने अधिक कवि हुए हैं और उन्होंने इतने प्रचुर परिमाण में गुरमुखी लिपि में हिंदी पुस्तकों का निर्माण किया है कि यदि उनके सम्बंध में ब्यौरावार लिखा जाए तो एक वृहद् ग्रंथ तैयार हो सकता है। दर्शन, संगीत और साहित्य की त्रिवेणी 'गुरबाणी'

ने जिस प्रकार जनता के उस समय के कष्टों का निवारण किया वह अपने आप में एक उदाहरण है। विभिन्न संप्रदायों का समन्वित पद स्वाभाविक प्रारूप 'गुरबाणी' आज भी जनता का मार्गदर्शन कर रही है। गुरबाणी में सांप्रदायिक सद्भावना की ओजस्विनी शक्ति तो है ही साथ ही साहित्यिक प्रौढ़ता भी है। श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा संपादित तथा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा पुनर्संपादित श्री गुरु ग्रंथ साहिब बाद में गुरु-पद पर आसीन हुए और आज सिक्ख धर्म के प्रकाश-स्तंभ के रूप में विद्यमान हैं। गुरबाणी को श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के समय ऐसी विरासत का रूप दे दिया गया कि वह मात्र गुरमति साहित्य न रह कर साक्षात् 'गुरु-रूप' हो गई। विश्व के पंथक इतिहास में जब तक सिक्ख मत का अस्तित्व है, पंजाब की इस विरासत का अद्वितीय महत्व बना रहेगा। गुरबाणी एक ओर गुरमति साहित्य और संगीत का संगम है तो दूसरी ओर आध्यात्मिकता व दार्शनिकता की पावन स्रोतस्विनी भी है। गुरु जी ने गुरबाणी को 'गुरु' का पद प्रदान कर पंजाब में रचित हिंदी-पंजाबी साहित्य के लिए एक मील-पत्थर का काम किया है।

गुरु जी स्वयं एक बहुत बड़े विद्वान, दार्शनिक, साहित्यकार एवं कलाकार थे। उनके दरबार में ५२ कवि थे, जो अनेक प्रकार की रचनाओं का सृजन करके ब्रज भाषा साहित्य में श्रीवृद्धि कर रहे थे। उन्हें स्वयं अध्ययन का शौक था। उन्होंने संस्कृत, अरबी, फारसी, पंजाबी अनेक भाषाओं का ज्ञान अर्जित किया। उनके साहित्य में अनेक विचारधाराओं का समविन्त रूप परिलक्षित होता है। उन्होंने प्राचीन वैदिक एवं पौराणिक साहित्य का अध्ययन स्वयं ही नहीं किया अपितु अपने शिष्यों को भी इस कार्य के लिए तैयार किया। अपने कुछ शिष्यों एवं दरबारी कवियों से उन्होंने अनेक ग्रंथों के अनुवाद भी कराए ताकि लोग अपनी इस अमीर सांस्कृतिक विरासत से अनभिज्ञ न रह जाएं। ▩

"पंजाब का इतिहास" कृत डॉ. ए सी. अरोड़ा में *(पृष्ठ ६८ का शेष)*

डॉ. ए. सी. अरोड़ा इस तथ्य पर जानकारी देते हुए लिखते हैं कि "१७०५ ई. में 'दीना' नामक स्थान से गुरु साहिब ने औरंगजेब के नाम फारसी जुबान में 'जफरनामा' लिखा और औरंगजेब के मुगल अधिकारियों द्वारा सिक्खों पर किये अन्यायपूर्ण व्यवहार, उनके जुल्मों तथा अत्याचारों का दिल दहला देने वाला हाल वर्णन किया। इस खत को दक्षिण में औरंगजेब के पास पहुंचाने के लिए भाई दया सिंघ को भेजा गया। इसमें गुरु साहिब ने मुगल अधिकारियों द्वारा सिक्खों पर किए गए अत्याचारों का वर्णन करते हुए उसकी निंदा की और इन जुल्मों के विरुद्ध अपनी कार्यवाही को उचित बताया। औरंगजेब पर इस खत का बहुत गहरा असर हुआ। उसके व्यवहार में पल भर में ही नमी आ गई और उसने गुरु साहिब को मिलने के लिए निमंत्रण भेजा। गुरु साहिब उसे मिलने के लिए दक्षिण की तरफ चल पड़े। अभी गुरु जी राजस्थान ही पहुंचे थे कि उन्हें औरंगजेब की मृत्यु (२४ फरवरी, १७०७ ई.) का समाचार मिल गया। शायद गुरु जी द्वारा उस खत में लिखे शब्दों का ही असर था जिन्हें पढ़ कर औरंगजेब को अपने किए पर पछतावा हुआ और वह गुरु जी से मिलने से पहले ही शर्मिंदगी में मर गया। ▩

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-४४

प्रेम की महिमा के गायक - कवि हरिदास सिंघ

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ 'साहिल'**

कवि हरिदास सिंघ दशमेश पिता के दरबार के सुंदर-सुलेख लिखने वाले लिखारी थे। इन्होंने अपनी सुंदर लिखाई में श्री गुरु ग्रंथ साहिब की एक बीड़ तैयार की थी जो सिक्ख रेफ्रेंस लाइब्रेरी में सुरक्षित है। इन्होंने 'दसम ग्रंथ' के कुछ भागों के लिए भी लेखन-सेवा निभाई। धीरे-धीरे इनके हृदय में काव्य-रचना का शौक उत्पन्न हो गया और इन्होंने संवत् १७५० वि. (सन् १६९३-९४ ई.) में 'प्रेम अंबोधि' नामक ग्रंथ की रचना की :

संमत सत्रहि सै पंचास।
शुकल एकादशी मगसर मास।
पोथी पूरन सतिगुर करी।
दास दुआरै पूरी परी।

कवि हरिदास गुरु-घर के प्रेमी थे। बाद में इन्होंने दशमेश पिता के हाथों 'अमृत-पान' किया और भाई हरिदास से भाई हरिदास सिंघ बन गये।

कवि हरिदास सिंघ का ग्रंथ 'प्रेम अंबोधि' प्रेम की महिमा स्थापित करने वाला ग्रंथ है। इसमें १६ भक्तों की प्रेम-गाथाएं प्रस्तुत की गई हैं। यह ग्रंथ 'परचीआं भगतां कीआं' भी कहलाता है। इसमें १६ भक्त साहिबान की प्रेम-वार्ताएं वर्णित करके यह स्पष्ट किया गया है कि प्रभु-प्राप्ति के लिए सर्वश्रेष्ठ मार्ग 'प्रेम-मार्ग' है। वास्तव में इस ग्रंथ में दशमेश पिता के वचनों- *". . . जिन प्रेम कीओ तिन ही प्रभ पाइओ"* की ही व्याख्या की गई है।

ग्रंथ में सबसे पहले कवि ने प्रेम का महत्व अंकित किया है। इसके उपरांत भक्त कबीर जी, भक्त धंना जी, भक्त त्रिलोचन जी, भक्त नामदेव जी, भक्त जैदेव जी, भक्त रविदास जी, भगतिन मीराबाई, भगतिन करमा बाई, भक्त पीपा जी, भक्त सैण जी, भक्त सधना जी, भक्त बाल्मीकि, भक्त शुकदेव, भक्त बधिक, भक्त ध्रुव एवं भक्त प्रहलाद समेत १६ भक्तों की प्रेम-वार्ताओं का निरूपण है। ग्रंथ मूलतः चौपाई में लिखा गया है और बीच-बीच में दोहा-सोरठा आदि छंद आते रहे हैं। कवि हरिदास सिंघ के अनुसार प्रेम ही इस सृष्टि का आधार है :

प्रेम रूप धरि जग महिं खेलै।
धारि प्रेम प्रेमी कउ मैलै।
प्रेम बचन किछु कहिण न आवै।
ऊपजै प्रेम तब प्रीतम पावै।
प्रिथमे एकंकार इकेला।
कीओ प्रगासु प्रेम की बेला।
पुरख प्रक्रिति रूप धरि आयो।
भीतर सूत्र प्रेम का पायो।

यही नहीं, कवि कहता है कि सभी देवी-देवता भी प्रेम से बंधे हुए हैं :

प्रेम रूप ब्रहिमा उपजाना।
प्रेम बस हुइ जगत उठाना।
प्रेम ही बिसन होइ प्रतिपालि।
सो अंतरजामी सभ घट नालि।
शिव सरूप सभ प्रेम निहारा।
प्रेम सौं द्वैत कउ करै संघारा।
सभ देवी-देव प्रेम ते भए।

१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, मो: ९४१७२-७६२७१

प्रेम प्रीति कर बस हुइ गए।

कवि का मानना है कि प्रभु-प्राप्ति मात्र प्रेम से ही हो सकती है :

पूरन ब्रहिम प्रेम से होता।
बिना प्रेम कछु अउर न दोता।
प्रेम रूप ओअंकार प्रकाशा।
ता ते उपजिओ प्रेम अकाशा।
ता को ततु सबद बिखिआता।
जाकै प्रेम करन अनुराता।

और देखें :

ब्रहिम गिआन सभ मैं इक दाता।
बिना प्रेम वह होइ न गिआता।
भगति करै कोई बैठ इकलै।
बिना प्रेम भगवान न मिलै।

प्रेम की महिमा के गायक कवि हरिदास सिंघ उच्च कोटि के योद्धा भी थे। भाई हरिदास सिंघ ने चमकौर साहिब के विलक्षण युद्ध में जूझते हुए 'चालीस सिंघों' के साथ शहादत प्राप्त की।

जीवन-शैली पर पुनर्विचार करें!

*-श्री प्रशांत अग्रवाल**

कल्पना करें, तेजी से बहती एक नदी की, जिसमें दो मित्रों ने स्वयं को बहाव के सहारे छोड़ रखा है और मजा ले रहे हैं। तभी एक मित्र को दूरदृष्टि से दिखाई देता है कि तेजी से बहती यह नदी आगे जाकर प्रपात के रूप में गिरने वाली है। वह अपने मित्र को सूचित करता है तथा स्वयं बहाव के विरुद्ध संघर्ष करके किनारे पर पहुंचने की चेष्टा करने लगता है। उसका मित्र उसकी चेतावनी को मानने की बजाय उसे ही 'बेवकूफ' कहता है और बोलता है, "बहाव के साथ बहने-तैरने में कितना आनंद आता है!"

क्या वर्तमान समाज की स्थिति भी दूसरे मित्र जैसी नहीं है? तेजी भरी जीवन-शैली को हमने कथित विकास का मार्ग समझ लिया है। ढेर सारा पैसा तथा ढेर-सारी भोगपरक सुविधायें जुटाने को ही हमने जीवन का लक्ष्य बना लिया है और सोचते हैं कि इस बहाव के द्वारा हम सुख प्राप्त कर लेंगे। पहले मित्र की भांति अनेक विद्वान, संत, दार्शनिक, तत्वदृष्टा हमें चेताते रहते हैं कि 'भोगवादी' जीवन-शैली के बहाव में आनंद ढूंढने की बजाय इसकी विपरीत दिशा में संघर्ष करो, तभी बच सकोगे, लेकिन उनकी बात को मानना तो दूर, हमें उस पर विचार करने की भी फुर्सत और परवाह नहीं है।

हम दौड़ रहे हैं, क्योंकि अधिकांश समाज दौड़ रहा है। हम बहुमत के विरुद्ध जाने से डरते हैं, अपने उपहास की आशंका से घबराते हैं, लेकिन हमें नहीं भूलना चाहिए कि दुर्बुद्धि-जनों द्वारा हंसी उड़ाये जाने के डर से आत्मघात के पथ पर चलना कायरता ही नहीं मूर्खता भी है।

प्रत्येक व्यक्ति को चाहिए कि वह अपनी वर्तमान जीवन-शैली को इस कसौटी पर कसे कि उसकी अंतिम परिणति क्या होगी, समाज के लिए उसकी सार्थकता क्या है, जीवन के उदात लक्ष्य आत्मोन्नति के संदर्भ में उसकी प्रासंगिकता कितनी है। हमें इन बातों पर विचार करना ही चाहिए क्योंकि हम मनुष्य कहलाते हैं और मनुष्य कहलाने का अधिकार वही रखता है जिसके पास विवेक नामक दुर्लभ तत्व होता है।

**४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली (उ. प्र.)-२४३००३, मो : ०९४११६०७६७२*

ख़बरनामा

चंडीगढ़ में 'पंजाबी भाषा' को 'प्रथम भाषा' के रूप में लागू किया जाए : जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने पंजाब के राज्यपाल श्री शिवराज पाटिल को पत्र लिखकर चंडीगढ़ में 'पंजाबी भाषा' को 'प्रथम भाषा' का दर्जा दिए जाने की मांग की है। उन्होंने पत्र में लिखा है कि चंडीगढ़ पंजाब की सरजमीं पर बसते पंजाब के कुछ गांवों के लोगों का पलायन करा कर बसाया गया था। चंडीगढ़ में बसने वाले लोग भी पंजाबी बोलते हैं मगर उनकी मातृ-भाषा 'पंजाबी' को सरकारी दफ्तरों में उचित सम्मान नहीं मिल रहा। उन्होंने कहा कि पंजाब की धरती पर पंजाब के लोगों की कई प्रकार की कुबार्नियों से बसे इस शहर को पंजाब की राजधानी होने के कारण भी पंजाबियों की मानसिकता में इसे अपना होने का अहसास है, इसलिए पंजाबियों की भावनाओं के मद्देनजर चंडीगढ़ में 'पंजाबी भाषा' को 'प्रथम भाषा' का दर्जा देते हुए दफ्तरी काम-काज पंजाबी में करने तथा स्कूलों में भी 'प्रथम भाषा' के रूप में लागू किया जाना चाहिए।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब विश्व यूनीवर्सिटी स्थापित करके शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने नया इतिहास सृजित किया

फतहगढ़ साहिब : शिरोमणि गु: प्र: कमेटी द्वारा संकल्प में लाकर स्थापित की गई श्री गुरु ग्रंथ साहिब विश्व यूनीवर्सिटी को पंजाब के मुख्यमंत्री स. प्रकाश सिंघ बादल ने जैकारों की गूंज में समूची मानवता को समर्पित किया। यूनीवर्सिटी के पहले अकादमिक सेशन की शुरूआत के अवसर पर यूनीवर्सिटी कैंपस में किए गए एक बहुत प्रभावशाली समारोह को संबोधित करते हुए स. बादल ने कहा कि इस यूनीवर्सिटी की स्थापना से सिक्ख पंथ द्वारा एक सदी से देखा जा रहा सपना साकार होने के कारण इस दिन को सिक्ख इतिहास में सुनहरी दिन के रूप में याद किया जाता रहेगा।

स. प्रकाश सिंघ बादल ने कहा कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब ने नाम पर बनी इस यूनीवर्सिटी का दुनिया भर की यूनीवर्सिटियों में एक विलक्षण स्थान होगा। इस यूनीवर्सिटी के द्वारा जहां नवीनतम विषयों की पढ़ाई करवाई जाएगी वहां इसका मुख्य उद्देश्य श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज 'सरबत्त के भले' की कल्याणकारी विचारधारा को पूरे संसार में फैलाना होगा। सिक्ख गुरु साहिबान द्वारा प्रचार की गई विचारधारा आधुनिक समय में दुनिया भर के सामने आ रही चुनौतियों को हल करने में सक्षम है। इस यूनीवर्सिटी के विद्यार्थी अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद अपने देश, राज्य तथा क्षेत्र को ऊंचा उठाने के लिए काम करेंगे। उन्होंने यूनीवर्सिटी द्वारा आर्थिक रूप से पिछड़े तथा होनहार ग्रामीण विद्यार्थियों के लिए दस प्रतिशत सीटें आरक्षित रखने के फैसले की प्रशंसा की।

इस अवसर पर शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के अध्यक्ष तथा श्री गुरु ग्रंथ साहिब विश्व यूनीवर्सिटी के संस्थापक एवं चांसलर जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि सिक्ख जगत की प्रतिनिधि धार्मिक संस्था शिरोमणि गु: प्र: कमेटी द्वारा गुरुद्वारा प्रबंध को सुचारू बनाने के साथ-साथ सिक्ख धर्म, सिक्ख फिलासफी तथा गुरु साहिबान के संदेश को विश्व स्तर पर प्रकट करने के अलावा फतहगढ़ साहिब की ऐतिहासिक धरती पर श्री गुरु ग्रंथ साहिब विश्व यूनीवर्सिटी स्थापित करके विद्या के क्षेत्र में विलक्षण

इतिहास सृजित किया है। ८४ एकड़ क्षेत्र में पांच सौ करोड़ रुपए की लागत से बनाई जा रही यह यूनीवर्सिटी पूरे विश्व में उच्च शिक्षा तथा खोज के क्षेत्र में अपनी तरह की पहली संस्था होगी। इस यूनीवर्सिटी में विज्ञान, तकनीक, कला, भाषा व सभ्याचार की पढ़ाई के साथ-साथ दुनिया भर के धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन तथा खोज के लिए विशेष प्रबंध होगा।

उन्होंने बताया कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब विश्व यूनीवर्सिटी में आठ विभागों के अधीन ग्यारह पोस्ट-ग्रेजुएट डिग्री कोर्सों की व्यवस्था होगी जिनमें विश्व धर्म, सभ्याचार, सिक्ख मत सम्बंधी उच्च स्तरीय खोज की व्यवस्था की गई है। इसके अलावा सिक्ख इतिहास का एक विभाग भी होगा। नैनो तकनीक, बायो तकनीक, कंप्यूटर साइंस, इंजीनियरिंग, फिजिक्स, इंस्ट्रूमेंटेंशन इंजीनियरिंग तथा बिजनेस मैनेजमेंट के अति आधुनिक पहलुओं सम्बंधी अध्यापन, अध्ययन तथा अविष्कार होगा। विशेषज्ञों के सहयोग से उद्योग तथा बिजनेस की आवश्यकताओं को मुख्य रख कर आधुनिकतम सिलेबस तैयार किया गया है। प्रत्येक कोर्स में दस प्रतिशत सीटें ग्रामीण होनहार मगर आर्थिक साधनों से रहित विद्यार्थियों के लिए रखी गई हैं, जिनसे बिना फीस लिए ऊंची से ऊंची डिग्री तक निःशुल्क विद्या प्रदान की जाएगी। विदेशी यूनीवर्सिटियों के केंद्र स्थापित किए जाएंगे तथा आनलाईन डिसटेंस एजूकेशन प्रोग्राम भी चालू किया जाएगा।

समूचे कैंपस की नेटवर्किंग मुकम्मल हो गई है तथा विशेषज्ञों की मदद से आधुनिकतम प्रयोगशालाएं स्थापित की जा रही हैं। ऐसे यत्नों का सदका यह यूनीवर्सिटी भारत तथा विदेशों की उच्च-स्तरीय शैक्षणिक संस्थाओं में अपना स्थान व पहचान बना सकेगी।

यूनीवर्सिटी के छः-मंजिला कैंपस के पहले अकादमिक सेशन के अलग-अलग कोर्सों में अब तक ७०० विद्यार्थी दाखिला ले चुके हैं।

धार्मिक परीक्षा-नवंबर २०११

दाखिला सूचना

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की धर्म प्रचार कमेटी द्वारा प्रत्येक वर्ष ली जाने वाली धार्मिक परीक्षा इस वर्ष भी नवंबर माह में पूरे भारत में हो रही है। धार्मिक परीक्षा के दर्जा पहला, दूसरा, तीसरा तथा चौथा का फार्म व सिलेबस धार्मिक परीक्षा विभाग, धर्म प्रचार कमेटी (शिरोमणि गु: प्र: कमेटी), श्री अमृतसर से निःशुल्क प्राप्त किए जा सकता है। इस परीक्षा में कक्षा ६ से लेकर पोस्ट ग्रेजुएट तक के विद्यार्थी हिस्सा ले सकते हैं। दाखिला फार्म जमा करवाने की अंतिम तारीख ३० सितंबर, २०११ है तथा फीस दर्जा पहला, दूसरा, तीसरा एवं चौथा के लिए क्रमशः ५, १०, १५, व २० रुपए है। मैरिट में आने वाले विद्यार्थियों को पहले, दूसरे, तीसरे तथा चौथे दर्जे में क्रमशः ११००, २१००, ३१०० तथा ४१०० रुपए वजीफा दिया जाता है। उपरोक्त दर्जों में प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय स्थान पर आने वाले विद्यार्थियों को वजीफे के अलावा क्रमशः २१००, १५०० तथा ११०० रुपए विशेष सम्मान के रूप में दिया जाता है। धार्मिक परीक्षा सम्बंधी अधिक जानाकरी के लिए ९९१४१०२०५६ तथा ९९१४९००५१६ पर संपर्क करें।

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०९-२०११